इकाई – 1
मृच्छकटिक (1 – 5 अंक)

इकाई की रूपरेखा

1.1 परिचय

डॉ० परमानन्द गुप्त ने ''संस्कृत साहित्य का परिचय'' नामक पुस्तक में शूद्रक के विषय में लिखा है कि शूद्रक का परिचय उनके द्वारा रचित प्रकरण 'मृच्छकटिक' की प्रस्तावना में मिलता है। इसके अनुसार वे एक द्विजश्रेष्ठ नृपति थे। उनकी चाल हाथी के समान, नेत्र चकोर के समान तथा मुख चन्द्रमा के समान सुन्दर था। वे ऋग्वेद, गणित, हस्त–शिक्षा, व्यापार एवं नृत्य–संगीत आदि 64 कलाओं में दक्ष थे। उन्होंने सौ वर्ष तथा दस दिन राज्य करके, बाद में अपने पुत्र को राज्य देकर अग्नि–प्रवेश कर लिया था। अपनी ही मृत्यु के विषय में कोई कवि कैसे लिख सकता है अतः कतिपय विद्वानों ने इस लेख की यथार्थता पर सन्देह किया है तथा मृच्छकटिक का रचयिता अन्य किसी कवि को ही माना है।

स्कन्दपुराण, वेतालपंचविंशति, कथासरित्सागर, कादम्बरी, हर्षचरित तथा दशकुमारचरित आदि ग्रन्थों में विभिन्न शूद्रकों के उल्लेख मिलते हैं। इन उल्लेखों में कौन –सा उल्लेख ऐतिहासिक है और किसका सम्बन्ध मृच्छकटिक के साथ जोड़ा जा सकता है – ये दोनों विवादास्पद विषय हैं। अभिलेखों तथा साहित्य के आधार पर शूद्रक का ऐकात्म्य सम्बन्ध डॉ० स्मिथ 240 ई० पू० के आन्ध्रवंशीय सिमुक के साथ, पं० चन्द्रबली पाण्डेय ईसा की दूसरी शताब्दी के आन्ध्रवंशीय वासिष्ठी पुत्र पुलुमावि के साथ, प्रो० स्टेनकोनो आभीरवंशीय राजकुमार शिवदत्त के साथ तथा डॉ० फ्लीट 248–49 ई० में चेदिवंश के संस्थापक ईश्वरसेन के पिता के साथ स्थापित करते हैं।

वस्तुतः शूद्रक ने भास के नाटक 'चारुदत्त' को परिवर्द्धित कर, उसमें आर्यक के विद्रोह की राजनैतिक कथा का समावेश कर उसे मृच्छकटिक का स्वरूप प्रदान किया। अतः इस प्रकरण का रचनाकाल भास के पश्चात् दूसरी/तीसरी शताब्दी ईस्वी में या इसके बाद माना जा सकता है।

मृच्छकटिक – यह दस अंकों का नाटक है। इसमें दो मुख्य कथानक गुँथे हुए हैं – एक चारुदत्त और वसन्तसेना के प्रेम का और दूसरा पालक और गोपालदारक आर्यक के राजनैतिक संघर्ष का। **प्रथम अंक** में वसन्तसेना शकार से अपने बचाव के लिए चारुदत्त के घर में शरण लेती है तथा वापिस जाते हुए अपने आभूषणों को चारुदत्त के घर में

रख देती है। **दूसरे अंक** में एक ओर चारुदत्त के प्रेम में अनुरक्त वसन्तसेना का दृश्य है तो दूसरी ओर द्यूतकर तथा माथुर द्वारा पीछा किये जाते हुए चारुदत्त के भृत्य रह चुके संवाहक का दृश्य। वसन्तसेना जुए में हार कर उसके घर में शरण लेने वाले संवाहक के लिए माथुर और द्यूतकर को रुपयों के बदले अपना आभूषण देकर छुड़ाती है। इसी अंक में एक भिक्षु की हाथी से रक्षा करने के निमित्त कर्णपूरक नामक चेट को चारुदत्त द्वारा पुरस्कार स्वरूप दुशाला भेंट किये जाने का समाचार भी वसन्तसेना को प्राप्त होता है। **तीसरे अंक** में मदनिका का प्रेमी शर्विलक चारुदत्त के घर में सेंध लगाकर वसन्तसेना के आभूषण चुरा लेता है। आभूषणों के बदले में चारुदत्त की पत्नी धूता अपनी रत्नमाला वसन्तसेना के घर में भिजवा देती है। **चौथे अंक** में शर्विलक मदनिका के कहने पर चारुदत्त का दूत बनकर चुराये हुए गहनों को वसन्तसेना को लौटा देता है। वसन्तसेना सब वृत्तान्त जानकर मदनिका को उसकी वधू बनाकर उसके साथ भेज देती है। घर जाते समय रास्ते में शर्विलक को पालक द्वारा गोपालदारक आर्यक के कैद किये जाने का समाचार मिलता है तो वह मदनिका को सार्थवाह रेभिल के घर भेजकर आर्यक को छुड़ाने के लिए चल देता है। इसी अंक में विदूषक धूता की रत्नमाला वसन्तसेना को दे आता है। **पंचम अंक** में वसन्तसेना चारुदत्त के घर पहुँचती है तथा रात को वहीं रहती है।

नाट्यकला – शूद्रक प्रणीत मृच्छकटिक रूपक–भेद की दृष्टि से दस अंकों का एक प्रकरण है। यह निश्चय ही संस्कृत नाटक साहित्य का एक अति महान् रूपक है। इसमें काव्य के रस तथा भावों का यथार्थ स्वरूप विद्यमान है। यह एक यथार्थोन्मुख रचना है। इस रचना का सम्बन्ध उस जगत् से है जिसमें जोर, जुआरी, भिक्षु, वेश्या, विट तथा चेट आदि सभी तरह के लोग स्वच्छन्द होकर विचरण करते हैं। इस प्रकरण में करुणा और शोक, हास्य और व्यंग्य, कवित्व एवं पाण्डित्य, दया एवं मानवता आदि तत्त्वों का व्यापक समावेश है। नाट्य का कथानक सामाजिक जीवन के अधिक निकट है, वह राजमहल की चारदीवारी में बन्द होकर नहीं रह जाता। मृच्छकटिक (अर्थात् मिट्टी की गाड़ी) के नामकरण में नायक अथवा नायिका को महत्त्व न देकर उस दृश्य को महत्त्व प्रदान किया गया है जिसमें मनोवैज्ञानिक अन्तर्द्वन्द्व का अधिक वास्तविक चित्रण है तथा जो इस रचना में निर्णायक बिन्दु का कार्य करता है। पात्रों की विविधता तथा उनके चरित्र चित्रण में मानवीय भावों का स्पर्श, कथानक के राजनैतिक भाग के साथ अनुस्यूत होकर इस रूपक में विभिन्न द्वन्द्वों तथा अन्तर्द्वन्द्वों के अध्ययन के लिए अधिक विशद एवं पूर्ण क्षेत्र प्रदान करते हैं।

भाषा–शैली

किसी भी कवि या नाटककार का मूल्यांकन करने की महत्त्वपूर्ण कसौटी यदि कोई है तो वह उसके द्वारा प्रयुक्त भाषा व शैली है जिसका कि उसने अपनी कृति में प्रयोग किया है। दृश्य या श्रव्य काव्य की कथावस्तु की सामग्री से हम उसके रचयिता का मूल्यांकन उतना नहीं कर सकते जितना कि भाषा शैली से। भाषा व शैली ही उसकी स्वयं की होती है जिसके माध्यम से वह अपने स्वयं व अन्य स्थानों तथा विभिन्न स्रोतों से ग्रहण किये गये भावों व विचारों को अपनी कृति में प्रकट करता है। कथानक कभी भी पूर्ण रूप से आविष्कृत नहीं हो सकता। एक ही कथानक को कई रूपों में भाषा व शैली के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है। इस प्रकार एक काव्य में भाषा व शैली का महत्त्वपूर्ण स्थान है। काव्यों में भी मूलतः दृश्यकाव्य में भाषा व शैली महत्त्वपूर्ण तत्त्व है, क्योंकि नाटक अथवा एकांकी प्रत्यक्ष दर्शन का साहित्य है, अतः उसकी भाषा व शैली सरल तथा सुबोध होनी चाहिए।

भाषा व शैली की कसौटी पर 'मृच्छकटिक' एक खरा व अनुपम नाटक है। इसकी भाषा अत्यन्त सरल एवं प्रसाद गुण युक्त है। कवि ने समास प्रधान भाषा का अधिक प्रयोग नहीं किया है। तुलनात्मक दृष्टि से मृच्छकटिक की भाषा कालिदास की अपेक्षा अधिक सरल है। यह भास और कालिदास के मध्य की शैली है, संस्कृत साहित्य की अलंकृत शैली नहीं। पारिभाषिक शब्दों में उसने वैदर्भी रीति को अपनाया है। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि उसमें समास बहुल गौडी रीति को अपनाने की शक्ति ही नहीं थी। कहीं–कहीं पर आवश्यकतानुसार उसने गौडी रीति को

भी अपनाया है। वास्तव में उसने भाव व पात्रों के अनुसार अपनी भाषा का परिवर्तन किया है। अपवाद तो प्रायः सभी जगह पर मिल जाते हैं, अतः दो चार अपवादों को छोड़कर साधारणतया उसकी भाषा स्पष्ट है। उसकी अभिव्यक्ति में शक्ति है और थोड़े ही शब्दों में स्पष्ट चित्र खींच देने की कला है। यह सच है कि शूद्रक में भवभूति के समान अभिव्यक्ति का सौन्दर्य नहीं है और भावों के सूक्ष्म चित्रण में भी वह पीछे है किन्तु भवभूति की क्लिष्टता से वह मुक्त है। कालिदास का स्निग्ध पद—लालित्य एवं काव्यात्मक सौष्ठव भी शूद्रक की प्रस्तुत रचना में वर्तमान नहीं है।

इस प्रकार मृच्छकटिक सरल शैली में लिखी गई एक सुन्दर कृति है। यद्यपि अलंकार—शास्त्रियों ने मृच्छकटिक में लम्बे—लम्बे चित्रणों का न होना एक दोष बतलाया है, परन्तु वास्तव में लम्बे वर्णन प्रायः नाटक के प्रवाह में बाधक ही होते हैं साधक नहीं, संवाद जितने संक्षिप्त व सरल होगें उतने ही दर्शकों को प्रभावित कर सकेंगे। इस प्रकार मृच्छकटिक में लम्बे वर्णनों के अभाव से अधिक सजीवता ही आई है जो नाट्य—कला का एक आवश्यक गुण है। फिर भी लम्बे वर्णनों व समास युक्त पदों का पूर्ण अभाव नहीं है। चतुर्थ अंक में वसन्तसेना के प्रासाद का वर्णन और पांचवे अंक में वर्षा और तूफान का वर्णन पर्याप्त लम्बा है। वसन्तसेना के घर का वर्णन लम्बा होने के साथ—साथ उबा देने वाला भी है किन्तु वर्षा और तूफान का वर्णन कवित्व की दृष्टि से अत्युत्तम है। वास्तविक स्थिति इस विषय में यह है कि नाटक में नाटककर्त्ता को प्रकृति चित्रण के लिये उतना समय व स्थान नहीं मिल पाता जितना कि एक महाकाव्य के रचयिता को, अतः जो कुछेक स्थान मिल पाते हैं वहां वे अपनी प्रतिभा प्रकृति वर्णन के माध्यम से प्रदर्शित करना चाहते हैं। यही स्थिति 'मृच्छकटिक' के रचयिता शूद्रक की है। उसके द्वारा किया वह वर्णन उसे ललित भाषा में सूक्ष्म भावों के चित्रण में सिद्धहस्त करने के लिए पर्याप्त है। यद्यपि कवित्व की दृष्टि से इसका महत्त्व अधिक है परन्तु नाट्य—कला की दृष्टि से यह नाटक के प्रवाह का बाधक ही माना जायेगा। इस प्रकार कहा जा सकता है कि नाटकीय दृष्टि से मृच्छकटिक संस्कृत साहित्य में अनुपम है।

मृच्छकटिक में प्रतिबिम्बित समाज तथा संस्कृति

डॉ० उमाशंकर शर्मा 'ऋषि' ने "संस्कृत साहित्य का इतिहास" नामक पुस्तक में मृच्छकटिक में प्रतिबिम्बित समाज तथा संस्कृति का विस्तार से विवरण प्रस्तुत किया है जो इस प्रकार है —

मृच्छकटिक का कथानक राजभवन के संकुचित वृत्त के बाहर सामान्यजनों से संकुल राजमार्ग से सम्बद्ध है; इसलिए समाज के कई स्तरों का चित्रण इसमें प्राप्त होता है। शूद्रक ने विविध वर्गों के पात्रों को इस रूपक में स्थान देकर सर्वांगपूर्ण सामाजिक स्थिति का निरूपण किया है।

- **वर्ण तथा जाति :** इस रूपक के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि उस समय वर्ण —व्यवस्था वर्तमान थी, व्यवसायों के आधार पर कुछ जातियाँ भी थी। ब्राह्मणों का काम पठन—पाठन, यजन—याजन और दान—प्रतिग्रह (देना—लेना) था। उपर्युक्त कर्म अनिवार्य नहीं थे; अन्य व्यवसायों में भी ब्राह्मण स्वतन्त्र थे। चारुदत्त स्वयं ब्राह्मण होकर भी वाणिज्यजीवी था। शर्विलक भी ब्राह्मण था किन्तु चोरी जैसे तुच्छ कर्म करता था। विदूषक का पद तो मूर्ख ब्राह्मणों के लिए सुरक्षित था।

  न्यायालयों में कायस्थ लोग लेखन—कार्य करते थे। नवम अंक में न्यायालय को कायस्थरूपी सर्पों से भरा हुआ स्थान कहा गया है (कायस्थ—सर्पास्पदम्)। शूली पर चढ़ाने (मृत्युदण्ड देने) का काम चाण्डाल लोग करते थे।

- **विवाह :** उस काल में बहुपत्नी—प्रथा प्रचलित थी। ब्राह्मण के लिए असवर्ण स्त्री से विवाह करना निषिद्ध नहीं था। चारुदत्त ने गणिका वसन्तसेना से और शर्विलक ने गणिका की दासी मदनिका से विवाह किया। पति के मर जाने पर सती—प्रथा (सहमरण) प्रचलित थी। चारुदत्त को शूली पर चढ़ाने का उपक्रम होने पर उसकी पत्नी धूता सती होने का प्रयास करती है। परदा—प्रथा का प्रचार नहीं था क्योंकि धूता सबके समक्ष

बिना परदे के ही आती है। कुछ सम्पन्न लोग रखैल स्त्री भी रखते थे, शकार की बहन राजा पालक की रखैल थी। शकार को ही 'काणेलीमातः' सम्बोधित किया गया है जिसका अर्थ है – अविवाहित स्त्री या रखैल का पुत्र।

- **स्त्रियों का स्थान :** समाज में स्त्रियों का बहुत सम्मान था। उनके दो वर्ग थे – कुलवधू और गणिका। कुलवधू का पद बड़ा आदरणीय था। राजा को अधिकार था कि किसी सामान्य स्त्री या गणिका को 'कुलवधू' का पद प्रदान करे। गणिकाएँ सम्पन्न होती थीं; नृत्य, संगीत, अभिनय, चित्रकला आदि में वे निपुण थीं। सार्वजनिक जीवन में कलाओं का आदर होने से गणिकाओं को प्रतिष्ठा मिली हुई थी। उनके वाहनों की तलाशी नहीं ली जाती थी। वे गृहस्थों के घरों में निस्संकोच आती–जाती थीं। फिर भी गणिकाओं को मित्र बनाना सामाजिक प्रतिष्ठा के प्रतिकूल था। इसीलिए कुछ गणिकाएँ अपनी स्थिति से असन्तुष्ट होकर सम्माननीय वधू–पद पाने का प्रयत्न करती थीं।

  दासी और दास रखने की प्रथा थी, सम्भवतः इनका क्रय–विक्रय होता था किन्तु धन चुका देने पर ये मुक्त हो जाते थे। कभी–कभी राजा के आदेश से भी दासता से मुक्ति मिलती थी जैसे आर्यक के आदेश से स्थावरक–नामक चेट को मुक्त किया गया।

- **नगर–व्यवस्था :** मृच्छकटिक के युग में नगरों में जातियों के आधार पर मुहल्ले बसे हुए थे। चारुदत्त सेठों के मुहल्ले में रहता था (स खलु श्रेष्ठिचत्वरे निवसति) नगरों के मुख्य द्वार रात में बन्द हो जाते थे। बहुत रात में पहरेदार नगर में घूम–घूमकर पहरा देते थे। नगरों में आवागमन के लिए बैलगाड़ियों का प्रयोग होता था, पुरुष हाथी–घोड़ों पर भी चलते थे।

- **कला–कौशल :** उस युग में कलाएँ उन्नत अवस्था में थी। संगीत, चित्रकला, मूर्तिकला, संवाहन (शरीर दबाना) और चौर्यकला तक का वर्णन मृच्छकटिक में है। बाँसुरी, दर्दुरक, मृदंग और प्रणव अन्य वाद्य थे जिनकी चर्चा इस रूपक में है।

  तृतीय अंक में शर्विलक की चौर्यकला का चित्रण मिलता है। चोरों के भी कुछ नैतिक नियम थे जैसे– स्त्री को न मारना, सोये हुए या डरे हुए व्यक्ति पर प्रहार न करना, ब्राह्मण का या पूजा का धन न चुराना, बच्चों का अपहरण न करना इत्यादि।

- **अर्थ–व्यवस्था :** उज्जयिनी नगरी तथा गणिका के प्रासाद के यथार्थ वर्णन से उस युग की आर्थिक समृद्धि का परिचय मिलता है। गणिका की समृद्धि देश की समृद्धि का लक्षण है। कुछ लोग इतने धनी थे कि बच्चों को सोने के खिलौने खेलने के लिए दिया करते थे। चारुदत्त के पड़ोसी का बालक स्वर्णशकटिका से खेलता है। चारुदत्त की पत्नी धूता यद्यपि निर्धन हो गयी थी तथापि वसन्तसेना के चुराये गये आभूषणों के बदले में अपनी बहुमूल्य रत्नमाला देती है। द्यूतक्रीडा में धन का प्रचुर आदान–प्रदान होता था। द्यूत में हार जाने पर ऋण (हारा हुआ धन) चुकाना आवश्यक था। इसमें राजपुरुषों की भी सहायता ली जाती थी। वसन्तसेना ने ऐसे ही पराजित जुआरी (संवाहक) का ऋण चुकाया था। द्यूतक्रीडा को संवाहक ने कला के रूप में सीखा था, अब वही उसकी आजीविका बन गयी थी।

- **धार्मिक स्थिति :** वैदिक धर्म का सामान्य प्रसार था। अनेक प्रकार के यज्ञ, पूजन, बलि, तर्पण आदि कर्म किये जाते थे। लोग व्रत–उपवास करते थे एवं ब्राह्मणों को दान देते थे। निम्नवर्ग के लोग भी धार्मिक कार्य करते थे। बौद्ध धर्म का भी प्रचार था। उस समय अनेक बौद्ध विहार थे। उनके कुलपति होते थे। आर्यक ने संवाहक (भिक्षु) को सभी विहारों का कुलपति बना दिया था। अतः 'कुलपति' राजादेश से प्राप्य पद था।

- **राजनीति–व्यवस्था :** मृच्छकटिक के समय की राजनीतिक दशा अच्छी नहीं थी। देश छोटे–छोटे राज्यों में विभक्त था। राजा स्वेच्छाचारी होता था। न्यायाधीश उसका नौकर था, जब चाहे निकाला जा सकता था। नवम अंक में शकार न्यायाधीश को धमकी देता है कि यदि मेरा अभियोग नहीं सुना गया तो राजा से कहकर तुम्हें हटवा दूँगा। राजा न्यायालय के निर्णय को निरस्त कर सकता था। इसीलिए नवम अंक में न्यायाधीश चारुदत्त को स्वयं दण्ड न देकर राजा पालक के पास निर्णय के लिए भेज देता है जो उसे प्राणदण्ड देता है।

  राजा के सम्बन्धी लोग प्रशासन में हस्तक्षेप करते थे। किसी उत्सव के समय अपराधियों को दण्डमुक्त किया जाता था। ऐसी ही कुव्यवस्था से सिंहासन का अधिकारी क्षण में ही बदल जाता था। मृच्छकटिक में राज–परिवर्तन का रहस्य इसी दुर्बल राजशक्ति में निहित है।

  इस प्रकार मृच्छकटिक के आधार पर तात्कालिक समाज का चित्रण किया जा सकता है।

चरित्र–चित्रण

(1) चारुदत्त

चारुदत्त प्रस्तुत प्रकरण का नायक है। भारतीय काव्यशास्त्रियों के अनुसार नायक के चार प्रकार माने गये है – वे क्रमशः धीरललित, शान्त, उदात्त तथा उद्धत हैं। ये चारों प्रकार के नायक 'धीर' तो होते ही हैं धीरत्व के अतिरिक्त इनमें अपनी प्रकृतिगत विशेषता भी अलग से पाई जाती है। उक्त चार प्रकार के नायकों में से प्रस्तुत प्रकरण के नायक को 'धीर प्रशान्त' कोटि का नायक माना गया है। धीरप्रशान्त नायक प्रकृति से शान्त होता है। शान्त प्रकृति प्रायः ब्राह्मण या वैश्य में ही होती है, अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि धीर प्रशान्त कोटि का नायक या तो ब्राह्मण होता है या वैश्य। परन्तु प्रस्तुत प्रकरण का नायक चारुदत्त धीर होने के साथ–साथे कलाप्रेमी व क्षमावान् भी है जो कि क्रमशः धीर ललित तथा धीरोदात्त नायक के प्रमुख गुण माने गये हैं। इस प्रकार ललित, उदात्त तथा शान्त तीनों प्रकार के नायकों के गुणों से वह युक्त है।

चारुदत्त जन्मना ब्राह्मण होते हुये भी कर्मणा श्रेष्ठी है। वह अपनी हृदय की उदारता तथा व्यवहार के कारण दुर्दिनों में पड़ा हुआ है। वह अपने जीवन के प्रारंभिक वर्षों में अत्यन्त धनाढ्य रह चुका है। परन्तु दुर्भाग्य से वह निर्धन हो गया है।

दरिद्र होने पर भी चारुदत्त यश एवं प्रतिष्ठा का सर्वदा ध्यान रखता है। वह अपने वंश की कीर्ति की रक्षा के लिए सतत प्रयत्नशील रहता है। जब चोर घर में सेंध लगाकर घुसता है तथा चारुदत्त को इसका पता चलता है, तब उसे इस बात की चिन्ता नहीं होती कि क्या वस्तु चुराई गई परन्तु वह इस बात से दुःखी होता है कि चोर को उसकी मेहनत का फल नहीं मिला, उसे मेरे घर से कोई धन प्राप्त नहीं हुआ, उसे कितनी निराशा हुई होगी। यह सब वह इसलिए सोचता है कि समाज में लोगों को उसकी घर की स्थिति का पता चल जायेगा। वह यह सुनकर प्रसन्न होता है कि चोर स्वर्णालंकार चुरा ले गये हैं।

परन्तु जब उसे यह पता चलता है कि वह धरोहर थी, तब वह अत्यन्त दुःख अनुभव करता है। वह अपनी निर्धनता को भी कोसता है तथा कहने लगता है ''वास्तविक तथ्य पर कौन विश्वास करेगा (कि चोर ने धरोहर चुराई) सभी मुझे ही दोषी ठहरायेंगे। इस संसार में निर्धनता समस्त शंकाओं की जननी है।'' विदूषक द्वारा यह प्रस्ताव रखने पर कि वह धरोहर के विषय में ऐसा प्रचार करेगा कि जिससे आप न्याय से मुक्त हो जाओगे, तब चारुदत्त कहता है – ''क्या मैं इस समय असत्य बोलूँगा ? भिक्षा के द्वारा यथेष्ठ धन एकत्र कर धरोहर लौटा दूँगा, परन्तु चरित्र को कलंकित करने वाला असत्य भाषण नहीं करूंगा।'' विदूषक के रत्नावली भेजने के प्रस्ताव का विरोध करने पर वह उत्तर देता है – जिस विश्वास के सहारे वसन्तसेना ने वह धरोहर मेरे पास रखी, उसी विश्वास

के कारण यह मूल्यवान् रत्नावली उसे दी जा रही है न कि उस स्वर्णाभूषण के बदले में। उक्त दो उदाहरणों से स्पष्ट विदित होता है कि चारुदत्त चरित्र से कितना नेक, सत्य प्रिय एवं विश्वासपात्र था। विश्वास भंग न होने की उक्त चिन्ता चारुदत्त के चरित्र को चमत्कारिता के आलोक से प्रकाशित कर देती है।

उक्त सभी कार्यों के मूल में प्रमुख जो बात है वह है 'कुल की प्रतिष्ठा'। चारुदत्त सर्वदा इस बात का पूर्ण ध्यान रखता है कि उसका आचरण कुल की मर्यादा के अनुकूल हो। नाटक के दशम अंक में चाण्डालों द्वारा पिता तथा पितामह का नाम लेकर उसके ऊपर मढे गये आरोपों की घोषणा करने पर वह अपने गौरवान्वित कुल का स्मरण कर अत्यन्तः दुःखी होता है। चारुदत्त को मृत्यु का कोई भय नहीं हैं, उसे यदि किसी बात का भय है, तो वह है अपने कुल की प्रतिष्ठा व यश का। वह स्पष्ट कहता है –

न भीतो मरणादस्मि केवलं दूषितं यशः।

विशुद्धस्य हि मे मृत्युः पुत्रजन्म समो भवेत्।।

चारुदत्त का हृदय अत्यन्त उदार, गंभीर और करुणा युक्त है। सम्पत्ति सलिल के समाप्त हो जाने पर भी उसका मनसरोज उसी भांति विकसित है। वह जब भी समय पाता है गुणी और उपकारी सज्जन का सम्मान अति उदारता से करता है, मदोन्मत गज से भिक्षु की रक्षा करने के लिए प्रसन्न होकर वह कर्णपूरक को अपना प्रावारक दे डालता है। उदारता के साथ–साथ करुणा भी उसके हृदय में विद्यमान है। वह न केवल अपने सेवकों के प्रति दयालु है, अपितु पशु–पक्षियों के प्रति भी उसकी करुणा द्रवित होती रहती है। चेट द्वारा फेंकी हुई कंकड़ी को कबूतर द्वारा गिराई हुई जानकर जब विदूषक कबूतर को मारना चाहता है, तो चारुदत्त उसे मना करता हुआ कहता है – **'तिष्ठतु दयितासहितस्य .... पारावतः।'** वह इतना कोमल हृदय है कि पुष्प के लिए कोमल लता को नीचे झुकाकर पुष्प चयन तक करना पसंद नहीं करता।

वह एक सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत नागरिक है। उसमें कवि हृदय विद्यमान है। वर्षा–वर्णन जिन शब्दों में उसके द्वारा किया गया वह द्रष्टव्य है। कवि होने के साथ– साथ वह संगीत का पारखी एवं कलाप्रिय व्यक्ति है। तृतीय अंक में जब वह रेभिल का संगीत सुनकर वापस घर से लौटता है तब मुक्त–कण्ठ से उसकी प्रशंसा करता है। मकान में जब सेंध लगाई जाती है तथा वह उसे देखता है, तब चोरी की अधिक चिन्ता न करके सर्व प्रथम सेंध लगाने की कला की प्रशंसा करता है।

एक प्रेमी के रूप में भी उसका चारित्रिक दृढ़ता से युक्त है। वसन्तसेना के प्रति उसका प्यार अत्यन्त गहरा एवं सुकुमार है। जब तक वसन्तसेना उससे आकर नहीं मिलती है, तब तक वह उसके वियोग में तड़पता रहता है। उसके आ जाने पर वह प्रसन्न होता है तथा सहर्ष कह उठता है – ''अरे ! वसन्तसेना आ गई ! हे प्रिये ! मेरा सांयकाल प्रतिदिन जागते व्यतीत होता है और सारी रातें निरन्तर निःश्वास छोड़ते व्यतीत हो जाती हैं। लेकिन हे विस्तृत लोचने ! तुम्हारे समागम से आज की संध्या हमारे शोक का अन्त कर देने वाली होगी।'' अभियोग प्रकरण में भी वह इन शब्दों में वसन्तसेना का स्मरण करता है – ''वसन्तसेना के जीवन के बिना मेरा जीवित रहना व्यर्थ है।'' चाण्डाल जब उसे वसन्तसेना का हत्यारा कह कर बार–बार घोषणा करते हैं तब वह अत्यन्त दुःख अनुभव करते हुए कह उठता है – ''चन्द्रमा की विमल किरणों के समान उज्जवल दांतों वाली ! मनोरम प्रवाल के तुल्य रक्ताभा अधरोष्ठ वाली ! प्रियतमें ! तुम्हारे मुखामृत का पान कर मैं इस समय कितनी निस्सहाय, अवस्था में अपयश रूपी विष का पान कर रहा हूँ।'' और अन्त में जब वध–स्थान पर अचानक वसन्तसेना को देखता है तब वह हृदय से गद्गद हो उठता है तथा उसे संजीवनी बूंटी के तुल्य बतलाता है। इस प्रकार एक शान्त, निष्ठावान्, गंभीर तथा सुकुमार प्रेमी है।

इतने सद्गुणों से युक्त एवं प्रशंसा का पात्र होते हुये भी वह मानव है तथा चन्द्रमा में जिस प्रकार कालिमा विद्यमान हैं उसी प्रकार उसमें भी एक दो चारित्रिक कमजोरियाँ हैं। वह निर्धन है, परन्तु निर्धनता को प्रकट नहीं करता है। उसने गणिका से प्रेम किया है परन्तु वह अन्त समय तक उसे प्रकट नहीं करता, उसे प्रकट करने में वह संकोच करता है। यह संकोच उसके चरित्र का दोष ही कहा जायेग, उसे ऐसी स्थिति में जब कि उसे मृत्युदण्ड ही मिल रहा था, प्रणय की स्वीकृति दे देनी चाहिए थी।

अन्य जो दोष उसके चरित्र में देखने को मिलता है वह धूता के प्रति उसकी आश्चर्यजनक उपेक्षा है। वह जब वध के लिए चाण्डालों द्वारा ले जाया जाता है तब सभी का स्मरण करता है परन्तु अपनी पतिव्रता पत्नी धूता की उस समय भी उपेक्षा ही करता है, जो उस जैसे करुण हृदय के लिए उचित प्रतीत नहीं होता।

परन्तु उक्त एक दो अवगुण उसके गुणों के समाने नगण्य दिखाई देते हैं। उसके समस्त गुणों पर विचार करने के उपरान्त ही डॉ० राइडर ने उसकी तुलना ''मरचेण्ट आफ वेनिस'' के नायक एण्टोनियो से की है, जो सर्वथा उचित एवं न्याय संगत प्रतीत होती है।

(2) वसन्तसेना

मृच्छकटिक के नायक चारुदत्त के चरित्र का वर्णन करने के उपरान्त द्वितीय महत्वपूर्ण चरित्र नायिका वसन्तसेना के विषय में भी कुछ उल्लेख कर देना अनुपयुक्त न होगा। संस्कृत के आचार्यों ने प्रकरण सम्बन्धित लक्षणों के अन्तर्गत नायिका के विधान की रूपरेखा भी रखी है। साहित्यदर्पणकार के अनुसार 'प्रकरण में नायिका कहीं कुल–कन्या होती है, कहीं वेश्या होती है और कहीं दोनों होती हैं 'मृच्छकटिक' एक ऐसा प्रकरण है जिसमें कुल स्त्री तथा गणिका दो नायिकाएं हैं। इसमें कुल स्त्री धूता तथा गणिका के रूप में वसन्तसेना है। परन्तु धूता प्रस्तुत प्रकरण में नाम मात्र के लिये हैं, वास्तविक नायिका तो वसन्तसेना ही है।

वसन्तसेना एक असाधारण रूपवती, नवयौवना वेश्यापुत्री है। यह उसका दुर्भाग्य है कि वह गणिका कुल से उत्पन्न है। परन्तु फिर भी उसके अपने दृढ़ संकल्प तथा प्रयत्नों के फलस्वरूप अपने आपको कुलवधू के योग्य प्रमाणित किया है। नाटक में उसका परिचय हमें सर्वप्रथम उज्जयिनी के राजमार्ग में होता है जब कि वह रात्रि के अन्धकार में शकार व उसके साथियों द्वारा पीछा की जाती हुई तथा उनसे अपने आपको बचाने हेतु भागती हुई दिखाई पड़ती है। शकार उसके प्रति कामासक्त है तथा उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील है, उसने इस घटना के पूर्व भी कामदेवायतन उद्यान में कन्दर्पपूजा महोत्सव के अवसर पर उसके चरित्र को दूषित करने का प्रयास किया था। उस समय चारुदत्त द्वारा उसकी रक्षा की गई थी तथा उसी समय से वह चारुदत्त से प्रभावित होकर उसके प्रति अनुरक्त हो गई थी। शकार को पुनः अवसर प्राप्त होता है तथा वह उसका पीछा करता है, परन्तु वसन्तसेना के विषय में शकार व उसके साथियों की गलत धारणा है। वे उसे सामान्य गणिका समझते हैं जो कि सर्वभोग्या होती है। शकार उसे क्रय वस्तु समझ कर उसके साथ रमण करना चाहता है।

वसन्तसेना हृदय से पवित्र एवं सच्चरित्रा है। वह सामान्य गणिका के समान जीवन यापन करना नही चाहती अपितु समाज में अपना प्रतिष्ठित स्थान बनाना चाहती है। यही कारण है कि वह संस्थानक जैसे राजवल्लभ को ठुकरा कर अपने शुद्ध एवं गंभीर प्रेम का परिचय देती है। माता की गणिका वृत्ति के कारण उसे विपुल सम्पत्ति प्राप्त है, परन्तु उसका हृदय इस गर्हित जीविका के प्रति विद्रोह कर उठता है। राजश्याल संस्थानक के द्वारा भेजी गई स्वर्णराशि तथा बुलाने के लिए गाड़ी भेजने पर वह क्रुद्ध हो जाती है तथा चेटी से तुरन्त कहती है – ''जाकर माताजी से कह दो कि यदि वे मुझे जीवित देखना चाहती हैं, तो पुनः ऐसी आज्ञ न दें।'' शकार द्वारा अपना मनोरथ व्यक्त करने पर वह क्रोध से तिलमिला जाती है और कहती है – **'शांतं ! शांतं ! अपेहि, अनार्य्यं मंत्रयसि।'** इस प्रकार शकार, उसके धन तथा स्वर्ण का उसके लिए कोई महत्त्व नहीं हैं।

वह धन के स्थान पर गुणों की उपासिका है। विट के द्वारा वेश्याओं की समदृष्टि का कथन किये जाने पर वह उसे शान्त भाव से एक ही वाक्य में प्रेम के प्रादुर्भाव का कारण बतलाती है, उसके अनुसार ''गुण ही अनुराग का कारण है बलात्कार नहीं।'' अपने प्रेम का दान वह गुणवान् व्यक्ति को ही देना चाहती है। उसकी इस भावना का स्पष्टीकरण हमें प्रकरण के द्वितीय अंक में मदनिका के साथ हुई उसकी वार्ता के अन्तर्गत हो जाता है। वार्ता के अन्तर्गत मदनिका उसके हृदय की बात को जानने के प्रयत्न स्वरूप उससे प्रारंभ में प्रणय को लेकर राजवल्लभ, ब्राह्मण, व्यापारी इत्यादि के विषय में प्रश्न करती है। मदनिका के यह पूछने पर कि क्या वह कोई राजा अथवा राजवल्लभ है, जो तुम्हारे द्वारा कामदेव महोत्सव में अनुगृहीत हुआ है, वह इस प्रकार उत्तर देती है – ''सखी रमण करना चाहती हूं, सेवा करना नहीं।'' इस प्रकार यद्यपि उसका मुख्य ध्येय रमण करना है, परन्तु यह रमण विवेकाश्रित है, उस रमणेच्छा में धन प्रधान न होकर गुण प्रधान है। वार्तालाप के अन्तर्गत चारुदत्त विषयक अनुरक्ति को स्वीकर कर लेने पर, मदनिका द्वारा चारुदत्त को जब निर्धन बताया जाता है, तब वह तत्काल उत्तर देती है – ''इसीलिये तो मैं उन्हें चाहती हूं। निर्धन पुरुष में आसक्त होने वाली वेश्या संसार में निन्दनीय नहीं समझी जाती।'' मूलतः उसके प्रणय जीवन का यही मूलाधार है। उसे यह पता है कि वह वेश्या है तथा यदि वह धन के लोभ से किसी के साथ रमण करती है तो समाज में वह निन्दनीय समझी जायेगी और अपने लक्ष्य 'कुल–वधू' पद को नहीं प्राप्त कर सकेगी। उसके हृदय में प्रणय के सम्बन्ध में वही सिद्धान्त जमा हुआ है जो बहुत बाद में हमें भवभूति के नाटक उत्तररामचरित में देखने को मिलता है – **''गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिंग न च वयः।''** यही कारण है कि प्रस्तावना में भी उसे गुणानुरक्ता गणिका कहा गया है।

इस प्रकार वसन्तसेना गुणानुरोधिनी है, परन्तु वेश्या होने के कारण चारुदत्त तथा शकार दोनों में उसके प्रणय को लेकर गलत धारणा बनी हुई है, एक ओर चारुदत्त को यह मानसिक संकोच है कि वह निर्धन है। अतः वसन्तसेना उसे प्राप्य नहीं है, दूसरी ओर शकार को यह गलत धारण बनी हुई है कि वह धन–धान्य से सम्पन्न है तथा राजा का साला है, अतः वसन्तसेना उसी के उपभोग के योग्य है। उसे क्या मालूम है कि उसके लिए वसन्तसेना के हृदय में किंचित् मात्र भी स्थान नहीं है तथा उसके प्रणय का देवता तो गुण सम्पन्न चारुदत्त ही है।

परन्तु इस प्रणय के देवता को प्राप्त करने में उसे कितना त्याग करना पड़ा है वह उल्लेखनीय है। दूसरे शब्दों में उसका यह प्रणय–जीवन विरोधों से भरा है जिसमें कि शकार सब से बड़े कांटे के रूप में उसके सामने आता है, परन्तु वसन्तसेना ने इन विरोधों का डट कर मुकाबला किया है। उसने शुरू से ही लम्पट शकार का सामना किया है। उसने उसे कभी कोई ऐसा अवसर नहीं दिया कि वह अपनी चाल में उसे फंसा कसे। प्रथम अंक में तो वह अपनी चतुराई एवं शकार की गलती से बच निकलती है, परन्तु अष्टम अंक में दुर्भाग्य के कारण जब वह उसके चंगुल में पुनः फंस जाती है, तब वह निर्भीकता से उसका मुकाबला करती है। शकार जब उससे बलात् प्रणय हेतु स्वीकृति चाहता है तब वह अत्यन्त तीव्र एवं भर्त्सना के शब्दों में उसे यह कह कर डाँटती है– ''हे खल ! तुम चरित्र में अधम हो। दोषों के आकर हो। मुझे धन का लोभ क्यों दे रहे हो ? सुन्दर चरित्र तथा पवित्र शरीर वाले कमल को छोड़कर क्या भ्रमर और कहीं जा सकता है ? .... आम्रपादप की सेवा के पश्चात् मैं पलाश को स्वीकार नहीं करूँगी।'' शकार को कहे गए उक्त वाक्यों में उसकी चारित्रिक दृढ़ता स्पष्टरूपेण झलकती है। शकार द्वारा उसके वश में किए जाने के अन्य भी कई उपाय किये जाते हैं, परन्तु सभी उपायों को वह विफल बना देती है। अन्त में वह उसे प्राणाघात की कसौटी पर परखना चाहता है, परन्तु वसन्तसेना वहां भी विचलित नहीं होती और अपने प्राणों को न्यौछावर करने हेतु तत्पर हो जाती है।

वह प्रतिष्ठा को जीवन का प्रमुख लक्ष्य समझती है तथा 'कुलवधू' बनने के अपने संकल्प को किसी भी स्थिति में पूर्ण करना चाहती है। उस समय उसकी स्थिति वैसी ही होती है, जैसी कि रामायण में रावण के जाल में फंसी सीता की। अन्तर केवल यही है कि वह जन्म से वेश्या है जो कि समाज की दृष्टि में पतित है, उधर सीता राम की पत्नी होने के नाते पूज्या थी।

वास्तव में यदि देखा जाये तो वसन्तसेना का चरित्र कालिदास की शकुन्तला तथा भवभूति की सीता से भी बढ़ कर प्रतीत होता है। वह 'मालती–माधव' की मालती की तरह परतंत्र बालिका नहीं है और 'अभिज्ञान + शाकुन्तलम्' की शकुन्तला की तरह भोली कुमारी भी नहीं है। उसका साम्य यदि कुछ है तो 'विक्रर्मोर्वशीय' की उर्वशी की। किन्तु यह उर्वशी जितनी विलासिनी प्रतीत नहीं होती। इसका जीवन तो त्याग से पूर्ण है। उर्वशी का प्रेमी एक महान् राजा है जबकि वसन्तसेना के हृदय का स्वामी एक निर्धन ब्राह्मण। वास्तव में बुद्धिमत्ता, प्रत्युत्पन्नमतित्व और शालीनता में वह उर्वशी से बढ़कर है। संपूर्ण रूप से देखने पर यह सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में एक अद्वितीय चरित्र है।

(3) मैत्रेय–विदूषक

शृंगार रस वाले नायक के सहायकों में 'विदूषक' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। संस्कृत लक्षण ग्रन्थों में विदूषक के विषय में जो लिखा गया है उनमें प्रायः समानता है तथा सभी ग्रन्थकारों ने विदूषक को हास्य रस के उत्पादक के रूप में माना है। विश्वनाथ के अनुसार 'किसी फूल अथवा वसंतादिक पर जिसका नाम हो, जो अपने कार्य, देह, वेष, भाषा इत्यादि से हंसाने वाले हो, दूसरों के लड़ाने में आनन्द लेता हो और अपने मतलब के कार्यों में निपुण तथा चतुर हो, वह विदूषक कहलाता है। धनंजय ने अन्य विशेषताओं का उल्लेख न करके स्पष्ट रूप से उसे नाटक के मजाकिया पात्र के रूप में बताया है।

मृच्छकटिक का चारुदत्त वणिग् नायक है और मैत्रेय उसका विदूषक है। मैत्रेय का विनोद हाजिर–जवाबी है, साथ ही गणिकाओं की वह अत्याधिक हंसी उड़ाता है, लेकिन मैत्रेय को शठ नहीं कहा जा सकता है। और बाह्य रूप या वेश की कुरूपता मैत्रेय में होना भी असाधारण वैशिष्ट्य नहीं है। सभी नाटककारों ने शारीरिक विकृति और पर्याय से वेश की विचित्रता को विनोद निर्मिति का एक आवश्यक अंग मानकर अपने विदूषक में उसका प्रयोग किया है। अतः उसी के अनुरूप 'मृच्छकटिक' के विदूषक मैत्रेय में भी शारीरिक विकृति का गुण विद्यमान है। शकार के शब्दों में उसका सिर कौवे के पैर जैसा है। न केवल शकार अपितु वह स्वयं भी अपने सिर को ऊंट के घुटने की उपमा देता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि परम्परानुसार मृच्छकटिक का विदूषक भी असुन्दर है।

मैत्रेय जन्म से ब्राह्मण है अतः वह वैदिक मंत्रों तथा यज्ञादि धार्मिक क्रियाओं का जानकर है, परन्तु वह अन्य कुछ विदूषकों की तरह खाली पंडिताई का स्वांग तथा अर्थहीन बड़प्पन की बातें नहीं करता। यह अवश्य है कि उसकी बातों में ब्राह्मण होने के कारण इन बातों का कई बार स्वाभाविक रूप से प्रयोग हुआ है। उदाहरण के रूप में जब वह वसन्तसेना के चबूतरे पर ऊंघने वाले द्वारपाल को देखता है तो उसे श्रोत्रिय की उपमा प्रदान करता है। संस्कृत पढ़ने वाली स्त्री और काकली गाने वाले पुरुष को देखकर उसे हंसी आती है तथा वह उन दोनों पर टिप्पणी करते हुए कहता है कि 'जिस प्रकार नाक में नथिंया डालने पर गायें सूं सूं करती है, उसी तरह संस्कृत पढ़ने वाली स्त्री रटती रहती है और कोमल आवाज में गाने वाला पुरुष, सूखे फूलों की माला पहने हुये और मंत्र जपने वाले बूढ़े पुरोहित के समान प्रतीत होता है।'' वसन्तसेना के महल में पर्यटन का अवसर प्राप्त कर वह अत्यन्त प्रसन्न होता है तथा अपने भाग्य की सराहना करता है कि 'रावण जैसे पराक्रमी राजा को पुष्पक विमान की प्राप्ति के लिए कड़ी तपस्या करनी पड़ी थी, लेकिन उसे बिना परिश्रम के वसन्तसेना के स्वर्गतुल्य प्रासाद में अकड़ कर घूमने को मिला है।''

यद्यपि मैत्रेय यज्ञविधि, जप–तप आदि का ज्ञाता है, परन्तु इन कृत्यों में उसे कोई विशेष रुचि नहीं है। यही कारण है कि चारुदत्त द्वारा मातृ देवियों के लिए बलि चढ़ाने के लिये कहने पर वह प्रतिवाद करता हुआ कहता है कि ''जब इस प्रकार पूजा करने पर भी देवता चारुदत्त के ऊपर प्रसन्न नहीं होते तब समस्त पूजा–अर्चना व्यर्थ है।'' इसी संदर्भ में वह आगे कहता है कि 'मुझ ब्राह्मण की समस्त क्रियाएं विपरीत ही प्रतिफलित होती हैं, जैसे दर्पण में प्रतिबिम्बित अंत विपरीत दिखाई पड़तें हैं।''

मैत्रेय को ब्राह्मण होने से अपनी स्थिति को हमेशा ध्यान रहता है। यही कारण है कि वर्धमानक द्वारा उसे चारुदत्त के पैर धोने के लिए कहने पर वह झट से उछल कर कहता है – ''यह सेवक है, इसलिए उसका पानी लाना ठीक है। लेकिन मुझ जैसे ब्राह्मण को दूसरे के पैर धोने के लिए यह कहता है, इसका तात्पर्य क्या ?'' इस प्रकार ब्राह्मण होने का गर्व उसमें पर्याप्त मात्रा में हैं।

संस्कृत नाटकों के अन्य विदूषकों की भांति उक्त प्रकरण का विदूषक भी भोजनप्रिय व पेटू है। नाटक के प्रारंभ में सूत्रधार यही जानकर उसे भोजन हेतु आमन्त्रित करता है। यद्यपि मैत्रेय आमंत्रण को अस्वीकार कर देता है, क्योंकि पहले से ही उसे दूसरा निमंत्रण मिल चुका है, तथापि चारुदत्त के पुराने वैभव के दिनों में अपने खाए हुए सुगन्धित एवं मनोरम मोदकों तथा नानाविध व्यंजनों के स्मरण से वह व्यथित होता है। चतुर्थ अंक में जब वह वसन्तसेना के प्रासाद के विभिन्न प्रकोष्ठों को देखता है तब वह आश्चर्य की मुद्रा में दिखाई देता है। महल के वैभव को देखकर मैत्रेय की आंखें चौंधिया जाती हैं, लेकिन यह वैभव और शोभा देखते हुए मैत्रेय जब रसोईघर के पास पहुंचता है तब सचमुच उसकी लार टपकने लगती है। हिंगु–तैल की गंध, अनेक प्रकार की सुरभियों से सुगन्धित धूप की गंध, खाद्य द्रव्यों की गंध तथा मोदकों एवं मालपूओं की छटा उसे अत्यन्त उत्सुक बना देती है और उसका चित्त उन्हें चखने के लिए तरसने लगता है। यह सब देखकर वह कह उठता है – ''हा ! हा ! वसन्तसेना का घर प्रत्यक्ष स्वर्ग है।''

वसन्तसेना की स्थूलकाय विस्तीर्ण उदर वाली माता को देखकर उसे ईर्ष्या होती है तथा वह कहता है कि उसे वैसा ही मधुर एवं स्वादिष्ट भोजन भर पेट मिलता, चाहे भले ही वह भी ''चौथिया'' रोग से पीड़ित क्यों न हो जाता। वह जब तक वसन्तसेना के महल में रहता है तब तक उसके मन में यही इच्छा बनी रहती है कि कोई उसे आकर भोजन के लिए आग्रह करे, लेकिन ऐसी भलाई कोई भी नहीं दिखाता और मैत्रेय की इच्छा मन ही मन में रह जाती है। वसन्तसेना के घर का यह आतिथ्यहीन व्यवहार उसके मन में हमेशा के लिए रह जाता है। इस प्रकार मैत्रेय के भोजन प्रेम में लोभी वृत्ति होने के साथ–साथ उसमें करुणा की भावना भी छिपी हुई हैं। उसके शब्दों में हास्य तत्त्व होने के बावजूद भी उनके पीछे करुणा की भावना अवश्य विद्यमान है।

अन्य विदूषकों की भांति मैत्रेय भी भीरू प्रकृति का है। वह भीरूपन के कारण अन्धेरे में दीप चढ़ाने के लिए अकेले घर से बाहर भी निकलना पसंद नहीं करता, इस कार्य के लिये वह रदनिका को साथ लेकर जाता है। वसन्तसेना को रात्रि में घर पहुंचाने के लिए भी वह इसलिए ही तैयार नहीं हुआ क्योंकि उसे इस बात का डर था कि वह कुत्ते के समान बाहर मार न दिया जाए। इस प्रकार भय की भावना मैत्रेय के अन्तःकरण में गहरी जमी हुई है। यह सब कुछ होते हुए भी समय आने पर वह भय के घेरे से बाहर निकलकर साहस का परिचय देता है। नवम अंक में न्यायधीश के सन्मुख जिस साहस के साथ उसने न्यायाधीश तथा शकार को लताड़ा है वह वस्तुतः प्रशंसनीय है।

(4) राजश्याल–संस्थानक (शकार)

राजश्याल संस्थानक एक विचित्र पात्र है। समूचे संस्कृत साहित्य में ऐसे चरित्र का मिलना प्रायः असंभव है। वह प्रस्तुत प्रकरण का प्रतिनायक है। उसकी मनोवृत्तियां हिंसालु तथा प्रेरणाएं पाशविक हैं। उसके हृदय तथा वाणी में एक प्रकार की कुटिलता है। उसका चरित्र अत्यन्त घृणास्पद है। वह प्रथम श्रेणी का मूर्ख है। उसकी मूर्खता उसकी पाशविक धूर्तता के द्वारा स्पष्ट है, वह अपनी शक्ति एवं डांट–डपट के द्वारा प्रणय करना चाहता है। शकार द्विविधाओं व विरोधों का एक समूह है जो कि जितनी भ्रमकारी हैं उतनी ही भयंकर भी। वह दुष्ट दम्भी, दुर्विनीत एवं दुराचारी है।

उसकी वाणी की भी एक प्रमुख विशेषता है, जिसे कारण संस्थानक के स्थान पर उसका उपनाम 'शकार' पड़ा है। वह प्रायः 'स' के स्थान पर 'श' का उच्चारण करता है। उदाहरणार्थ वह वसन्तसेना को वशन्तसेना कहता है। इसके साथ ही एक ही प्रसंग में वह अनेक समानार्थक शब्दों के प्रयोग का भी शौकीन है। वसन्तसेना की भ्रांति

में रदनिका के केश पकड़ कर वह केवल 'केश' शब्द का प्रयोग करके ही संतुष्ट नहीं होता अपितु 'बाल व शिरोरूह' शब्दों का प्रयोग भी करता है। वैसे ही भागती वसन्तसेना को रोकते हुए वह 'मदन' 'अनंग' 'मन्मथ' 'प्रस्खलन्ती' जैसे पर्यायों का एक ही स्वर में कथन करता है। इसी प्रकार वसन्तसेना के दौड़ने के लिए 'यासि' धावसि 'पलायसे' का प्रयोग भी दृष्टव्य है। अपनी प्रशंसा हेतु वह अपने को 'देवपुरुष, मनुष्य तथा वासुदेव' एक ही सांस में कह जाता है। वसन्तसेना के लिए उसने दस नाम रखे हैं। ऐसा जान पड़ता है जैसे वह इन नामों में इन्द्रजाली प्रभाव का अधिष्ठान मानता है। साथ ही वह शब्द सम्बन्धी अपनी विद्वत्ता भी प्रदर्शित करना चाहता है।

शकार न केवल काम पिपासु ही है अपितु इसके साथ–साथ स्वाद लोलुप भी है। ऐसा लगता है मानो जिह्वा तृष्णा और काम तृष्णा में घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसी काम रूपी भूख को शान्त करने के लिए वह वसन्तसेना का पीछा एक पागल की तरह करता है तथा इसमें भी संदेह नहीं कि उसने एक सभ्य नागरिक के रूप में वसन्तसेना के प्रणय को प्राप्त करने की इच्छा हेतु एक गाड़ी तथा बहुमूल्य भेंट भी भेजी है, परन्तु वह प्रणय जिस ढंग से करना चाहता है, वह ढंग अमानवीय है। वह उद्देश्य की शीघ्र प्राप्ति में विश्वास रखता है, धैर्य नाम की कोई वस्तु उसमें नहीं है। वह कामान्ध है तथा उसकी कामुकता इतनी गहरी एवं अमर्यादित है कि वह राजपुरुष होते हुए भी वेश्या युवती के शीलभंग का स्पष्टरूपेण प्रयत्न करता है। वस्तुतः वह प्रेम के मर्म को नहीं जानता है तथा वासना की परितुष्टि ही उसका परम लक्ष्य है। उसने कभी भी शान्त हृदय से वसन्तसेना के विषय में नहीं सोचा तथा हमेशा ही उसे गलत समझा। उसके पास वास्तव में हृदय है ही नहीं। वह केवल काम से संतप्त है तथा येन–केन–प्रकारेण अपनी कामाग्नि शान्त करना चाहता है। प्रेम की स्निग्धता एवं सुकुमारता का वह कायल नहीं है। शायद वह अपनी क्षुधा शान्त करने हेतु शिष्ट उपचारों की उपादेयता में विश्वास न रखकर तात्कालिक क्रिया में विश्वास रखता है। स्वभाव से दम्भी एंव दुर्विनीत होने के कारण वह इस आदर्श के पालन को महत्त्व देता है – "ललचाओ, फुसलाओ, गणिका मान जाए तो अच्छा ही है, अन्यथा, निरन्तर ताक में रहो, खदेड़ो, पकड़ो, धमकाओ और मिल जाए तो वासना की आग को भरपूर बुझा लो।" वह अशिष्ट उपचारों तथा डराने धमकाने में अधिक विश्वास रखता है। यही कारण है कि वह अपने साथियों सहित, सड़क पर उसका पीछा करता है। वास्तविकता यह है कि वह शक्ति तथा धन के मद में अन्धा है तथा तलवार के बल पर प्रणय चाहता है। उसे यह मालूम नहीं कि किसी का हृदय किस प्रकार जीता जा सकता है, वह प्रणय के मैदान में अभी नौसिखिया–सा दृष्टिगत होता है।

शकार की एक अन्य विशेषता उसका आत्माभिमानी होना है। वह दम्भी है, किन्तु कायर है। वह अपने आप को देव पुरुष और वासुदेव समझता है। इसके साथ ही उसे इस बाद का भी पूर्ण गर्व है कि वह राजा का साला है, जहां भी अवसर मिलता है वह इसे कहने में नहीं चूकता है। वह अपने 'राजश्याल' होने का परिचय अपनी एक विशिष्ट डींग भरी शैली में देता है। न्याय–मण्डप में जाकर वह न्यायाधीश से अपना अनावश्यक परिचय देते समय, बहन के साथ पिता को भी जोड़ लेता है – "मैं विशाल कुक्कुर कुल में उत्पन्न हुआ हूँ। मेरे पिता राजा के श्वसुर हैं, स्वयं राजा मेरे पिता के जामाता हैं, मैं राजा का साला हूँ और राजा मेरी बहन के पति हैं।" इस प्रकार के अनावश्यक परिचय वह कई स्थानों पर देता है। यह भी सत्य है कि चेट से लेकर न्यायसंस्था के कर्मचारी एवं अधिकारी तक उसका भय मानते हैं। न्यायालय में जब शोधनक सर्वप्रथम शकार को देखता है तब कम्पित हो उठता है। साथ ही न्यायाधीशों को भी जब यह सूचना मिलती है तब वे व्याकुल हो जाते हैं। न्यायाधीश द्वारा जब सुनवाई के लिए निषेध कर दिया जाता है, उस समय वह अपने को राजा का साला होने की धमकी देता है तथा कहता है कि "वह अपनी बहन के पति राजा पालक से कह कर तथा बहन एवं माता से कह कर न्यायाधीश को पद मुक्त करा देगा।" यह जानकारी जब न्यायाधीश को होती है तब वह भी डर जाता है तथा शोधनक से इस प्रकार कह कर उसे वापस बुलवा लेता है – "वह मूर्ख सब कुछ कर सकता है। कह दो, उसके अभियोग पर आज ही विचार होगा।"

क्रूरता एवं कामुकता के साथ–साथ एक जो बात हमें उसमें मिलती है वह है उसका कपटी होना। वह प्रथम श्रेणी का धूर्त है। वह किसी भी प्रकार से तथा हर कीमत पर वसन्तसेना को अपने वश में करना चाहता है। यहां तक कि कामाग्नि शान्त करने हेतु वह वसन्तसेना के चरणों में गिर जाता है तथा विनीत स्वरों में इस प्रकार प्रार्थना करता है – 'हे विस्तृत लोचने ! हे निर्मल दांतों वाली ! हे मनोहर अंगों वाली ! मैं तुम्हें हाथ जोड़ता हूँ। मैंने कामातुर होकर जो तुम्हारा अपमान किया था, उसके लिये अब क्षमा चाहता हूँ। मैं अब तुम्हारा सेवक हो गया हूँ।'' परन्तु वसन्तसेना पर इन वाक्यों का कुछ प्रभाव नहीं पड़ता है, बल्कि प्रत्युत्तर में वह उसे चरणों से मारती है और दुत्कारती है। ऐसी स्थिति जब होती है तब दुष्ट शकार अपनी अंतिम मंजिल पर पहुंच जाता है – वह है वसन्तसेना की हत्या। वह इतना धूर्त है कि हत्या का कार्य स्वयं न करके अन्य से करवाना चाहता है तथा प्रलोभन तक देता है। वह विट से अनुरोध करता है कि इस एकान्त स्थान में वह वसन्तसेना को मार दे क्योंकि वहां ऐसा करते हुए उसे कोई नहीं देख रहा है। इसके बाद वह चेट को विभिन्न प्रकार के प्रलोभन देता है, परन्तु दोनों के साथ जब वह विफल हो जाता है तब स्वयं इस नृशंस कार्य को करने हेतु कटिबद्ध होता है। वह सर्वप्रथम उसे एकान्त स्थान जानकर विभिन्न प्रकार के भय इत्यादि दिखाता है तथा कई तरह की धमकियाँ देता है, परन्तु वसन्तसेना द्वारा बार–बार चारुदत्त को ही अपना प्रणयी स्वीकार करने व उसे खरे–खोटे शब्द कहने पर वह बौखला उठता है तथा चारुदत्त को विभिन्न प्रकार के अपशब्द कहते हुए अन्त में उसका गला दबा देता है। उसे जब तक सन्तोष नहीं मिलता तब तक कि वह मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर नहीं गिर जाती। फिर भी उसकी मनोकामना अधूरी ही रह जाती है। उस दुष्ट की धूर्तता व क्रूर कापटिकता पराकाष्ठा पर तब पहुंचती है जबकि वह निर्दोष चारुदत्त पर उस हत्या का असत्य आरोप लगा कर न्यायालय में झूठा अभियोग प्रस्तुत करता है। चारुदत्त को मृत्युदण्ड दिलाकर वह अत्यन्त प्रसन्न होता है तथा उस दिन विशिष्ट भोजन ग्रहण करता है। वह इतना निर्दयी हृदयहीन एवं हत्यारा है कि चारुदत्त के साथ उसके पुत्र रोहसेन को देखकर दोनों को मारने हेतु जल्लादों से कहता है। दया दाक्षिण्यादि गुणों का उसके हृदय में कोई स्थान नहीं है। वह मानव के रूप में दानव है।

(5) शर्विलक

शर्विलक भी प्रस्तुत प्रकरण में एक महत्त्वपूर्ण पात्र है। प्रासंगिक कथावस्तु का नेता होने से हम उसे नाटक का उप–नायक कह सकते हैं। वह जाति से ब्राह्मण है तथा दान न लेने वाले व चारों वेदों के ज्ञाता ब्राह्मण का पुत्र है। उसके चरित्र में एक क्रान्तिकारी और प्रेमी के व्यक्तित्व का समन्वय हुआ है। वह अंग्रेजी की इस उक्ति को चरितार्थ करता है कि प्रेम और युद्ध में सब कुछ उचित है।

जहां क्रान्तिकारी के रूप में वह अत्याचारी राजा पालक की हत्या करता है वहां अपनी प्रेयसी मदनिका को दासता से मुक्त कराने के लिए चोरी करना भी बुरा नहीं समझता। वह क्रान्तिकारी दल का नेता है, राज्य–विप्लव शक्ति का नेता है, परन्तु राज्यविद्रोह वाला सम्पूर्ण कथानक परदे के पीछे चलता है, अतः शर्विलक के कर्त्तव्य का परिचय दर्शक को प्रत्यक्ष में कम ही हो जाता है। उसके कर्त्तव्य का पूर्ण रूपेण परिणाम दर्शक को नाटक के अन्तिम अंक में ही हो पाता है जबकि वह पालक को मारकर गोपालदारक आर्यक को राज्यगद्दी पर स्थापित करता है। विप्लव का नेता होने से विजश्री उसे ही प्राप्त होती है।

राज्य विप्लव का नेता होने के अतिरिक्त शर्विलक प्रेमी हृदय भी है। वह यद्यपि ब्राह्मण युवक है, परन्तु उसका प्रेम मदनिका से है जो कि वेश्या वसन्तसेना की दासी है। वह उसे दासीत्व से मुक्त करवाना चाहता है और इसी लक्ष्य की पूर्ति हेतु ही वह सन्धिविच्छेद का साहस भी करता है।

सेंध लगाने की विद्या में वह प्रवीण है। सेंध लगाने वाले सम्पूर्ण प्रसंग से यह ज्ञात होता है कि उसे चोरी की नियमित शिक्षा प्राप्त है तथा वह इस कार्य में अभ्यस्त भी है। उसने सेंध लगाते समय भगवान कनक शक्ति के बताए नियमों का पूर्णतः पालन किया है। वह अनेक प्रकार की सेंध लगाना जानता है जिनमें कि नाटक में उसने

पूर्ण कुंभ की सेंध लगाना पसन्द किया है। सेंध लगाते समय जब उसे स्थान को मापने की आवश्यकता पड़ती है तो वह पथभ्रष्ट होकर यज्ञोपवीत का प्रयोग सेंध मापने में करता हैं। वह साहसी इतना है कि सर्प द्वारा अंगुली के काट लिये जाने पर अंगुली को तत्काल यज्ञेपवीत से बांध कर अपने कार्य में लीन हो जाता है। घर में चारों ओर वाद्य यंत्रों को देखकर वह उसे नाट्याचार्य का घर समझता है तथा मन में यह सोचकर दुःखी होता है कि उसने निर्धन के घर में सेंध लगाई हैं। इसी बीच विदूषक नींद में बड़बड़ाता है, शर्विलक प्रथम उसे मारने के लिए सोचता है, परन्तु दूसरे ही क्षण विचार को बदल कर कहता है – ''हमारे समान ही दीन इस सज्जन पुरुष को क्लेश देना उचित नहीं है।'' इस प्रकार यद्यपि वह प्रणय के वशीभूत होकर चोरी कर रहा है, परन्तु सज्जनता व उदारता उसके मुख्य चारित्रिक गुण हैं। चोरी करने में भी वह ब्राह्मण का धन एवं यज्ञ की सामग्री को नहीं चुराता है और माता की गोद में बालक का अपहरण नहीं करता है। चारुदत्त को भी दरिद्र समझ कर पहले वह छोड़ कर जाना चाहता है, किन्तु फिर विदूषक द्वारा गौ और ब्राह्मण की शपथ दिलाए जाने पर आभूषणों को ग्रहण करता है।

इस प्रकार परिस्थितिवश चौर्य–कार्य करने पर भी वह अपने चरित्र के गौरव को नहीं भूल सका है। वह सच्चा मित्र है, सच्चा प्रणयी है, उपकार के प्रति कृतज्ञ है, वह प्रत्युपकार करने के लिए भी लालायित है और सबसे बड़ी बात यह है कि वेश्या– दासिका की प्रीति में फंसने के बावजूद कौटुम्बिक एवं गार्हस्थिक मर्यादा के महत्त्व के प्रति सजग है – मदनिका को वधू–रूप में प्राप्त कर लेने के बाद वसन्तसेना को भी गौरव से विभूषित कर देता है।

1.2 इकाई के उद्देश्य

- कवि शूद्रक के व्यक्तित्व और कर्तृत्व से अवगत हो पाएंगे;
- मृच्छकटिक नाटक के प्रथम पांच अंकों की कथावस्तु की समीक्षा कर सकेंगे;
- कवि शूद्रक की नाट्यकला का विश्लेषण कर पाएंगे;
- मृच्छकटिक में प्रतिबिम्बित समाज तथा संस्कृति की समालोचना कर पाएंगे;
- मृच्छकटिक के नायक चारुदत्त के चरित्र से अवगत हो पाएंगे;
- विदूषक का चरित्र–चित्रण कर पाएंगे;
- मृच्छकटिक के खलनायक शकार के चारित्रिक गुण तथा अवगुणों का विवेचन कर पाएंगे।

1.3 मृच्छकटिक (1 – 5 अंक)

प्रथमोऽंक

पर्यंकग्रन्थिबन्धद्विगुणितभुजगाश्लेषसंवीतजानो–

रन्तःप्राणावरोधव्युपरतसकलज्ञानरुद्धेन्द्रियस्य।

आत्मन्यात्मानमेव व्यपगतकरणं पश्यतस्तत्त्वदृष्ट्या

शंभोर्वः पातु शून्येक्षणघटितलयब्रह्मलग्नः समाधिः।।1।।

अन्वयः – पर्यंकग्रन्थिबन्धद्विगुणितभुजगाश्लेषसंवीतजानोः, अन्तःप्राणावरोधव्युपरतसकल– ज्ञान– रुद्धेन्द्रियस्य, तत्त्वदृष्ट्या, आत्मनि, व्यपगतकरणम्, आत्मानम्, एव, पश्यतः, शम्भोः, शून्येक्षणघटितलयब्रह्मलग्नः, समाधिः, वः, पातु।

अर्थ – 'पर्यंक' नामक एक विशेष प्रकार के योगासन की मुद्रा धारण करने में द्विगुणित सर्प के लपेटने से जिस शिव के घुटने कसकर बँधे हुए हैं, (यौगिक क्रिया के द्वारा) प्राण आदि वायुओं को शरीर के भीतर ही रोक देने से जिसकी सभी इन्द्रियाँ (बाहरी वस्तुओं के) ज्ञान से निवृत्त एवं (विषयों से) संयत हो गयी हैं, जिन्होंने सच्चे ज्ञान के द्वारा अपने भीतर इन्द्रियादि रहित विशुद्ध चैतन्यरूप केवल परमात्मा को ही देखा है; उस शिव की, निराकार (ब्रह्म) के साक्षात्कार करने से होने वाली एकाग्रता (लय) के कारण ब्रह्म में लगी हुयी समाधि आप सभी (सभा में उपस्थित लोगों) की रक्षा करे।

पातु वो नीलकण्ठस्य कण्ठः श्यामाम्बुदोपमः।

गौरीभुजलता यत्र विद्युल्लेखेव राजते।।2।।

अन्वयः – यत्र, गौरीभुजलता, विद्युल्लेखा, इव, राजते, श्यामाम्बुदोपमः, नीलकण्ठस्य, कण्ठः, वः, पातु।

अर्थ – जिसमें (कण्ठ में) पार्वती जी की बाहु–लता बिजली की पंक्ति की भाँति सुशोभित होती है, वह काले बादलों के समान शंकर जी का कण्ठ आप सबकी रक्षा करे।

द्विरदेन्द्रगतिश्चकोरनेत्रः परिपूर्णेन्दुमुखः सुविग्रहश्च।

द्विजमुख्यतमः कविर्बभूव प्रथितः शूद्रक इत्यगाधसत्त्वः।।3।।

अन्वयः – द्विरदेन्द्रगतिः, चकोरनेत्रः, परिपूर्णेन्दुमुखः, सुविग्रहः, च, द्विजमुख्यतमः, अगाधसत्त्वः, शूद्रकः, प्रथितः, कविः, बभूव।

अर्थ – गजराज के समान मतवाली गति वाले, 'चकोर' नामक पक्षी के समान आँखों वाले, पूर्णिमा तिथि के चन्द्रमा के समान (मनोहर) मखवाले, सुन्दर सुगठित शरीरवाले, क्षत्रियों (द्विजों) में सर्वश्रेष्ठ एवं अगाधबलशाली 'शूद्रक' नामक विख्यात कवि हुए।

ऋग्वेदं सामवेदं गणितमथ कलां वैशिकीं हस्तिशिक्षां

ज्ञात्वा शर्वप्रसादादव्यपगततिमिरे चक्षुषी चोपलभ्य।

राजानं वीक्ष्य पुत्रं परमसमुदयेनाश्वमेधेन चेष्ट्वा

लब्ध्वा चायुः शताब्दं दशदिनसहितं शूद्रकोऽग्निं प्रविष्टः।।4।।

अन्वयः – ऋग्वेदम्, सामवेदम्, गणितम्, अथ, कलाम्, वैशिकीम्, हस्तिशिक्षाम्, ज्ञात्वा, शर्वप्रसादात्, व्यपगततिमिरे, चक्षुषी, च, उपलभ्य, पुत्रम्, राजानम्, वीक्ष्य, परमसमुदयेन, अश्वमेधेन, च, इष्ट्वा, दशदिनसहितम्, शताब्दम्, आयुः, च, लब्ध्वा, शूद्रकः, अग्निम्, प्रविष्टः।

अर्थ – (इस प्रकरण के रचयिता) शूद्रक कवि ऋग्वेद, सामवेद, गणित, नृत्यगीत आदि चौंसठ कलाओं, नाट्यशास्त्र एवं हस्तिसंचालन की शिक्षा को प्राप्त करके; भगवान शंकर की कृपा से अज्ञान रूपी अन्धकार से रहित नेत्रों ज्ञानरूपी नेत्रों को पाकर; अपने पुत्र को राजा के रूप में देखकर अर्थात् अपने पुत्र को राजसिंहासन पर बैठाकर एवं परम उन्नति करने वाले 'अश्वमेध' यज्ञ को करके; सौ वर्ष दस दिन की आयु पाकर (अन्त में) अग्नि में प्रविष्ट हो गये।

समरव्यसनी प्रमादशून्यः ककुदो वेदविदां तपोधनश्च।

परवारणबाहुयुद्धलुब्धः क्षितिपालः किल शूद्रको बभूव।।5।।

अन्वयः – शूद्रकः, समरव्यसनी, प्रमादशून्यः, वेदविदाम्, ककुदः, तपोधनः, च, परवारणबाहु –युद्धलुब्धः, क्षितिपालः, बभूव, किल।

अर्थ – 'शूद्रक' युद्ध करने के प्रेमी (अभ्यासी), असावधानी रहित अर्थात् सर्वदा सतर्क, वेद के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ, तपस्या को ही अपना धन समझने वाले अर्थात् तपस्वी, शत्रुओं के हाथियों के साथ बाहुयुद्ध करने के लोभी तथा प्रजापालक राजा थे।

अवन्तिपुर्यां द्विजासार्थवाहो युवा दरिद्रः किल चारुदत्तः।

गुणानुरक्ता गणिका च यस्य वसन्तशोभेव वसन्तसेना।।6।।

अन्वयः – अवन्तिपुर्याम्, द्विजसार्थवाहः, दरिद्रः, युवा, चारुदत्तः, किल, यस्य, गुणनुरक्ता, वसन्तशोभा, इव, वसन्तसेना, गणिका, च।

अर्थ – उज्जयिनी नगरी में पहले व्यापारी–ब्राह्मण किन्तु बाद में निर्धन युवक 'चारुदत्त' रहता था, जिसके गुणों से अनुरक्त, वसन्त ऋतु की शोभा के समान 'वसन्तसेना' नामक वेश्या भी वहाँ थी।

तयोरिदं सत्सुरतोत्सवाश्रयं नयप्रचारं व्यवहारदुष्टताम्।

खलस्वभावं भवितव्यतां तथा चकार सर्वं किल शूद्रको नृपः।।7।।

अन्वयः – इदम्, तयोः, सत्सुरतोत्सवाश्रयम्, शूद्रकः, नृपः, नयप्रचारम्, व्यवहारदुष्टताम्, खलस्वभावम्, तथा, भवितव्यताम्, सर्वम्, चकार, किल।

अर्थ – यह 'मृच्छकटिकम्' नामक प्रकरण उन दोनों (चारुदत्त और वसन्तसेना) की उत्तम विहार–लीला (सम्भोगलीला) का अवलम्बन करके लिखा गया है। राजा 'शूद्रक' ने इसमें नीति की गति दुष्टों के दोषपूर्ण आचरण, दुर्जनों के चरित्र तथा भाग्य–इन सबका वर्णन (प्रणयन) किया है।

शून्यमपुत्रस्य गृहं चिरशून्यं नास्ति यस्य सन्मित्रम्।

मूर्खस्य दिशः शून्याः सर्वं शून्यं दरिद्रस्य।।8।।

अन्वयः – अपुत्रस्य, गृहम्, शून्यम्, यस्य, सन्मित्रम्, न अस्ति, चिरशून्यम्, मुर्खस्य, दिशः, शून्याः, दरिद्रस्य, सर्वम्, शून्यम्।

अर्थ – पुत्रहीन व्यक्ति का घर सूना है अर्थात् बालक के बिना किसी भी व्यक्ति का घर सूना लगता है, जिस व्यक्ति के सच्चे मित्र नहीं हैं उसका (भी) घर सदा से सूना है। मूर्ख के लिये सभी दिशाएँ सूनी (आश्रयरहित) हैं और निर्धन के लिए सब कुछ सूना है। यही करण है कि मेरे नट एवं चारण आदि अभिनय करने वाले व्यक्ति मुझको निर्धन समझकर अपनी इच्छा के अनुसार विचरण करते हैं।

यासां बलिः सपदि मद्गृहदेहलीनां

हंसैश्च सारसगणैश्च विलुप्तपूर्वः।

तास्वेव संप्रति विरूढतृणाकुरासु

बीजांजलिः पतति कीटमुखावलीढः।।9।।

अन्वयः – यासाम्, मद्गृहदेहलीनाम्, बलिः, सपदिः, हंसैः, च, सारसगणैः, विलुप्तपूर्वः, सम्प्रति, वरूढतृणांकुरासु, तासु, एव, कीटमुखावलीढः, बीजांजलिः, पतति।

अर्थ — चारुदत्त (ऊपर की ओर देखकर और दुःख के साथ लम्बी साँस लेकर)

मेरे घर की जिन देहलियों पर रखे गये पूजा के अक्षत आदि पदार्थ पहले (मेरी सम्पन्न दशा में) हंस और सरसों के द्वारा (खाये जाकर) समाप्त कर दिये जाते थे; आज (निर्धनता की अवस्था में) उगे हुए तृणांकुरों से युक्त उन्हीं देहलियों पर कीड़ों के मुख—द्वारा खाये हुए बीजों की अंजलि गिरती है।

सुखं हि दुःखान्यनुभूय शोभते घनान्धकारेष्विव दीपदर्शनम्।

सुखात्तु यो याति नरो दरिद्रतां धृतः शरीरेण मृतः स जीवति।।10।।

अन्वयः — घनान्धकारेषु, दीपदर्शनम्, इव, दुःखानि, अनुभूय, सुखम्, हि, शोभते, यः, नरः, सुखात्, दरिद्रताम्, याति, सः, शरीरेणः, धृत्तः, अपि, मृतः, (इव), जीवति।

अर्थ — चारुदत्त — मित्र ! घने अन्धकार में दीपक के प्रकाश की भाँति दुःखों का अनुभव करने के अनन्तर सुख शोभित होता है। किन्तु जो मनुष्य सुख भोग करके निर्धनता को प्राप्त होता है वह तो शरीर से रहता हुआ भी अर्थात् शरीर धारण करते हुए भी मृतक के समान जीवन व्यतीत करता है।

दारिद्रयान्मरणाद्वा मरणं मम रोचते न दारिद्र्यम्।

अल्पक्लेशं मरणं दारिद्र्यमनन्तकं दुःखम्।।11।।

अन्वयः — दारिद्र्यात्, मरणात्, वा, मम, मरणम्, रोचते, दारिद्र्यम्, न (यतः), मरणम्, अल्पक्लेशम्, (अस्ति), दारिद्र्यम्, अनन्तकम्, दुःखम् (अस्ति)।

अर्थ — चारुदत्त — मित्र ! दरिद्रता और मृत्यु में से मुझे मृत्यु अच्छी लगती है, दरिद्रता नहीं। मृत्यु कम कष्टवाली होती है, किन्तु दरिद्रता कभी न समाप्त होने वाला दुःख है अर्थात् दरिद्रता में जीवन पर्यन्त दुःख भोगना पड़ता है।

एतत्तु मां दहति यद्गृहमस्मदीयं

क्षीणार्थमित्यतिथयः परिवर्जयन्ति।

संशुष्कसान्द्रमदलेखमिव भ्रमन्तः

कालात्यये मधुकराः करिणः कपोलम्।।12।।

अन्वयः — भ्रमन्तः, मधुकराः, कालात्यये, संशुष्कसान्द्रमदलेखम्, करिणः, कपोलम्, इव, अतिथयः, क्षीणार्थम्, इति, यत्, अस्मदीयम्, गृहम्, परिवर्जयन्ति, एतत्, तु, माम्, दहति।

अर्थ — चारुदत्त — मित्र ! धन नष्ट हो जाने के विषय में मुझे दुःख नहीं है। देखो —

मुझे यह बात सन्तप्त कर रही है कि हमारे घर को धन से रहित समझ कर अतिथि लोग इसका उसी प्रकार से परित्याग करते हैं, जिस प्रकार (मद बहने के) समय के बीत जाने पर मँडराने वाले भौंरे सूखी हुई गाढ़ी मद की धारा वाले हाथी के गण्डस्थल (कपोल) को त्याग देते हैं।

सत्यं न मे विभवनाशकृतास्ति चिन्ता

भाग्यक्रमेण हि धनानि भवन्ति यान्ति।

एतत्तु मां दहति नष्टधनाश्रयस्य

यत्सौहृदादपि जनाः शिथिलीभवन्ति।।13।।

अन्वयः – सत्यम्, मे, चिन्ता, विभवनाशकृता, न, अस्ति, हि, धनानि, भाग्यक्रमेण, भवन्ति, (तथा) यान्ति, तु, एतत्, माम्, दहति, यत्, जनाः, नष्टधनाश्रयस्य, सौहृदात्, अपि, शिथिलीभवन्ति।।

अर्थ – चारुदत्त – मित्र।

वस्तुतः मुझे धन के नष्ट हो जाने की चिन्ता नहीं है, क्योंकि भाग्य के अनुसार धन प्राप्त होते और चले जाते हैं। किन्तु यह बात मुझे जलाती है कि जिसका धनरूपी आश्रय नष्ट हो जाता है अर्थात् जो निर्धन हो जाता है उसकी मित्रता से भी लोग शिथिल हो जाते हैं।

दारिद्र्याद्ध्रियमेति ह्रीपरिगतः प्रभ्रंश्यते तेजसो

निस्तेजाः परिभूयते परिभवान्निर्वेदमापद्यते।

निर्विण्णः शुचमेति शोकपिहितो बुद्ध्या परित्यज्यते

निर्बुद्धिः क्षयमेत्यहो निर्धनता सर्वापदामास्पदम्।।14।।

अन्वयः – (मनुष्यः) दारिद्र्यात्, ह्रियम्, एति, ह्रीपरिगतः, तेजसः, प्रभश्यते, निस्तेजः, पिरभूयते, परिभवात्, निर्वेदम्, आपद्यते, निर्विण्णः, शुचम्, एति, शोकपिहितः, बुद्ध्या, परित्यज्यते, निर्बुद्धिः, क्षयम्, एति, अहो, निर्धनता, सर्वापदाम्, आस्पदम्।

अर्थ – और भी –

(मनुष्य) दरिद्रता से लज्जा को प्राप्त होता है, लज्जित (व्यक्ति) तेज रहित हो जाता है, तेजहीन तिरस्कृत होता है, तिरस्कार से ग्लानि को प्राप्त होता है, ग्लानियुक्त शोक सन्तप्त होता है, शोकाकुल व्यक्ति बुद्धि (विवेक) के द्वारा त्याग दिया जाता है अर्थात् शोकाकुल व्यक्ति विवेक को खो बैठता है और निर्बुद्धि नाश को प्राप्त होता है – अहो ! दरिद्रता सभी आपत्तियों की जड़ है।

निवासश्चिन्तायाः परपरिभवो वैरमपरं

जुगुप्सा मित्राणां स्वजनजनविद्वेषकरणम्।

वनं गन्तुं बुद्धिर्भवति च कलत्रात्परिभवो

हृदिस्थः शोकाग्निर्न च दहति सन्तापयति च।।15।।

अन्वयः – (हि, दारिद्र्यम्, पुरुषस्य) चिन्तायाः, निवासः, परपरिभवः, अपरम्, वैरम्, मित्राणाम्, जुगुप्सा, स्वजनजनविद्वेषकरणम्, च, कलत्रात्, परिभवः, (भवति, अतः) वनम्, गन्तुम्, बुद्धिः, भवति, च, हृदिस्थः, शोकाग्निः, न, दहति (किन्तु दरिद्रम) सन्तापयति च।

अर्थ – चारुदत्त – मित्र ! निर्धनता ही पुरुषों की – चिन्ता का घर (निवास–स्थान) है; दूसरों के द्वारा किये जाने वाले अनादर का कारण है; दूसरी (विलक्षण) शत्रुता है; मित्रों की घृणा तथा अपने भाई बन्धुओं एवं अन्य लोगों के द्वेष का कारण है। पत्नी के द्वारा भी (उसका) तिरस्कार होता है। अतः (दरिद्र व्यक्ति की) वन में चले जाने की इच्छा होती है। हृदय में वर्तमान शोकाग्नि एक बार ही जला नहीं डालती किन्तु सन्तप्त करती है (अर्थात् धीरे–धीरे जला–जलाकर मारती है)।

तपसा मनसा वाग्भिः पूजिता बलिकर्मभिः।

तुष्यन्ति शमिनां नित्यं देवताः किं विचारितैः ?।।16।।

अन्वयः – तपसा, मनसा, वाग्भिः, बलिकर्मभिः, पूजितः, देवताः, शमिनाम्, नित्यम्, तुष्यन्ति, विचारितैः, किम्।

अर्थ – चारुदत्त – मित्र ! ऐसा मत कहो। गृहस्थाश्रम में रहने वाले व्यक्तियों का यह (देवों की पूजा करना) नित्य–कर्म है।

तप, मन, वचनों (स्तुतियों) एवं बलिकर्मों अर्थात् पूजा में समर्पित फल, अक्षत आदि सामानों के द्वारा पूजित देवता शान्त चित्तवाले व्यक्तियों से सर्वदा सन्तुष्ट रहते हैं। (इसमें) तर्क–वितर्क करने से क्या लाभ ?।

किं त्वं भयेन परिवर्तितसौकुमार्या

नृत्यप्रयोगविशदौ चरणौ क्षिपन्ती।

उद्विग्नचंचलकटाक्षविसृष्टदृष्टि–

र्व्याधानुसारचकिता हरिणीव यासि ?।।17।।

अन्वयः – भयेन, परिवर्तितसौकुमार्या, नृत्यप्रयोगविशदौ, चरणौ, क्षिपन्ती, उद्विग्नचंचल– कटाक्षविसृष्टदृष्टिः, त्वम्, व्याधानुसारचकिता, हरिणी, इव, किम्, यासि ?

अर्थ – विट – वसन्तसेने ! ठहर, ठहर

भय के कारण सुकुमार मन्दगति को त्याग देने वाली, नृत्य–कला में निपुण चरणों को जल्दी–जल्दी आगे बढ़ाती हुई, भय–विह्वल एवं चंचल कटाक्षों से (इधर–उधर) दृष्टिपात करती हुई तुम, शिकारी के द्वारा पीछा करने से चकित हुई हरिणी के समान, क्यों जा रही हो ?

किं याशि धावशि पलाअशि पक्खलन्ती

वाशू पशीद ण मलिश्शशि चिट्ठ दाव।

कामेण दज्झदि हु मे हडके तवश्शी

अंगाललाशिपडिदे विअ मंशखण्डे।।18।।

किं यासि धावसि पलायसे प्रस्खलन्ती

वासु प्रसीद न मरिष्यसि तिष्ठ तावत्।

कामेन दह्यते खलु मे हृदयं तपस्वि

अंगारराशिपतितमिव मांसखण्डम्।।18।।

अन्वयः – (हे वसन्तसेने !) प्रस्खलन्ती, किम्, यासि, धावसि, पलायसे, हे वासु ! प्रसीद, न मरिष्यसि, तावत्, तिष्ठ, अंगारराशिपतितम्, मांसखण्डम्, इव, तपस्वि, मे, हृदयम्, कामेन, खलु, दह्यते।

अर्थ – शकार – ठहरो, वसन्तसेने ! ठहरो,

लड़खड़ाती हुई क्यों जा रही हो, दौड़ रही हो, भाग रही हो। बाले ! प्रसन्न होओ, मरोगी नहीं, तनिक ठहरो। अंगारों के समूह पर गिरे हुए मांस के टुकड़े की भाँति मेरा बेचारा हृदय कामाग्नि के द्वारा चलाया जा रहा है।

उत्ताशिता गच्छशि अन्तिका मे शन्पुण्णपच्छा विअ गिम्हमोरी।

ओवग्गदी शामिअभट्टके मे वण्णे गडे कुक्कडशावके व्व।।19।।

अन्वयः – (त्वं) मम, अन्तिकात्, सम्पूर्णपक्षा, ग्रीष्ममयूरी, इव, उत्त्रासिता, गच्छसि, मम, स्वामिभट्टारकः, वने, गतः, कुक्कुटशावकः, इव, अववल्गति।

अर्थ – चेट – आर्ये ! ठहरो, ठहरो,

(तुम) मेरे पास से, भयभीत हुई सम्पूर्ण पंखों वाली ग्रीष्मकाल की मयूरी के समान जा रही हो मेरा स्वामी (शकार) वन में गये हुए मुर्गे के बच्चे के समान (तुम्हारे पीछे–पीछे) उतावली के साथ आ रहा है।

किं यासि बालकदलीव विकम्पमाना

रक्तांशुकं पवनलोलदशं वहन्ती।

रक्तोत्पलप्रकारकुड्मलमुत्सृजन्ती

टंकैर्मनःशिलगुहेव विदार्यमाणा।।20।।

अन्वयः – हे वसन्तसेने ! बालकदली, इव, विकम्पमाना, पवनलोलदशम्, रक्तांशुकम् वहन्ती, टंकैः, विदार्यमाणा, मनःशिलगुहा, इव, रक्तोत्पलप्रकरकुड्मलम्, उत्सृजन्ती, किम्, यासि ?

अर्थ – विट – वसन्तसेने ! रुको, रुको !

नवीन केला के वृक्ष के समान काँपती हुयी, वायु के द्वारा चंचल वाले लाल रेशमी वस्त्र को धारण करती हुई, टाँकी द्वारा काटी हुई मनःरूपीशिला की कन्दरा (से निकलने वाली चिंनगारियों) के समान (केशों में गुँथे हुए) रक्त–कमलों की कलियों को (वेग से दौड़ने के कारण) बिखेरती हुयी क्यों जा रही हो ?

मम मअणमणंग मम्मथं वड्ढअन्ती

णिशि अ शअणके में णिद्दअं आक्खिवन्ती।

पशलशि भअभीदा पक्खलन्ती खलन्ती

मम वशमणुजादा लावणश्शेव कुन्ती।।21।।

अन्वयः – मम, मदनम्, अनंगम्, मन्मथम्, वर्धयन्ती, निशि, शयनके, च, मम, निद्राम्, आक्षिपन्ती, भयभीता, प्रस्खलन्ती, प्रसरसि, (किन्तु), रावणस्य, कुन्ती, इव, (त्वम्), मम, वशम्, अनुयाता।

अर्थ – शकार – ठहरो, वसन्तसेने ! ठहरो,

मेरे मदन, अनंग, मन्मथ (काम) को बढ़ाती हुई और रात्रि में बिस्तर पर मेरी नींद को भंग करती हुई भयभीत होकर बारम्बार लड़खड़ाती हुई भाग रही हो। (किन्तु तुम) उसी प्रकार मेरे वश में आ गयी हो जिस प्रकार रावण के वश में कुन्ती (आ गयी थी)।

किं त्वं पदैर्मम पदानि विशेषयन्ती

व्यालीव यासि पतगेन्द्रभयाभिभूता।

वेगादहं प्रविसृतः पवनं न रुन्ध्यां

त्वन्निग्रहे तु वरगात्रि ! न मे प्रयत्नः।।22।।

अन्वयः – हे वसन्तसेने ! पतगेन्द्रभयाभिभूता, व्याली, इव, पदैः, मम पदानि, विशेषयन्ती, त्वम्, किम्, यासि ? वेगात्, प्रविसृतः, अहम्, पवनम्, न, रुन्ध्याम् ? हे वरगात्रि ! तु, त्वन्निग्रहे, मे, प्रयत्नः, न।

अर्थ – विट – पक्षिराज गरुड़ से भयभीत हुई नागिन के समान अपने डगों से मेरे डगों को अतिक्रान्त करती हुई अर्थात् अपने पैरों को मुझसे भी अधिक वेग से रखती हुई तुम क्यों जा रही हो ? वेग से दौड़ा हुआ मैं क्या (अत्यन्त तीव्रगामी) वायु को भी नहीं रोक सकता ? अर्थात् अवश्य रोक सकता हूँ। किन्तु हे सुन्दरि ! मेरा प्रयत्न तुमको जबर्दस्ती रोकने का नहीं है अर्थात् मैं जबर्दस्ती तुम्हें रोकना नहीं चाहता।

एशा णाणकमूशिकामकशिका मच्छाशिका लाशिका
णिण्णाशा कुलणाशिका अवशिका कामस्स मंजूशिका।
एशा वेशवहू शुवेशणिलआ वेशंगणा वेशिआ
एशे शे दश णामके मह कले अंजावि म णेच्छदि।।23।।

एषा नाणकमोषिकामकशिका मत्स्याशिका लासिका
निर्नासा कुलनाशिका अवशिका कामस्य मंजूषिका।
एषा वेषवधूः सुवेशनिलया वेशांगना वेशिका
एतान्यस्या दश नामकानि मया कृतान्यद्यापि मां नेच्छति।।23।।

अन्वयः – एषा, नाणकमोषिकामकशिका, मत्स्याशिका, लासिका, निर्नासा, कुलनासिका, अवशिका, कामस्य मंजूषिका, एषा, वेष्षवधूः, सुवेशनिलया, वेषांगना, वेशिका, एतानि, अस्याः, दश, नामकानि, मया, कृतानि, (किन्तु), अद्य, अपि, (इयम्) माम्, न, इच्छति।

अर्थ – शकार – महानुभाव ! महानुभाव !

उत्तम रत्न आदि चुराने वालों की कामाग्नि को शान्त करने वाली, मछली खाने वाली, नर्तकी, नासिकाहीन अर्थात् अप्रतिष्ठित, कुल को नष्ट करने वाली, किसी के वश में न होने वाली, काम की पिटारी, वेश्यागामियों की स्त्री, सुन्दर वेश्यालय में निवास करने वाली, वेश्यालय की कामिनी वेश्या – इस प्रकार इसके ये दश नाम मैंने रखें हैं। फिर भी (अब भी) यह मुझे नहीं चाहती है।

प्रसरसि भयविक्लवा किमर्थं प्रचलितकुण्डलघृष्टगण्डपार्श्वा।

विटजननखघट्टितेव वीणा जलधरगर्जितभीतसारसीव।।24।।

अन्वयः – विटजननखट्टिता, वीणा, इव, प्रचलितकुण्डलघृष्टगण्डपार्श्वा, (त्वम्), जलधर– गर्जितभीतसारसी, इव, भयविक्लवा, (सती) किमर्थम्, प्रसरसि।

अर्थ – विट–विट लोगों के नख से घृष्ट (रगड़ी गयी) वीणा के समान (भागने के कारण) हिलने वाले कुण्डलों (के बारम्बार स्पर्श) से घृष्ट (रगड़ खाये हुए) कपोलों वाली तुम, बादलों के गर्जन से भयभीत सारसी की भाँति, भयातुर होकर किसलिये भागी जा रही हो।

झाणज्झणंतबहुभूशणशद्दमिश्शं
किं दोव्वदी विअ पलाअशि लामभीदा ?।
एशे हलामि शहश त्ति जधा हणूमे
विश्शावशुश्श बहिणिं विअ तं शुभद्दं।।25।।

(झणज्झणमिति बहुभूषणशब्दमिश्रं किं द्रौपदीव पलायसे रामभीता ?।
एष हरामि सहसेति यथा हनूमान्विश्वावसोर्भगिनीमिव तां सुभद्राम्।।25।।)

अन्वयः – रामभीता, द्रौपदी, इव, बहुभूषणशब्दमिश्रम्, झणज्झणम्, इति (कुर्वती) किम्, पलायसे, यथा, हनूमान्, विश्वावसोः, ताम्, भगिनीम्, सुभद्राम्, इव, एषः, (अहम्) इति, सहसा, हरामि।

अर्थ – शकार – राम से डरी हुई द्रौपदी के समान, अनेक आभूषणों के शब्द से मिश्रित झन–झनाहट के साथ अर्थात् अपने आभूषणों का झन–झन शब्द करती हुई तुम क्यों भागी जा रही हो ? जिस प्रकार हनुमान् ने विश्वावसु की उस बहन सुभद्रा का अपहरण किया था, उसी प्रकार यह मैं बलपूर्वक तुम्हारा हरण करता हूँ।

लामेहि अ लाअवल्लहं तो क्खाहिशि मच्छमंशकं।

एदेहिं मच्छमंशकेहिं शुणआ मडअं ण शेवंदि।।26।।

(रमय च राजवल्लभं ततः खादिष्यसि मत्स्यमांसकम्।

एताभ्यां मत्स्यमांसाभ्यां श्वानो मृतकं न सेवन्ते।।26।।)

अन्वयः – (हे वसन्तसेने !) राजवल्लभम्, रमय, ततः, मत्स्यमांसकम्, चः खादिष्यसि, एताभ्याम्, मत्स्यमांसाभ्याम्, (तृप्ताः), श्वान्ः मृतकम् न, सेवन्ते।

अर्थ – चेट – राजा के अत्यन्त प्रिय (शकार) के साथ रमण करो, तब तुम मछली और मांस (खूब) खाओगी। इन दोनों – मछली और मांस के कारण (परितृप्त हुए शकार के) कुत्ते मृतक अर्थात् मरे हुए पशु, पक्षी आदि की लाश का सेवन नहीं करते हैं।

किं त्वं कटीतटनिवेशितमुद्वहन्ती

ताराविचित्ररुचिरं रशनाकलापम्।

वक्त्रेण निर्मथितचूर्णमनःशिलेन

त्रस्ताद्भुतं नगरदैवतवत्प्रयासि।।27।।

अन्वयः – भवति वसन्तसेने ! त्वम्, कटीतटनिवेशितम्, ताराविचित्ररुचिरम्, रशनाकलापम्, उद्वहन्ती, निर्मथितचूर्णमनः शिलेन, वक्त्रेण, नगरदैवतवत्, त्रस्ताद्भुतम्, किम्, प्रयासि।

अर्थ – विट – सुश्री वसन्तसेने ! कटि – प्रान्त में बँधी हुई, मोतियों से अद्भुत अतएव मनोहर मेंखला को धारणा करती हुई, चूर्ण मनःशिला को भी (अपने गुलाबी वर्ण से) तिरस्कृत करने वाले मुख से युक्त तुम नगर–देवता की भाँति, भय – विह्वलतापूर्वक क्यों भागी जा रही हो ?।

अम्हेहिं चंडं अहिशालिअंती वणे शिआली विअ कुक्कुलेहिं।

पलाशि शिग्घं तुलिदं शवेग्गं शवेंटणं मे हलअं हलंती।।28।।

(अस्माभिश्चण्डभिसार्यमाणा वने श्रृगालीव कुक्कुरैः।

पलायसे शीघ्रं त्वरितं सवेगं सवृन्तं मम हृदय हरन्ती।।28।।)

अन्वयः – वने, कुक्कुरैः, श्रृगाली, इव, अस्माभिः, चण्डम्, अभिसार्यमाणा, (त्वम्), मम, हृदयम्, सवृन्तम्, हरन्ती, शीघ्रम् त्वरितम् सवेगम्, पलायसे।

अर्थ – शकार – कुत्तों के द्वारा पीछा की जाती हुई श्रृगाली के समान हम लोगों के द्वारा तीव्र गति से पीछा की जाती हुई, मेरे हृदय को समूल हरण करती हुई तुम शीघ्र, तुरन्त और वेगपूर्वक भाग रही हो।

किं भीमशेणे जमदग्गिपुत्ते कुंतीशुदे वा दशकंधले वा।

एशे हगे गेण्हिय केशहश्ते दुश्शाशणश्शाणुकिदिं कलेमि।।29।।

किं भीमसेनो जमदग्निपुत्रः कुन्तीसुतो वा दशकन्धरो वा।

एषोऽहं गृहीत्वा केशहस्ते दुःशासनस्यानुकृतिं करोमि।।29।।

अन्वयः — किम्, जमदग्निपुत्रः, भीमसेनः, वा, कुन्तीसुतः, वा, दशकन्धरः, (त्वाम्, रक्षिष्यति), एषः, अहम्, केशहस्ते, (त्वाम्), गृहीत्वा, दुःशासनस्य, अनुकृतिम्, करोमि।

अर्थ — क्या जमदग्नि का पुत्र अथवा भीमसेन अथवा कुन्ती का पुत्र अथवा रावण ? (तुम्हारी रक्षा करेगा ?)। यह मैं (तुम्हारे) केशपाश को पकड़ कर दुःशासन का अनुकरण करता हूँ।

अशी शुतिक्खे वलिदे अ मश्तके

कप्पेम शीशं उद मालएम वा।

अलं तवेदेण पलाइदेण

मुमुक्खु जे होदि ण शे खु जीअदि।।30।।

असिः सुतीक्ष्णो वलितं च मस्तकं कल्पये शीर्षमुत मारयामि वा।

अलं तवैतेन पलायितेन मुमूर्षुर्यो भवति न स खलु जीवति।।30।।

अन्वयः — (मम) असिः, सुतीक्ष्णः, (अस्ति), तव, मस्तकम्, च, वलितम्, (वर्तते), (अहम्, तव) मस्तकम्, कल्पये, उत, मारयामि, वा, तव, एतेन, पलायितेन, अलम्, यः, मुमूर्षुः, भवति, सः, खलु, न, जीवति।

अर्थ — देखो, देखा, तलवार बड़ी तेज है और तुम्हारा मस्तक (भी) बड़ा सुन्दर है, मैं तुम्हारा शिर काट डालूँगा अथवा मार डालूँगा। तुम्हारा इस प्रकार भागना निरर्थक है, (क्योंकि) जो मरने वाला होता है वह निश्चित रूप से जीवित नहीं रहता।

तरुणजनसहायश्चिन्त्यतां वेशवासो

विगणय गणिका त्वं मार्गजाता लतेव।

वहसि हि धनहार्यं पण्यभूतं शरीरं

सममुपचर भद्रे ! सुप्रियं वाप्रियं वा।।31।।

अन्वयः — वेशवासः, तरुणजनसहायः, चिन्त्यताम्, त्वम्, मार्गजाता, लता, इव, गणिका, (इति), विगणय, हि, पण्यभूतम्, धनहार्यम्, शरीरम्, वहसि, (अतः), हे भद्रे ! सुप्रियम्, वा, अप्रियम्, वा समम्, उपचर।

अर्थ — देखो, वेश्यालय के जीवन (वास) को युवकों की सहायता पर आश्रित समझो। सोचो, तुम मार्ग में उत्पन्न हुई लता के समान वेश्या हो ! तुम, बाजार में बेची जाने वाली वस्तु के समान, धन के द्वारा ग्रहण करने योग्य शरीर धारण करती हो। अतः, हे भद्र स्त्री ! प्रिय और अप्रिय दोनों के साथ समान व्यवहार करो।

वाप्यां स्नाति विचक्षणो द्विजवरो मुर्खोऽपि वर्णाधमः

फुल्लां नाम्यति वायसोऽपि हि लता या नामिता बर्हिणा।

ब्रह्मक्षत्रविशस्तरन्ति च यया नावा तयैवेतरे

त्वं वापीव लतेव नौरिव जनं वेश्यासि सर्वं भज।।32।।

अन्वयः – विचक्षणः, द्विजवरः, वर्णाधमः, मूर्खः, अपि, वाप्याम्, स्नाति या, बर्हिणा, नामिता, फुल्लाम्, (ताम्), लताम् वायमः, अपि, नाम्यति, हि, यया, नावा, ब्रह्मक्षत्रविशः, तरन्तिः, तया, एव, इतरे, चः, वेश्या, असि, (अतः), वापी, इव, लता इव, नौः, इव, सर्वम्, जनम्, भज।

अर्थ – और भी – विद्वान् ब्राह्मण तथा नीच जाति वाला मूर्ख भी एक बावड़ी में स्नान करता है। जो लता पहले मयूर के द्वारा (बैठकर) झुकायी गयी थी उसी फूली हुयी लता को (उस पर बैठ कर) कौवा भी झुका देता है। जिस नाव से ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य पार उतरते हैं उसी से दूसरे (वर्णाधम) लोग भी। तुम वेश्या हो, अतः वावड़ी, लता और नाव की भाँति सब लोगों का (एक समान) सेवन करो।

आलोकविशाला मे सहसा तिमिरप्रवेशविच्छिन्ना।

उन्मीलितापि दृष्टिर्निमीलितेवान्धकारेण।।33।।

अन्वयः – आलोकविशाला, मे दृष्टिः, सहस्रा, तिमिरप्रवेशविच्छिन्ना, (जाता), उन्मीलिता, अपि, (दृष्टिः) अन्धकारेण, निमीलिता, इव, (भवति)।

अर्थ – विट – अहो, प्रबल अंधकार है; क्योंकि – प्रकाश में विस्तृत (दूर तक देखने वाली) मेरी दृष्टि सहसा अन्धकार में प्रवेश करने से अवरुद्ध हो गयी है। खुली हुई भी मेरी आँखें अन्धकार के द्वारा बन्द सी कर दी गयी हैं।

लिम्पतीव तमोऽंगानि वर्षतीवांजनं नभः।

असत्पुरुषसेवेव दृष्टिर्विफलतां गता।।34।।

अन्वयः – तमः, अंगानि, लिम्पति, इव, नभः, अंजनम्, वर्षति, इव, दृष्टिः, असत्पुरुषसेवा, इव, विफलताम्, गताः।

अर्थ – और भी – अन्धकार अंगों को लिप्त सा कर रहा है अर्थात् अंगों में अन्धकार व्याप्त हो रहा है, आकाश मानो काजल की वृष्टि कर रहा है। मेरी दृष्टि दुष्ट मनुष्यों की सेवा की भाँति निष्फल हो गयी है।

कामं प्रदोषतिमिरेण न दृश्यसे त्वं

सौदामिनीव जलदोदरसंधिलीना।

त्वां सूचयिष्यति तु माल्यसमुद्भवोऽयं

गन्धश्च भीरु ! मुखराणि च नूपुराणि।।35।।

अन्वयः – हे वसन्तसेने ! जलदोदरसन्धिलीना, सौदामिनी, इव, कामम्, त्वम्, प्रदोषतिमिरेण, न, दृश्यसे, तु, हे भीरु ! माल्यसमुद्भवः, अयम्, गन्धः, त्वाम्, सूचयिष्यति, च, मुखराणि, नूपुराणि च, (सूचयिष्यति)।

अर्थ – विट – (जनान्तिक) हे वसन्तसेने ! बादलों के भीतर सन्धि–स्थल में छिपी हुई बिजली के समान यद्यपि तुम सायंकालीन अन्धकार के कारण नहीं दिखलायी पड़ रही हो, परन्तु हे डरपोक। माला से निकली हुयी सुगन्ध तथा शब्द करने वाले नूपुर तुम्हें सूचित कर देंगे अर्थात् तुम्हारा पता बता देंगे।

दारिद्र्यात्पुरुषस्य बान्धवजनो वाक्ये न संतिष्ठते

सुस्निग्धा विमुखीभवन्ति सुहृदः स्फारीभवन्त्यापदः।

सत्त्वं ह्रासमुपैति शीलशशिनः कान्तिः परिम्लायते

पापं कर्म च यत्परैरपि कृतं तत्तस्य संभाव्यते।।36।।

अन्वयः – दारिद्र्यात्, बान्धवजनः, पुरुषस्य, वाक्ये, न, सन्तिष्ठते, सुस्निग्धाः, सुहृदः, विमुखीभवन्ति, आपदः, स्फारीभवन्ति, सत्त्वम्, ह्रासम्, उपैति, शीलशशिनः, कान्तिः, परिम्लायते, च, यत्, पापम्, कर्म, परैः, अपि, कृतम्, तत्, तस्य, सम्भाव्यते।

अर्थ – दरिद्रता के कारण बन्धु लोग भी निर्धन पुरुष के कहने में नहीं रहते। अत्यन्त स्नेही मित्र भी विमुख हो जाते हैं और आपत्तियाँ बढ़ जाती हैं। बल क्षीण हो जाता है, चरित्र रूपी चन्द्रमा की कान्ति धुँधली हो जाती है, कहाँ तक कहा जाय, जो दूसरे व्यक्तियों के द्वारा भी किया गया पाप–कर्म है वह उसी का किया हुआ समझा जाता है।

संगं नैव हि कश्चिदस्य कुरुते संभाषते नादरात्

संप्राप्तो गृहमुत्सवेषु धनिना सावज्ञमालोक्यते।

दूरादेव महाजनस्य विहरत्यल्पच्छदो लज्जया

मन्ये निर्धनता प्रकाममपरं षष्ठं महापातकम्।।37।।

अन्वयः – हि, कश्चित्, अस्य, संगम्, न, एव, कुरुते, आदरात्, न, सम्भाषते, उत्सवेषु, धनिनाम्, गृहम्, सम्प्राप्तः, सावज्ञम्, आलोक्यते, अल्पच्छदः, (दरिद्रः), लज्जया, महाजनस्य, दूरात्, एव, विहरति, (अतः अहम्) मन्ये, निर्धनता, अपरम्, प्रकामम्, षष्ठम्, महापातकम् (अस्ति)।

अर्थ – और भी – कोई भी व्यक्ति इसका (निर्धन का) संग नहीं करता है। न आदर से बोलता है। उत्सव के अवसर पर (यदि निर्धन) धनिक के घर पहुँच जाता है तो वहाँ भी वह लोगों के द्वारा अनादर की दृष्टि से देखा जाता है। निर्धन व्यक्ति अल्प वस्त्रवाला होने के कारण लज्जावश बड़े लोगों से दूर होकर ही चलता है अर्थात् दूर ही रहता है। अतः मेरी समझ में दरिद्रता (पंच महापातकों के अतिरिक्त) एक प्रबल छठा महापाप है।

दारिद्र्य ! शोचामि भवन्तमेवमस्मच्छरीरे सुहृदित्युषित्वा।

विपन्नदेहे मयि मन्दभाग्ये ममेति चिन्ता क्व गमिष्यसि त्वम्।।38।।

अन्वयः – हे दारिद्र्य ! भवन्तम्, एवम्, शोचामि, (यत्), अस्मच्छरीरे, सुहृद्, इति, उषित्वा, मयि, मन्दभाग्ये, विपन्नदेहे, (सति), त्वम्, क्व, गमिष्यसि, इति, मम, चिन्ता (अस्ति)।

अर्थ – और भी – हे दारिद्र्य ! तुम्हारे विषय में मैं इस प्रकार दुःखी होता हूँ अर्थात् तुम्हारे विषय में मुझे यही चिन्ता है कि मेरे शरीर में मित्र के समान निवास करके मुझ अभागे के मर जाने पर तुम कहाँ जाओगे ?

अंधआले पलाअंती मल्लगंधेण शूइदा।

केशविंदे पलामिश्टा चाणक्के णेव्व दोव्वदी।।39।।

अन्वयः – अन्धकारे, पलायमाना, माल्यगन्धेन, सूचिता, (वसन्तसेना), चाणक्येन, द्रौपदी, इव, केशवृन्दे, परामृष्टा।

अर्थ – अन्धकार में भागती हुई माला की गन्ध से सूचित 'वसन्तसेना' मेरे द्वारा उसी प्रकार केशों से पकड़ ली गयी है जैसे 'चाणक्य' के द्वारा 'द्रौपदी'।

एषासि वयसो दर्पात्कुलपुत्रानुसारिणी।

केशेषु कुसुमाढ्येषु सेवितव्येषु कर्षिता।।40।।

अन्वयः – वयसः, दर्पात्, कुलपुत्रानुसारिणी, एषा, (त्वम्), कुसुमाढ्येषु, सेवितव्येषु, केशेषु, कर्षिता, असि।

अर्थ – विट – युवावस्था के अहंकार से कुलीन पुत्र चारुदत्त का अनुगमन करने वाली यह तुम फूलों से सजे हुए, सेवा करने के योग्य बालों से पकड़ कर खींची जा रही हो।

एशाशि वाशू शिलशि ग्गहीदा केशेशु बालेशु शिलोलुहेशु।

अक्कोश विक्कोश लवहिचंडं शंभुं शिवं शंकलमीशल वा।।41।।

(एषासि वासु शिरसि गृहीता केशेषु बालेषु शिरोरूहेषु।

आक्रोश विक्रोश लपाधिचण्डं शंभुं शिवं शंकरमीश्वर वा।।41।।)

अन्वयः – हे वासु ! एषा, (त्वम्) शिरसि, केशेषु, बालेषु, शिरोरूहेषु, गृहीता, असि, (सम्प्रति), आक्रोश, विक्रोश, वा, शम्भुम्, शिवम्, शंकरम्, ईश्वरम्, अधिचण्डम्, लप।

अर्थ – शकार – हे बाले ! यह (तुम) शिर के बालों, केशों, शिरोरूहों के माध्यम से पकड़ ली गयी हो अर्थात् तुम्हारे शिर के बाल पकड़ में आ गए हैं। अब तुम गाली दो, चिल्लाओं, शम्भु, शिव, शंकर अथवा ईश्वर को जोर से पुकारो अर्थात् हमें किसी से भय नहीं है।

इयं रंगप्रवेशेन कलानां चोपशिक्षया।

वंचनापण्डितत्वेन स्वरनैपुण्यमाश्रिता।।42।।

अन्वयः – इयम्, रंगप्रवेशेन, कलानाम्, उपशिक्षया, वंचनापण्डितत्वेन, च, स्वरनैपुण्यम्, आश्रिता।

अर्थ – विट – क्या स्वर में परिवर्तन कर लिया ? अहो आश्चर्य है ! अथवा इसमें आश्चर्य ही क्या है ?

इस 'वसन्तसेना' ने नाट्यशाला में प्रवेश एवं कलाओं की शिक्षा के द्वारा दूसरों को ठगने में कुशलता प्राप्त कर लेने के कारण स्वर परिवर्तन में निपुणता प्राप्त कर ली है।

मा दुग्दो त्ति परिहवो णत्थि कदंतस्स दुग्गदो णाम।

चारित्तेण विहीणो अड्ढो वि अ दुग्गदो होई।।43।।

अन्वयः – (अयम्) दुर्गतः, इति, परिभवः, मा, (कर्त्तव्यः), कृतान्तस्य, (समीपे), दुर्गतः, न अस्ति, नाम, च, चारित्र्येण, विहीनः, आढ्यः, अपि, दुर्गतः, भवति।

अर्थ – यह 'निर्धन है' इसलिये अपमान मत करो। यमराज के यहाँ निर्धन कोई नहीं है और चरित्रहीन धनवान् भी दुर्दशा को प्राप्त होता है।

काचित्स्वाधीनयौवना।

सा नष्टा शंकया तस्याः प्राप्तेयं शीलवंचना।।44।।

अन्वयः – अस्माभिः, सकामा, स्वाधीनयौवना, काचित्, अन्विष्यते, सा, नष्टा, तस्याः, शंकया, इयम्, शीलवंचना, प्राप्ता।

अर्थ – विट – (लज्जापूर्वक) महाब्राह्मण ! क्षमा करो, क्षमा करो। किसी दूसरे व्यक्ति (वसन्तसेना) के भ्रम से ऐसा (अनुचित) कार्य हो गया, अहंकार से नहीं। देखो –

हमारे द्वारा एक कामासक्ता युवती ढूँढी जा रही है अर्थात् हम लोग एक कामिनी को खोज रहे हैं।

एष ते प्रणयो विप्र। शिरसा धार्यते मया।

गुणशस्त्रैर्वयं येन शस्त्रवन्तोऽपि निर्जिताः।।45।।

अन्वयः – हे विप्र ! एषः, ते, प्रणयः, मया, शिरसा, धार्यते, येन शस्त्रवन्तः, अपि, वयम्, गुणशस्त्रैः, निर्जिताः।

अर्थ – विट – हे ब्राह्मण ! तुम्हारे इस अनुग्रह को मैं शिरोधार्य करता हूँ। जिस कारण से शस्त्रधारी होते हुए भी हम लोग आप के गुणरूपी शस्त्र से पराजित कर दिये गए हैं।

सोऽस्मद्विधानां प्रणयैः कृशीकृतो

न तेन कश्चिद्विभवैर्विमानितः।

निदाघकालेष्विव सोदको ह्रदो

नृणां स तृष्णामपनीय शुष्कवान्।।46।।

अन्वयः – सः, अस्मद्विधानां, प्रणयैः, कृशीकृतः, तेन, कश्चित्, विभवैः, न, विमानितः, नृणाम्, तृष्णाम्, अपनीय, सः, निदाघकालेषु, सोदकः, ह्रदः, इव, शुष्कवान्।।

अर्थ – विटः – ऐसा मत कहो।

वह हम जैसे लोगों की ही प्रेमपूर्ण मांगों से धनहीन हो गये हैं अर्थात् प्रेम के कारण हम लोगों को धन दे देकर निर्धन हो गये हैं। उन्होंने किसी को भी धन के गर्व से अपमानित नहीं किया है। मनुष्यों की धनसम्बन्धिनी तृष्णा को मिटा कर वे गर्मी के समय में जलयुक्त तालाब के समान सूख गये हैं अर्थात् निर्धन हो गये हैं।

शूले विक्कंते पाण्डवे शेदकेद्

पुत्ते लाधाए लावणे इन्ददत्ते।

आहो कुन्तीए तेण लामेण जादे

अश्शत्थामे धम्मपुत्ते जडाउ।।47।।

अन्वयः – कः, सः, विक्रान्तः, शूरः, (सः, किम्) पाण्डवः, श्वेतकेतुः, इन्द्रदत्तः राधायाः पुत्रः, रावणः, आहो, तेन, रामेण, जातः, कुन्त्याः (पुत्रः), अश्वत्थामा, (वा) धर्मपुत्रः, जटायुः।

अर्थ – शकारः – (रोषपूर्वक) कौन है वह जन्मदासी का पुत्र ?

क्या वह शूरवीर पाण्डुपुत्र 'श्वेतकेतु है ?' अथवा इन्द्रप्रदत्त 'राधा' का पुत्र 'रावण' है ? अथवा प्रसिद्ध उस 'राम' से उत्पन्न 'कुन्ती' का पुत्र 'अश्वत्थामा' है ? अर्थात् धर्मपुत्र 'जटायु' है ?।

दीनानां कल्पवृक्षः स्वगुणफलनतः सज्जनानां कुटुम्बी

आदर्शः शिक्षितानां सुचरितनिकषः शीलवेलासमुद्रः।

सत्कर्त्ता नावमन्ता पुरुषगुणनिधिर्दक्षिणेदारसत्त्वो

ह्येकः श्लाघ्यः स जीवत्यधिकगुणतया चोच्छ्वसन्तीव चान्ये।।48।।

अन्वयः – दीनानाम्, स्वगुणफलनतः, कल्पवृक्षः, सज्जनानाम्, कुटुम्बी, शिक्षितानाम्, आदर्शः, सुचरितनिकषः, शीलवेलासमुद्रः, सत्कर्त्ता, न, अवमन्ताः, पुरुषगुणनिधिः, दक्षिणोदारसत्त्वः, हि, अधिकगुणतया, श्लाघ्यः, एकः, सः, जीवति, अन्ये, उच्छ्वसन्ति, इव, च।

अर्थ – विट – अरे मूर्ख ! यह तो आर्य 'चारुदत्त' हैं। जो दीनों के कामनाओं को पूर्ण करने वाले अपने गुण रूपी फलों से नम्र कल्पवृक्ष हैं। साधुओं के बन्धु, शिक्षितों के आदर्श, सच्चरित्र की कसौटी, सदाचार रूपी मर्यादा के

सागर, सत्कार करने वाले, किसी का अनादर न करने वाले, मनुष्योचित गुणों के खजाना, सरल एवं उदार स्वभाव वाले हैं। गुणों की प्रचुरता के कारण प्रशंसनीय वह आर्य चारुदत्त ही यथार्थ रूप में जीवित हैं और अन्य लोग तो सिसकते ही हैं अर्थात् उनके अतिरिक्त अन्य गुणहीन व्यक्तियों का जीवन निरर्थक है।

अंधस्य दृष्टिरिव पुष्टिरिवातुरस्य

मूर्खस्य बुद्धिरिव सिद्धिरिवालसस्य।

स्वल्पस्मृतेर्व्यसनिनः परमेव विद्या

त्वां प्राप्य सा रतिरिवारिजने प्रनष्टा।।49।।

अन्वयः – सा, त्वाम्, प्राप्य, अन्धस्य, दृष्टिः, इव, आतुरस्य, पुष्टिः, इव, मूर्खस्य, बुद्धिः, इव, अलसस्य, सिद्धिः, इव, अल्पस्मृतेः, व्यसनिनः, परमा, विद्या, इव, अरिजने, रतिः, इव, प्रनष्टा।

अर्थ – विट – वह तुम्हें प्राप्त कर अन्धे की दृष्टि के समान, रोगी के बल के समान, मूर्ख की बुद्धि की भाँति आलसी की सफलता की भाँति, कम स्मरण शक्तिवाले दुर्गुणसक्त (व्यक्ति) की उत्कृष्ट विद्या की तरह, शत्रुओं में प्रेम के सदृश, अदृश्य हो गयी।

आलाने गृह्यते हस्ती वाजी वल्गासु गृह्यते।

हृदये गृह्यते नारी यदीदं नास्ति गम्यताम्।।50।।

अन्वयः – हस्ती, आलाने, गृह्यते, वाजी, वल्गासु, गृह्यते, नारी, हृदये, गृह्यते, यदि, इदम्, नास्ति, (तदा), गम्यताम्।

अर्थ – शकार – 'वसन्तसेना' को बिना लिये नहीं जाऊगा।

विट – क्या तुमने यह भी नहीं सुना है ? (कि) – हाथी खम्भे में बाँध कर वश में किया जाता है, घोड़ा लगाम से वश में किया जाता है और स्त्री हृदय से वश में की जाती है। यदि यह हृदय का प्रेम नहीं है तो जाइये।

कश्चालुका गोछडलित्तवेंटा

शाके अ शुक्खे तलिदे हु मंशे।

भत्ते अ हेमंतिअलत्तिशिद्धे

लीणे अ वेले ण हु होदि पूदी।।51।।

कूष्माणडी गोमयलिप्तवृन्ता शाकं

च शुष्कं तलितं खलु मांसम्।

भक्त च हैमन्तिकरात्रिसिद्धं लीनायां

च वेलायां न खलु भवति पूति।।51।।

अन्वयः – गोमयलिप्तवृन्ता, कूष्माण्डी, शुष्कम्, शाकम्, च, तलितम् मांसम्, खलु हैमन्तिकरात्रिसिद्धम्, भक्तम्, च, वेलायाम्, लीनायाम्, च, न, खलु, पूति, भवति।

अर्थ – और भी देखो – गोबर से लिप्त डण्ठल वाली कूष्माण्डी, सूखा हुआ शाक, तला हुआ मांस, हेमन्त ऋतु की रात्रि में पकाया हुआ भात, अधिक काल बीत जाने पर भी विकृत नहीं होते हैं।

णिव्वक्कलं मूलकपेशिवण्णं

खन्धेण घेत्तूण अ कोशशुत्तम्

कुक्केहि कुक्कीहि अ बुक्कअन्ते

जधा शिलाले शलणं पलामि।।52।।

निर्वल्कलं मूलकपेशिवर्णं स्कन्धेन गृहीत्वा च कोशसुप्तम्।

कुक्कुरैः कुक्करीभिश्च बुक्क्यमानो यथा शृगालः शरणं प्रयामि।।52।।

अन्वयः – निर्वल्कलम्, मूलकपेशिवर्णम्, कोशसुप्तम्, (अस्मि), स्कन्धेन, गृहीत्वा, च, कुक्कुरैः, कुक्कुरीभिः, च, बुक्क्यमानः, श्रृगालः, यथा, शरणम्, प्रयामि।

अर्थ – शकार – (उलटी पकड़ कर) – नंगी तथा मूली के छिलके के समान रंगवाली, म्यान में स्थित तलवार को कन्धे पर रख कर मैं कुत्ते और कुतियों के द्वारा भौंके जाते हुए गीदड़ की भाँति घर जाता हूँ।

यदा तु भाग्यक्षयपीडितां दशां

नरः कृतान्तोपहितां प्रपद्यते।

तदास्य मित्राण्यपि यान्त्यमित्रतां

चिरानुरक्तोऽपि विरज्यते जनः।।53।।

अन्वयः – यदा, तु, नरः, कृतान्तोपहिताम्, भग्यक्षयपीडिताम्, दशाम्, प्रपद्यते, तदा, अस्य, मित्राणि, अपि, अमित्रताम्, यान्ति, चिरानुरक्तः, जनः, अपि, विरज्यते।

अर्थ – चारुदत्त – अरी रदनिके ! तुम्हारे पास उत्तर भी नहीं है ? खेद है, जब मनुष्य क्रुद्ध दैव के द्वारा उपस्थित की गयी भाग्यनाश के कारण दलित दशा को प्राप्त हो जाता है, तब इस धनहीन के मित्र भी शत्रुत को प्राप्त हो जाते हैं अर्थात् शत्रु बन जाते हैं और बहुत दिनों से प्रेम करने वाला व्यक्ति भी विरक्त हो जाता है।

अविज्ञातावसक्तेन दूषिता मम वासमा।

छादिता शरदभ्रेण चन्द्रलेखेव दृश्यते।।54।।

अन्वयः – (या), अवज्ञितावसक्तेन, मम, वासमा, दूषिता, (तथा), शरदभ्रेण, छादिता, चन्द्रलेखा, इव, दृश्यते।

अर्थ – चारुदत्त – यह तो 'रदनिका' है, और यह दूसरी (स्त्री) कौन है ? (जो) अनजाने में स्पर्श किये हुए मेरे वस्त्र से दूषित हो गयी अर्थात् मेरे (परपुरुष) के वस्त्र के स्पर्श से दूषित हो गयी।

यया मे जनितः कामः क्षीणे विभवविस्तरे

क्रोधः कुपुरुषस्येव स्वगात्रेष्वेव सीदति।।55।।

अन्वयः – विभवविस्तरे, क्षीणे, यया, जनितः, मे कामः, कुपुरुषस्य, क्रोधः, इव, स्वगात्रेषु, एव, सीदति।

अर्थ – चारुदत्त – अरे ! यह वसन्तसेना है। प्रचुर धनराशि के क्षीण हो जाने पर जिस वसन्तसेना के द्वारा उत्पन्न की गयी मेरी वासना, असमर्थ व्यक्ति के क्रोध की भाँति, अपनी देह में ही विनष्ट हो रही है।

प्रविश गृहमिति प्रतोद्यमाना न चलति भाग्यकृतां दशामवेक्ष्य।

पुरुषपरिचयेन च प्रगल्भं न वदति यद्यपि भाषते बहूनि।।56।।

अन्वयः – गृहम्, प्रविश, इति, प्रतोद्यमाना, भाग्यकृताम्, दशाम्, अवेक्ष्य, न, चलति, यद्यपि (इयम्), बहूनि, भाषते, (तथापि), पुरुषपरिचयेन, प्रगल्भम्, न च वदति।

अर्थ – चारुदत्त – (अनादर पूर्वक) यह (शकार) मूर्ख है। (अपने आप) अहो ! कैसी देवता के समान पूजा करने के योग्य वह युवती है। तभी तो (अभी) उस समय – (रोहसेन को लेकर) 'घर में प्रवेश करो', इस प्रकार प्रेरित की गयी (भी, प्रतिकूल) भाग्य के द्वारा उपस्थित की गयी (मेरी) दुरवस्था को देखकर (भीतर) नहीं गयी। यद्यपि (वेश्या होने के नाते यह) बहुत बोलती है तथापि पुरुषों के संसर्ग से अर्थात् पुरुषों के समक्ष धृष्टता पूर्वक नहीं बोलती है।

उदयति हि शशांकः कामिनीगण्डपाण्डु–

ग्रहगणपरिवारो राजमार्गप्रदीपः।

तिमिरनिकरमध्ये रश्मयो यस्य गौराः

स्रुतजल इव पंके क्षीरधाराः पतन्ति।।57।।

अन्वयः – हि, कामिनीगण्डपाण्डुः, ग्रहगणपरिवारः, राजमार्गप्रदीपः, शशांक, उदयति, यस्य, गौराः, रश्मयः, स्रुतजले, पंके, क्षीरधाराः, इव, तिमिरनिकरमध्ये, पतन्ति।

अर्थ – चारुदत्तः – मैत्रेय ? रहने दो, प्रदीपिकाओं की आवश्यकता नहीं है। देखो –

सुन्दरी युवती के कपोल के समान उज्ज्वल, नक्षत्र–समूह रूपी परिवार वाला तथा राजमार्ग का दीपक अथवा राजमार्ग को प्रकाशित करने वाला चन्द्रमा उदित हो रहा है। जिसकी श्वेत किरणें, सूखे हुए जलवाले कीचड़ में दूध की धाराओं के समान, अन्धकार समूह के मध्य में पड़ रही हैं।

राजमार्गो हि शून्योऽयं रक्षिणः संचरन्ति च।

वंचना परिहर्तव्या बहुदोषा हि शर्वरी।।58।।

अन्वयः – हि, अयम्, राजमार्गः, शून्यः, च, रक्षिणः, संचरन्ति, वंचना, परिहर्तव्या, हि, शर्वरी, बहुदोषा, (भवति)।

अर्थ – (प्रेम के साथ) वसन्तसेने ! यह आपका घर है। आप प्रवेश करें।

(वसन्तसेना प्रेमपूर्वक देखती हुई निकल जाती है)।

चारुदत्तः – मित्र ! वसन्तसेना गयी। तो आओ, घर को ही चलें। काफी रात बीत जाने से यह राजमार्ग सूना है और रक्षक लोग घूम रहे हैं। ठगी से बचना चाहिए अर्थात् वसन्तसेना के आभूषण को कहीं छिपा कर रखना चाहिए जिससे चोर न पा सकें क्योंकि रात वस्तुतः बड़ी दोषपूर्ण होती है अर्थात् चोरी आदि अपराध रात्रि में ही होते हैं।

द्वितीयोऽंक

णवबन्धणमुक्काए विअगद्दहीए

हा ताडिहो म्हि गद्दहीए।

अंगलाअमुक्काए विअ शत्तीए

घडुक्की विअ घादिदो म्हि शत्तीए।।1।।

नवबन्धनमुक्तयेव गर्दभ्या हा ताडितोऽस्मि गर्दभ्या।

अंगराजमुक्तयेव शक्त्या घटोत्कच इव घातितोऽस्मि शक्त्या।।1।।

अन्वयः – हा ! नवबन्धनमुक्तया, गर्दभ्या, इव, गर्दभ्या, ताडितः, अस्मि, हा! अंगराजमुक्तया, शक्त्या, घटोत्कचः, इव, शक्त्या, घातितः, अस्मि।

अर्थ – संवाहक – आश्चर्य है ! यह जुआरीपन बहुत ही दुःखदायक है।

हाय ! शीघ्र ही बन्धन से छूटी हुई गदही के समान गर्दभी (जुए के काम में आने वाली कौड़ी, पाशा) ने मुझे मार दिया अर्थात् कौड़ी से बुरी तरह पछाड़ा गया हूँ। 'कर्ण' (अंगराज) के द्वारा चलाई हुई शक्ति (एक प्रकार का फेंक कर मारने वाला अस्त्र) से घटोत्कच (भीम के पुत्र) समान, मैं भी शक्ति (जुए में चली जाने वाली कौड़ियों की एक खास चाल) के द्वारा मारा गया हूँ।

लेखअवावडहिअअं शहिअं दट्ठूण झत्ति पब्भट्ठे।

एण्हिं मग्गणिवडिदे कं णु खु शलणं पपज्जे।।2।।

लेखकव्यापृतहृदयं सभिकं दृष्ट्वा झटिति प्रभ्रष्टः।

इदानीं मार्गनिपतितः कं नु खलु शरणं प्रपद्ये।।2।।

अन्वयः – लेखकव्यापृतहृदयम्, सभिकम्, दृष्ट्वा, झटिति, प्रभ्रष्टः, इदानीम्, मार्गनिपतितः, (अहम्) नु, कम्, खलु, शरणम्, प्रपद्ये।2।

अर्थ – जुआरियों के अगुआ सभिक को कुछ लिखने में उलझा हुआ देख कर जल्दी भाग निकला और अब रास्ते पर आ गया मैं किसकी शरण में जाऊँ ?।2।

जइ वज्जसि पादालं इंदं शलणं च संपदं जासि।

सहिअं वज्जिअ एकं रुद्दो वि ण रक्खिदुं तरइ।।3।।

(यदि व्रजसि पातालमिन्द्रं शरणं च सांप्रतं यासि।

सभिकं वर्जयित्वैकं रुद्रोऽपि न रक्षितुं तरति।।3।।)

अन्वयः – यदि, पातालम्, व्रजसि, इन्द्रम्, शरणम्, च, यासि, (किन्तु), एकम्, सभिकम्, वर्जयित्वा, रुद्रः, अपि, (त्वाम्) रक्षितुम्, न, तरति।3।

अर्थ – जुआरी – यदि (अपने बचाव के लिये तुम) पाताल लोक में जाते हो अथवा इन्द्र की शरण में चले जाते हैं तो भी इस समय केवल सभिक को छोड़ कर शिव भी तुम्हें नहीं बचा सकते।

कहिं कहिं सुसहिअवप्पलंभआ

पलासि ले भअपलिवेविदंगआ।

पदे पदे समविसमं खलंतआ

कुलं जसं अइकसणं कलेंतआ।।4।।

अन्वयः – हे सुसभिकविप्रलम्भक ! भयपरिवेषितांगक ! कुलम्, यशः, अतिकृष्णम्, कुर्वन्, पदे, पदे, समविषमम्, स्खलन, कुत्र, कुत्र, पलायसे।4।

अर्थ – माथुर – अरे ! (मुझ जैसे) सच्चे और सीधे जुआरियों के अगुआ को भी धोखा देने वाले ! डर के मारे काँपते हुए शरीरवाले ! अपने कुल एवं कीर्ति को अत्यन्त काला करते हुए, पग–पग पर ऊँचे–नीचे लड़खड़ाते हुए तू कहाँ भाग रहा है।

कत्ताशद्दे णिण्णाणअश्श हलइ हडकं मनुश्शश्श।

ढक्काशद्देव्व णडाधिवश्श पब्भट्टलज्जश्श।।5।।

अरे, कत्ताशब्दो निर्नाणकस्य हरति हृदयं मनुष्यस्य।

ढक्काशब्द इव नराधिपस्य प्रभ्रष्टराज्यस्य।।

अन्वयः – अरे ! कत्ताशब्दः, निर्नाणकस्य, मनुष्यस्य, प्रभ्रष्टराज्यस्य, नराधिपस्य, ढक्काशब्दः, इव, हृदयम्, हरति।5।

अर्थ – संवाहक – (जुआ खेलने की इच्छा को जैसे तैसे रोक कर अपने आप)

अरे, यह कौड़ी अथवा पासा की खन–खनाहट की आवाज निर्धन जुआरी मनुष्य के हृदय को उसी तरह लुभाती है जिस तरह कि हाथ से राज्य निकल जाने वाले किसी राजा को भेरी का शब्द (लड़ाई आदि के लिए ललचाता है)।

जाणामि ण कीलिश्शं शुमेलुशिहलपधणशण्णिहं जूअं।

तह वि हु कोइलमहुले कत्ताशद्दे मणं हलदि।।6।।

जानामि न क्रीडिष्यामि सुमेरुशिखरपतनसंनिभं द्यूतम्।

तथापि खलु कोकिलमधुरः कत्ताशब्दो मनो हरति।।6।।

अन्वयः – द्यूतम्, सुमेरुशिखरपतनसन्निभम्, जानाभि, (अतः) न, क्रीडिष्यामि, तथापि, कोकिलमधुरः, कत्ताशब्दः, खलु, मनः, हरति।6।

अर्थ – जुआ (खेलना) 'सुमेरु' पर्वत की चोटी से गिरने के समान (हानिकारक) है; (मैं यह) जानता हूँ। अतः नहीं खेलूँगा। तथापि कोयल के गले से निकली हुई मीठी कूक के समान कौड़ी की खन–खनाहट मन को लुभा ही लेती है।

न गणयति पराभवं कुतश्चिद्धरति ददाति च नित्यमर्थजातम्।

नृपतिरिव निकाममायदर्शी विभववता समुपास्यते जनेन।।7।।

अन्वयः – (द्यूतम्), कुतश्चित्, पराभवम्, न, गणयति, नित्यम्, अर्थ – जातम्, हरति, ददाति, च, निकामम्, आयदर्शी, राजा, इव, भववता, जनेन, समुपास्यते।7।

अर्थ – जुआ किसी से अपमान की परवाह नहीं करता है। यह नित्य ही धन लेता (पैदा करता) और देता है। राजा की भाँति काफी लाभ दिखलाने वाला जुआ बड़े–बड़े धनी आदमियों के द्वारा भी सेवित होता है अर्थात् खेला जाता है।

द्रव्यं लब्धं द्यूतेनैव दारा मित्रं द्यूतेनैव।

दत्तं भुक्तं द्यूतेनैव सर्वं नष्टं द्यूतेनैव।।8।।

अन्वयः – द्यूतेन, एव, द्रव्यम्, लब्धम्, द्यूतेन, एव, दाराः, मित्रम्, (लब्धम्), द्यूतेन, एव दत्तम्, भुक्तम्, द्यूतेन, एव, सर्वम्, नष्टम्।8।

अर्थ – जुआ से ही मैंने धन कमाया। स्त्री और मित्र जुए से ही प्राप्त किया। जुए से ही किसी को कुछ दिया और खाया। और जुए से ही अपना सब कुछ गवाँ दिया।

त्रेताहृतसर्वस्वः पावरपतनाच्च शोषितशरीरः।

नर्दितदर्शितमार्गः कटेन विनिपातितो यामि।।9।।

अन्वयः – त्रेताहृतसर्वस्वः, पावरपतनात्, शोषितशरीरः, नर्दितदर्शितमार्गः, कटेन, विनिपातितः, यामि।9।

अर्थ – त्रेता ('तीया' नामक एक खास चाल = दाँच) के कारण सब कुछ छीन लिया जाने वाला, पावर ('दुआ' नाम एक प्रकार का दाँव) के द्वारा सन्न (शुष्क) शरीर खाला, नर्दित ('नक्का' नामक एक तरह का दाँव) के द्वारा (घर का) रास्ता दिखाया जाने वाला, कट ('पूरा' नामक एक ढंग का दाँव) के द्वारा मारा हुआ जा रहा हूँ अर्थात् ! 'तीया' 'दूआ' और 'नक्का' के चक्कर में मैं पूर्ण रूप से मिट चुका हूँ।

अयं पटः सूत्रदरिद्रतां गतो ह्ययं पटश्छिद्रशतैरलंकृतः।

अयं पटः प्रावरितुं न शक्यते ह्ययं पटः संवृत एव शोभते।।10।।

अन्वयः – अयम्, पटः, सूत्रदरिद्रताम्, गतः, अयम्, पटः, हि, छिद्रशतैः, अलंकृतः, अयम्, पटः, प्रावरितुम्, न, शक्यते, अयम्, पटः, ही, संवृतः, एव, शोभते।10।

अर्थ – यह कपड़ा जीर्ण हो गया है, यह कपड़ा बहुत से छेदों से परिपूर्ण है। यह वस्त्र शरीर ढकने लायक नहीं है। यह कपड़ा लपेटा हुआ रहने पर ही अच्छा लगता है।10।

पादेनैकेन गगने द्वितीयेन च भूतले।

तिष्ठाम्युल्लम्बितस्तावद्यावत्तिष्ठति भास्करः।।11।।

अन्वयः – एकेन, पादेन, गगने, द्वितीयेन, च, भूतले, उल्लम्बितः, तावत्, तिष्ठामि, यावत्, भास्करः, तिष्ठति।11।

अर्थ – एक पैर आसमान में करके और दूसरा पैर जमीन पर रखकर तब तक लटका हुआ रह सकता हूँ जब तक सूरज रहता है। (अर्थात् जब मैं समूचे दिन इतने दुःखमयी काम को भी कर सकता हूँ, तो 'माथुर' से डरने की क्या जरूरत ? वह इससे और कठोर दण्ड क्या देगा ?)

यः स्तब्धं दिवसान्तमानतशिरो नास्ते समुल्लम्बितो

यस्योद्घर्षणलोष्टकैरपि सदा पृष्ठे न जातः किणः।

यस्यैतच्च न कुक्कुरैरहरहोजंघान्तरं चर्व्यते

तस्यात्यायतकोमलस्य सततं द्यूतप्रसंगेन किम् ?।।12।।

अन्वयः – यः, दिवसान्तम्, आनतशिरः, (सन्), स्तब्धम्, समुल्लम्बितः, न, आस्ते, यस्य, पृष्ठे, उद्घर्षणलोष्ठकैः, अपि, सदा, किणः, न, जातः, यस्य, च, एतत्, जंघान्तरम्, कुक्कुरैः, अहः अहः, न, चर्व्यते, अत्यायतकोमलस्य, तस्य, सततम्, द्यूतप्रसंगेन, किम? ।12।

अर्थ – जो व्यक्ति मेरे समान दिन भर नीचे शिर करके चुपचाप लटका हुआ नहीं रह सकता। जिसकी पीठ पर (पैसा न दे सकने पर दूसरे जुआरियों के द्वारा) नित्य घसीटने से ढेलों के द्वारा चोट का चिह्न भी नहीं पड़ा है। (पैसा न दे सकने के कारण भागने पर जुआरियों के द्वारा दौड़ाये गये) कुत्तों से जिसकी जांघ का यह भीतरी हिस्सा प्रतिदिन काटा नहीं जाता। ऐसे अत्यन्त कोमल व्यक्ति को निरन्तर जुआ खेलने से क्या प्रयोजन ? अर्थात् जुआ खेलना आसान काम नहीं है। इसमें कठिन से कठिन दुःख भोगने पड़ते हैं। अतः कोमल आदमियों को इधर नहीं आना चाहिए।

दुर्वर्णोऽसि विनष्टोऽसि दशस्वर्णस्य कारणात्।

पंचेन्द्रियसमायुक्तो नरो व्यापाद्यते त्वया।।13।।

अन्वयः – (हे माथुर ! त्वम्), दुर्वर्णः, असि, विनष्टः, असि, (यत्) त्वया, दशस्वर्णस्य, कारणात्, पंचेन्द्रियसमायुक्तः, नरः, व्यापाद्यते।13।

अर्थ – माथुर ! तुम नीच एवं पतित हो जो कि सोने की दस मोहरों के लिए पाँच इन्द्रियों से युक्त मनुष्य को मार रहे हो।

जे अत्तबलं जाणिअ भालं तुलिदं वहेइ माणुश्शे।

ताहं खलणं ण जायदि ण अ कंतालगडे विवज्जदि।।14।।

य आत्मबलं ज्ञात्वा भारं तुलितं वहति मनुष्यः।

तस्य स्खलनं न जायते न च कान्तारगतो विपद्यते।।14।।

अन्वयः – यः, मनुष्यः, आत्मबलम्, ज्ञात्वा, तुलितम्, भारम्, वहति, तस्य, स्खलनम्, न, जायते, कान्तारगतः, च, (सः) न, विपद्यते।14।

अर्थ – जो मनुष्य अपनी ताकत का अनुमान करके भार उठाता है, वह कभी भी गड्ढे में नहीं गिरता है। और न तो दुर्गम रास्ते पर चलने से नष्ट ही होता है अर्थात् यदि मैंने अपने धन का ध्यान करके जुआ खेला होता तो यह हालत न होगी।

शक्कालधणे खु शज्जणे काह ण होइ चलाचते धणे।

जे पूइदुं पि ण जाणादि शे पूआविशेशं पि जाणादि।।15।।

(सत्कारधनः खलु सज्जनः कस्य न भवति चलाचलं धनम्।

यः पूजयितुमपि न जानाति स पूजाविशेषमपि जानाति।।15।।)

अन्वयः – सत्कारधनः, सज्जनः, (भवति), खलु, कस्य, धनम्, चलाचलम्, न, भवति ? यः, पूजयितुम्, अपि, न, जानाति, अपि, सः, पूजाविशेषम्, जानाति।15।

अर्थ – संवाहक – दूसरों का आदर करना ही सज्जनों का धन होता है ? किसका धन नाशवान् नहीं होता है ? अर्थात् सभी लोगों का धन नश्वर होता है। जो आदमी दूसरों का आदर भी करना नहीं जानता है, वह क्या आदर के विशेष तरीके को जानता है ? अर्थात् नहीं जानता है।

कस्स तुहुं तणुमज्झे अहरेण रददट्ठदुव्विणीदेण।

जम्पसि मणोहलवअणं आलोअंती कडक्खेण।।16।।

(कस्य त्वं तनुमध्ये अधरेण रतदष्टदुर्विनीतेन।

जल्पसि मनोहरवचनमालोकयन्ती कटाक्षेण।।16।।)

अन्वयः – हे तनुमध्ये ! कटाक्षेण, आलोकयन्ती, त्वम्, रतदष्टदुर्विनीतेन, अधरेण, मनोहरवचनम्, कस्य, जल्पसि।16।

अर्थ – माथुर – हे पतली कमर वाली स्त्री ? टेढ़ी आँखों से देखती हुई तुम सम्भोग के समय में काटे गये, धृष्ट ओष्ठ से मन को लुभाने वाले वचन किससे बोल रही हो ?

मेरे पास धन नहीं है। दूसरी जगह जाओ।

जूदेण तं कदं मे जं वीहत्थं जणश्श शव्वश्श।

एणहिं पाअडशीशे णलिन्दमग्गेण विहलिश्शं।।17।।

(द्यूतेन तत्कृतं मम यद्विहस्तं जनस्य सर्वस्य।

इदानीं प्रकटशीर्षो नरेन्द्रमार्गेण विहरिष्यामि।।17।।)

अन्वयः – द्यूतेन, मम, तत्, कृतम्, यत्, सर्वस्य, जनस्य, (समक्षम्) विहस्तम्, इदानीम्, प्रकटशीर्षः, नरेन्द्रमार्गेण, विहरिष्यामि।17।

अर्थ – संवाहक – आर्ये ! मैंने निश्चय कर लिया है। (घूम कर) जुए के कारण मैं सभी आदमियों के सामने अपमानित हुआ। अब ऋण चुक जाने के बाद मैं सड़कों पर शिर ऊँचा करके अर्थात् निर्भय होकर घूमूँगा।

अवरोध वालअजणं तुरिदं आरुहध वुक्खपासादं।

किं ण हु पेक्खध पुरदो दुट्टो हत्थी इदो एदि।।18।।

'अपनयत बालकजनं त्वरितमारोहत वृक्षप्रासादम्।

किं न खलु प्रेक्षध्वं पुरतो दुष्टो हस्तीत एति।।18।।

अन्वयः – बालकजनम्, अपनयत, वृक्षप्रासादम्, त्वरितम्, आरोहत, किम्, न, खलु, प्रेक्षध्वम्, पुरतः, दुष्टः, हस्ती, इतः, एति।18।

अर्थ – बच्चों को रास्ते से हटा लो, जल्दी ही पेड़ों एवं घरों पर चढ़ जाओ। क्या नहीं देख रहे हो कि दुष्ट हाथी सामने से इधर ही आ रहा है।

विचलइ णेउरजुअलं छिज्जंति अ मेहला मणिक्खइआ।

वलआ अ सुन्दरदरा रअणंकुरजालपडिबद्धा।।19।।

विचलति नुपुरयुगलं छिद्यन्ते च मेखला मणिखचिताः।

वलयाश्च सुन्दरतरा रत्नांकुरजालप्रतिबद्धाः।।19।।

अन्यवः – नुपुरयुगलम्, विचलति, मणिखचिताः, मेखलाः, रत्नांकुरजालप्रतिबद्धाः, सुन्दरतराः, वलयाः, च, छिद्यन्ते।19।

अर्थ – (हाथी के डर से भागती हुई स्त्रियों के) पाजेब का जोड़ा गिर रहा है, मणियों से जड़ी हुई मेखलाएँ तथा छोटे–छोटे रत्नों से मढ़े हुए अच्छे–अच्छे कंगन टूट रहे हैं।

आहणिऊण सरोसं तं हत्थिं विंझसैलसिहराभं।

मोआविओ मए सो दंतंतरसंठिओ परिव्वाजओ।।20।।

(आहत्य सरोषं तं हस्तिनं विन्ध्यशैलशिखराभम्।

मोचितो मया स दन्तान्तरसंस्थितः परिव्राजकः।।20।।)

अन्वयः – विन्ध्यशैलशिखराभम्, तम्, हस्तिनम्, सरोषम्, आहत्य, मया, दन्तान्तरसंस्थितः, सः, परिव्राजकः, मोचितः।20।

अर्थ – कर्णपूरक – विन्ध्याचल पहाड़ की चोटी की भाँति आकार वाले उस हाथी पर क्रोधपूर्वक प्रहार करके मैंने हाथी के दाँतों के बीच दबे हुए उस संन्यासी को छुड़ा लिया।

तृतीयोऽंक

सुअणे खु भिच्चाणुकपके शामिए णिद्धणके वि शोहदि।

पिशुणे उण दव्वगव्विदे दुक्कले क्खु पलिणामदालुणे।।1।।

सुजनः खलु भृत्यानुकम्पकः स्वामी निर्धकोऽपि शोभते।

पिशुनः पुनर्द्रव्यगर्वितो दुष्करः खलु परिणामदारुणः।।1।।

अन्वयः – भृत्यानुकम्पकः, सुजनः, स्वामी, निर्धनकः, अपि, (सन्), खलु, शोभते, पुनः, द्रव्यगर्वितः, पिशुनः, दुष्करः, परिणामदारुणः, खलु, (भवति)।1।

अर्थ – चेट ! नौकरों पर दया करने वाला सज्जन मालिक निर्धन रहने पर भी सुखदायी (शोभित) होता है। किन्तु धन के मद में चूर दुष्ट मालिक दुःख से सेवा करने योग्य तथा अन्त में भयंकर होता है।

शश्शपलक्कबलद्दे ण शक्कि वालिदुं

अण्णपशत्तकलकत्तेण शक्कि वालिदु।

जूदपशत्तमणुश्शे ण शक्कि वालिदुं

जे वि शहाविअदोशे ण शक्कि वालिदुं।।2।।

सस्यलम्पटबलीवर्दो न शक्यो वारयितु–

मन्यकलत्रप्रसक्तो न शक्यो वारयितुम्।

द्यूतप्रसक्तमनुष्यो न शक्यो वारयितुं

योऽपि स्वाभाविकदोषो न शक्यो वारयितुम्।।2।।

अन्वयः – सस्यलम्पटबलीवर्दः, वारयितुम्, न, शक्यः, अन्यकलत्रप्रसक्तः, वारयितुम्, न, शक्यः, द्यूतप्रसक्तमनुष्यः, वारयितुम्, न, शक्यः, यः, अपि, स्वाभाविकदोषः (अस्ति, सः) वारयितुम्, न, शक्यः।2।

अर्थ – हरे धान का लोभी साँड़, दूसरे की स्त्री में आसक्त पुरुष, जुआ खेलने का आदती मनुष्य (इस सब) को रोका नहीं जा सकता। और जो भी स्वाभाविक बुराई होती है वह भी छोड़ी नहीं जा सकती है।

उत्कण्ठितस्य हृदयानुगुणा वयस्या

संकेतके चिरयति प्रवरो विनोदः।

संस्थापना प्रियतमा विरहातुराणां

रक्तस्य रागपरिवृद्धिकरः प्रमोदः।।3।।

अन्वयः – (वीणा), उत्कण्ठितस्य, हृदयानुगुणा, वयस्या, संकेतके, चिरयति, प्रवरः, विनोदः, विरहातुराणाम्, प्रियतमा, संस्थापना, रक्तस्य, रागपरिवृद्धिकरः प्रमोदः, (अस्ति)।3।

अर्थ – (वीणा) अत्यन्त विरह पीड़ा से व्याकुल व्यक्ति के लिए मनपसन्द सखी है। इशारा किये गये स्थान पर आने में प्रेमी के देर करने पर यह (वीणा) मनबहलाव का अच्छा साधन है। विरह से पीड़ित की प्रिय ढाढस बँधाने वाली (प्रेमिका) है। और प्रेमी जनों के राग (दूसरे के प्रति कामपूर्ण प्रेम) को बढ़ाने वाला मनोरंजन है।

रक्तं च नाम मधुरं च समं स्फुटं च

भावान्वितं च ललितं च मनोहर च।

किंवा प्रशस्तवचनैर्बहुभिर्मदुक्तै–

रन्तर्हिता यदि भवेद्वनितेति मन्ये।।4।।

अन्वयः – (गीतम्), नाम, रक्तम्, च, मधुरम्, च, समम्, स्फुटम्, च, भावान्वितम्, च, ललितम्, च, मनोहरम्, च, (आसीत्), वा, मदुक्तैः, बहुभिः, प्रशस्तवचनैः, किम् ?, यदि, वनिता, अन्तर्हिता, भवेत्, इति, मन्ये।4।

अर्थ – चारुदत्त – मित्र ! 'रेभिल' महोदय ने आज वास्तव में बहुत अच्छा गाना गाया। फिर भी आप प्रसन्न नहीं हुए।

('रेभिल' का वह गाना) रागपूर्ण, सुनने में मीठा लगनेवाला, (स्वर तथा लय आदि की) समतावाला, स्पष्ट, भावपूर्ण, ललित एवं मनोहर था। अथवा हमारे बहुत बढ़ाई करने से क्या लाभ ? मुझे तो ऐसा लगता था कि ('रेभिल' के रूप में) मानो स्त्री छिपी हुई हो (अर्थात् 'रेभिल' स्त्रियों की भाँति सब प्रकार की निपुणता के साथ गा रहा था।)

तं तस्य स्वरसंक्रमं मृदुगिरः श्लिष्टं च तन्त्रीस्वनं

वर्णानामपि मूर्च्छनान्तरतं तारं विरामे मृदुम्।

हेलासंयमितं पुनश्च ललितं रागद्विरुच्चारितं

यत्सत्यं विरतेऽपि गीतसमये गच्छामि शृण्वन्निव।।5।।

अन्वयः – सत्यम्, यत्, गीतसमये, विरते, अपि, वणानाम्, मूर्च्छनान्तरगतम्, अपि, तारम्, विरामे, मृदुम्, पुनः, च, हेलासंयमितम्, रागद्विरुच्चारितम्, तस्य, मधुरगिरः, तम्, स्वरसंक्रमस्, श्लिष्टम्, तन्त्रीस्वनम्, च, श्रृण्वन्, इव, अहम्, गच्छामि।5।

अर्थ – यह सत्य है कि गाने का समय बीत जाने पर भी अक्षरों की मूर्च्छना (स्वरों का क्रमशः चढाना और उतारना) के अन्तर्गत (चढ़ाने के समय) काफी ऊँचा, विराम के समय कोमल और पुनः लीलापूर्वक नियन्त्रित, रागों में दो बार उच्चारण की हुई उस (रेभिल) की कोमल वाणी की उस स्वरयोजना को तथा (उससे) मिली हुई वीणा की आवाज को, मैं सुनता हुआ सा जा रहा हूँ (अर्थात् सब प्रकार से सुन्दर 'रेभिल') का गाना अब भी हमारे कानों में (ठीक ठीक गूँज रहा है)।

असौ हि दत्त्वा तिमिरावकाशमस्तं व्रजत्युन्नतकोटिरिन्दुः।

जलावगाढस्य वनद्विपस्य तीक्ष्णं विषाणाग्रमिवावशिष्टम्।।6।।

अन्वयः – जलावगाढस्य, वनद्विपस्य, अवशिष्टम्, तीक्ष्णम्, विषाणाग्रम्, इव हि, उन्नतकोटिः, असौ, इन्दुः तिमिरावकाशम्, दत्त्वा, अस्तम्, व्रजति।6।

अर्थ – चारुदत्त – आपने ठीक कहा – जल में डूबे जंगली हाथी के (जल में डूबने से) बचे हुए दाँत के तीखे अगले हिस्से की तरह उन्नत अग्रभागवाला यह चन्द्रमा अँधेरे को (फैलने के लिए) मौका देकर अस्तांचल को जा रहा है।

अलं चतुःशालमिमं प्रवेश्य

प्रकाशनारीधृत एष यस्मात्।

तस्मात्स्वयं धारय विप्र !

तावद्यावन्न तस्याः खलु भोः समर्प्यते।।7।।

अन्वयः –इमम्, चतुशालम्, प्रवेश्य, अलम्, यस्मात्, एषः, प्रकाशनारीधृतः, तस्मात्, भोःविप्र! तावत्, स्वयम्, धारय, यावत्, खलु, तस्याः, (हस्तो), न समर्प्यते।7।

अर्थ – चारुदत्त – इसे चतुःशाला में भेजना ठीक नहीं है, क्योंकि यह वेश्या की धरोहर है। इसलिए हे ब्राह्मण ! जब तक यह 'वसन्तसेना' को लौटा नहीं दिया जाता, तब तक इसकी रखवाली तुम स्वयं करो।

इयं हि निद्रा नयनावलम्बिनी ललाटदेशादुपसर्पतीव माम्।

अदृश्यरूपा चपला जरेव या मनुष्यसत्त्वं परिभूय वधेते।।8।।

अन्वयः – हि, ललाटदेशात्, नयनावलम्बिनी, इयम्, निद्रा, माम्, उपसर्पति, इव, अदृश्यरूपा, चपला, जरा, इव, या मनुष्यसत्त्वम्, परिभूय, वर्धते।8।

अर्थ – चारुदत्त – और क्या ? मस्तक से आँखों में उतरती हुई यह नींद मेरी ओर आ रही है अर्थात् धीरे–धीरे मुझे वश में कर रही है। न दिख पड़ने वाली चंचल वृद्धावस्था की भाँति यह नींद भी मनुष्यों के बल के अभिभूत करके बढ़ती है।

कृत्वा शरीरपरिणाहसुखप्रवेशं

शिक्षाबलेन च बलेन च कर्ममार्गम्।

गच्छामि भूमिपरिसर्पणाघृष्टपार्श्वो

निर्मुच्यमान इव जीर्णतनुर्भुजंगः।।9।।

अन्वयः – शिक्षाबलेन, च, बलेन, च, शरीरपरिणाहसुखप्रवेशम्, कर्ममार्गम्, कृत्वा, भूमिपरिसर्पणघृष्टपार्श्व, (सन्, अहम्), निर्मुच्यमानः, जीर्णतनुः, भुजंगः, इव, गच्छामि।9।

अर्थ – शर्विलक – अपनी शिक्षा के जोर तथा बल के प्रभाव से (अपने) देह की लम्बाई चौड़ाई (विशालता) के सुख से घुसने के लायक सेंध लगा करके, जमीन पर घिसकने से छिले हुए पार्श्वभागवाला मैं (शर्विलक), केंचुली छोड़ते हुए जर्जर देहवाले साँप के समान, सेंध में जाता हूँ।

नृपतिपुरुषशंकितप्रचारं परगृहदूषणनिश्चितैकवीरम्।

घनपटलतमोनिरुद्धतारा रजनिरियं जननीव संवृणोति।।10।।

अन्वयः – घनपटलतमोनिरुद्धतारा, इयम्, रजनी, जननी, इव, नृपतिपुरुषशंक्तिप्रचारम्ः परगृहदूषण – निश्चितैकवीरम्, (माम्) संवृणोति।10।

अर्थ – बादलों के समूह की भाँति गाढ़े अँधेरे से तारों को ढकने वाली यह रात राजा के सिपाही जिसके आने–जाने को शंका की निगाह से देखते हैं, तथा जो दूसरे के घरों में सेंध लगाने में माना हुआ सबसे बड़ा वीर है। ऐसे मुझको ढक रही है। (अँधेरी रात चोरों को छिपाकर उसी प्रकार उनकी रक्षा करती है, जैसे माता अपने बालक की)।

कामं नीचमिदं वदन्तु पुरुषाः स्वप्ने च यद्वर्धते

विश्वस्तेषु च वंचनापरिभवश्चौर्यं न शौर्यं हि तत्।

स्वाधीना वचनीयतापि हि वरं बद्धो न सेवांजलि

र्मार्गो ह्येष नरेन्द्रसौप्तिकवधे पूर्वं कृतो द्रौणिना।।11।।

अन्वयः — यत्, स्वप्ने, वर्धते, विश्वस्तेषु, वंचनापरिभवः, च, हि, तत् चौर्यम्, न, (अतः), पुरुषाः, इदम्, कामम्, नीचम्, वदन्तु, स्वाधीना, वचनीयता, अपि, हि, वरम्, बद्धः, सेवांजलिः, न, हि, एषः, मार्गः, पूर्वम्, द्रौणिना, नरेन्द्रसौप्तिकवधे, कृतः।11।

अर्थ — अरे ! जो मनुष्यों के सो जाने पर होती है तथा जिसमें विश्वास के साथ सोये हुए लोगों के धन का छिनना रूप अपमान होता है वह चोरी है, शूरता नहीं। (अतः) मनुष्य लोग उस चोरी को भले ही अधम कहें किन्तु फिर भी मेरा तो यही मत है कि किसी के भी अधीन न होने के कारण यह चोरी रूप निन्दित काम भी अच्छा है। किसी की सेवा में हाथ जोड़ना अच्छा नहीं। और यह रास्ता तो पहले ही राजा पाण्डव के सोये हुए पुत्रों की हत्या में 'द्रोणाचार्य' के पुत्र अश्वत्थामा ने दिखा दिया है।

देशः को नु जलावसेकशिथिलो यस्मिन्न शब्दो भवे—

द्भित्तीनां च न दर्शनान्तरगतः संधिः करालो भवेत्।

क्षारक्षीणतया च लोष्टककृशं जीर्णं क्व हर्म्यं भवे—

त्कस्मिन्स्त्रीजनदर्शनं च न भवेत्स्यादर्थसिद्धिश्च मे।।12।।

अन्वयः — कः, नु, भित्तीनाम्, देशः, जलावसेकशिथिलः, भवेत्, यस्मिन्, शब्दः, न, भवेत्, सन्धिः, च, करालः, भवेत, न, च, दर्शनान्तरगतः, क्व, च, हर्म्यम्, क्षारक्षीणतया, लोष्टककृशम्, जीर्णम्, च, भवेत, कस्मिन्, स्त्रीजनदर्शनम्, च, न, भवेत्, मे, अर्थसिद्धिः, च, स्यात्।12।

अर्थ — हमेशा पानी पड़ने से गीला अतः कमजोर हुआ दीवारों का कौन सा ऐसा स्थान होगा, जिसमें सेंध लगाते समय आवाज न हो, सेंध बड़ी हो, किन्तु दिखलायी न पड़े और कहाँ की दीवार क्षार लग जाने से पतली हो जाने के कारण कम ईंटों वाली एवं जर्जर होगी ? किस जगह सेंध करने से स्त्रियों का सामना न होगा और मेरे चोरी के काम में सफलता भी मिलेगी।

पद्ममव्याकोशं भास्करं बालचन्द्रं

वापी विस्तीर्णं स्वस्तिकं पूर्णकुम्भम्।

तत्कस्मिन्देशे दर्शयाम्यात्मशिल्पं

दृष्ट्वा श्वो यं यद्विस्मयं यान्ति पौराः।।13।।

अन्वयः — पद्मव्याकोशम्, भास्करम्, बालचन्द्रम्, वापी, विस्तीर्णम्, स्वस्तिकम्, पूर्णकुम्भम्, (एते, सप्त, सन्धिप्रकाराः, सन्ति,), तत्, कस्मिन्, देशे आत्मशिल्पम्, दर्शयामि, यत्, यम्, दृष्टवा, श्वः, पौराः, विस्मयम्, यान्ति।13।

अर्थ — खिले हुए कमल, सूर्य (गोल), द्वितीया के चन्द्रमा (अर्द्धचन्द्राकार) बावड़ी, विस्तृत, स्वस्तिक (इस प्रकार के चिह्न वाला), पूर्ण घड़ा (ये सात सेंध के प्रकार हैं) तो किस जगह अपनी (सेंध फोड़ने की) चतुराई दिखालाऊँ ? जिसे सबेरे नगरी के लोग आश्चर्य चकित हो जायँ।

अन्यासु भित्तिषु मया निशि पाटितासु

क्षारक्षतासु विषमासु च कल्पनासु।

दृष्ट्वा प्रभातसमये प्रतिवेशिवर्गो

दोषांश्च मे वदति कर्मणि कौशलं च।।14।।

अन्वयः – निशि, अन्यासु क्षारक्षतासु, भित्तिसु, कल्पनासु, मया, पाटितासु, प्रभातसमये, प्रतिवेशिवर्गः, दृष्ट्वा, मे, दोषान्, कर्मणि, कौशलम्, च, वदति।14।

अर्थ – रात के समय दूसरी, क्षार से कटी हुई दीवारों के, विचित्र सूझ–बूझ के साथ मेरे द्वारा, फोड़ी जाने पर प्रातःकाल पड़ोसी लोग सेंध को देखकर मेरे दोष एवं सेंध बनाने के काम की चतुराई को कहेंगे।

अनया हि समालब्धं न मां द्रक्ष्यन्ति रक्षिणः।

शस्त्रं च पतितं गात्रे रुजं नोत्पादयिष्यति।।15।।

अन्वयः – अनया, समालब्धम्, माम्, रक्षिणः, हि, न, द्रक्ष्यन्ति, (तथा) गात्रे, पतितम्, शस्त्रम्, च, रुजम्, न, उत्पादयिष्यति।।15।

अर्थ – वरदानी 'कुमार कार्तिकेय' को नमस्कार है। 'कनकशक्ति' 'ब्रह्मण्यदेव' एवं देवव्रत' के लिए नमस्कार है, जिनका मैं पहला शिष्ट हूँ। मेरे ऊपर खुश हुए उन्होंने योगरोचना (एक ऐसा मलहम जिसके लगा लेने से मनुष्य दिखलायी नहीं पड़ता और न तो शस्त्र आदि के मारने से चोट ही लगती है) मुझे दी है।

(शरीर में) इस के लेपन कर लेने पर मुझको सिपाही नहीं देख सकेंगे और शरीर पर पड़ा हुआ शस्त्र पीड़ा नहीं उत्पन्न करेगा।

एतेन मापयति भित्तिषु कर्ममार्ग–

मेतेन मोचयति भूषणसंप्रयोगान्।

उद्घाटनं भवति यन्त्रदृढे कपाटे

दृष्टस्य कीटभुजगैः परिवेष्टनं च।।16।।

अन्वयः – (मादृशः, चौरः) एतेन, भित्तिषु, कर्ममार्गम्, मापयति, एतेन, भूषणसम्प्रयोगान्, मोचयति, यन्त्रदृढे, कपाटे, (एतेन), उद्घाटनम्, भवति, कीटभुजगैः, दृष्टस्य, परिवेष्टनम्, च (भवति)।16।

अर्थ – (चोर) इससे दीवारों में सेंध नापता है। इससे पहने गये जेवरों के जोड़ खोलता है। इससे किल्ली से कस कर बन्द की गयी किवाड़ खोली जाती है। विषैले कीड़ों तथा सर्पों के द्वारा काट खाये गये व्यक्ति के लिये यह बन्धन हो जाती है। (जिस जगह सर्प आदि काटते हैं, उसके ऊपर कस कर बाँध देने से विष का दौर दूसरे अंगों में नहीं होता है।)।

शिखा प्रदीपस्य सुवर्णपिंजरा महीतले संधिमुखेन निर्गता।

विभाति पर्यन्ततमः समावृता सुवर्णरेखेव कषे निवेशिता।।17।।

अन्वयः – सुवर्णपिंजरा, सन्धिमुखेन, महीतले, निर्गता, पर्यन्ततमः, प्रदीपस्य, शिखा कषे निवेशिता, सुवर्णरेखा, इव, विभाति।17।

अर्थ – सोना जैसी पीली, सेंध के छेद से बाहर जमीन पर निकली हुई, चारों ओर अँधेरे से घिरी हुई दीपक की लौ ऐसी शोभित हो रही है जैसी कसौटी पर खींची गई सोने की रेखा।

निःश्वासोऽस्य न शंकितः सुविशदस्तुल्यान्तरं वर्तते।

दृष्टिर्गाढनिमीलिता न विकला नाभ्यन्तरे चंचला।

गात्रं स्रस्तशरीरसंधिशिथिलं शय्याप्रमाणधिकं

दीपं चापि न मर्षयेदभिमुखं स्याल्लक्ष्यसुप्तं यदि।।18।।

अन्वयः — अस्य, निःश्वास, शंकितः, न, (अपि तु), सुविशदः, तुल्यान्तरम्, वर्तते, दृष्टिः, गाढनिमीलिता (अस्ति, सा), न, विकला, अभ्यन्तरे, न, चंचला, (वर्तते), स्रस्तशरीरसंधि— शिथिलम् (च, वर्तते), यदि, लक्ष्यसुप्तम्, स्यात्, (तदा), अभिमुखम्, दीपम्, च, अपि, न, मर्षयेत्।18।

अर्थ — सोये हुए इन दोनों की साँस शंका युक्त नहीं है अर्थात् स्वाभाविक रीति से चल रही है। उनकी यह साँस स्पष्ट तथा समान अन्तर वाली अर्थात् एक रूप से चलने वाली है। आँख भली—भाँति बन्द है। वह आँख न तो बेचैन है औ न पुतली ही चंचल है। देह के जोड़ों के ढीली होने के कारण शरीर शिथिल तथा खाट के आकार से अधिक है अर्थात् गाढ़ी नींद के कारण शरीर के अंग खाट के नीचे भी लटक रहे हैं। यदि ये छल से सोये होते तो सामने दीपक के प्रकाश को भी नहीं सहन करते अर्थात् दीपक के प्रकाश से इनकी आँखें चौंधिया जाती।

धिगस्तु खलु दारिद्र्यमनिर्वेदितपौरुषम्।

यदेतद्गर्हितं कर्म निन्दामि च करोमि च।।19।।

अन्वयः — अनिर्वेदितपौरुषम्, दारिद्यम् खलु, धिक्, अस्तु, यत्, एतत्, गर्हितम्, कर्म, निन्दामि, च, करोमि च।19।

अर्थ — जिसमें आदमी का पुरुषार्थ कुछ भी नहीं कर पाता। ऐसे गरीबी को धिक्कार है। जिसके कारण इस निन्दनीय काम की निन्दा कर रहा हूँ और फिर भी कर रहा हूँ। अर्थात् गरीबी कठिन होती है। इसी के कारण मैं चोरी को बुरा काम समझते हुए भी कर रहा हूँ।

मार्जारः क्रमणे, मृगः प्रसरणे, श्येनो ग्रहालुंचने,

सुप्तासुप्तमनुष्यवीर्यतुलने श्वा सर्पणे पन्नगः

माया रूपशरीरवेशरचने वाग्देशभाषान्तरे

दीपो रात्रिषु, संकटेषु डुडुमो वाजी स्थले, नौर्जले।।20।।

अन्वयः — ('यः अहम्') क्रमणे, मार्जारः, प्रसरणे, मृगः, ग्रहालुंचने, श्येनः, सुप्तासुप्तमनुष्य— वीर्यतुलने, श्वाः, सर्पणे, पन्नगः, रूपशरीरवेशरचने, मायाः, देशभाषान्तरे, वाक्ः, रात्रिषु, दीपः, संकटेषु डुडुमः, स्थले, वाजी, जले, नौ (अस्मि)।20।

अर्थ — झपटने अथवा उछलने में बिलाव, जल्द भाग निकलने में हरिण, झपट कर पकड़ने और छीनने में बाज, सोये हुए एवं बिना सोये हुए मनुष्य का बल जाँचने में कुत्ता, सरकने में साँप, विचित्र आकार, शरीर एवं वेश बनाने में माया, अनेक देशों की भाषा बोलने में (साक्षात्) सरस्वती, रातों में दीपक, संकट के समय भेड़िया, जमीन पर घोड़ा और जल में नौका (की तरह हूँ) अर्थात् किसी भी हालत में मुझे कोई पकड़ नहीं सकता।

भुजग इव गतौ गिरिः स्थिरत्वे पतगपतेः परिसर्पणे च तुल्यः।

शश इव भुवनावलोकनेऽहं वृक इव च ग्रहणे बले च सिंहः।।21।।

अन्वयः — अहम्, गतौ, भुजगः, इव, स्थिरत्वे, गिरिः, परिसर्पणे, पतगपतेः, तुल्यः, भुवनावलोकने, शशः, इव, ग्रहणे, वृकः, इव, बले, च, सिंहः, (अस्मि) ।21।

अर्थ — मैं चाल में साँप के समान, स्थिरता में पर्वत एवं जल्दी चलने में पक्षियों के राजा गरुड़ के तुल्य, संसार को देखने में खरगोश जैसा पकड़ने में भेड़िया की भाँति एवं बल में सिंह के तुल्य हूँ।

उपरितलनिपातितेष्टकोऽयं शिरसि तनुर्विपुलश्च मध्यदेशे।

असदृशजनसंप्रयोगभीरो–र्हृदयमिव स्फुटितं महागृहस्य।।22।।

अन्वयः — उपरितलनिपातितेष्टकः, शिरसि, तनुः, मध्यदेशे, विपुलः, च, अयम्, (सन्धिः), असदृशजनसम्प्रयोगभीरोः, महागृहस्य, स्फुटितम्, हृदयम्, इव (दृश्यते) ।22।

अर्थ — जिसमें ऊपर के हिस्से से खींचकर ईंटें हटाई गई हैं, जो ऊपरी हिस्से में सँकरी और बीच के स्थान में चौड़ी है अर्थात् जो घड़े के आकार वाली है ऐसी यह सेंध, अयोग्य मनुष्य के घुसने से डरे हुए इस विशाल घर के फटे हुए कलेजा के समान दिखाई पड़ती है।

वैदेश्येन कृतो भवेन्मम गृहे व्यापारमभ्यस्यता

नासौ वेदितवान् धनैर्विरहितं विस्रब्धसुप्तं जनम्।

दृष्ट्वा प्रांमहतीं निवासरचनामस्माकमाशान्वितः

सन्धिच्छेदनखिन्न एव सुचिरं पश्चान्निराशो गतः।।23।।

अन्वयः — वैदेश्येन, व्यापारम्, अभ्यस्यता, मम, गृहे, (सन्धिः) कृतः, भवेत्, असौ, धनैः, विरहितम्, विश्रब्धसुप्तम्, जनम्, न, वेदितवान्, प्राक्, महतीम्, अस्माकम्, निवासरचनाम्, दृष्टवाआशान्वितः, सुचिरम्, सन्धिच्छेदनखिन्नः, पश्चात्, निराशः, एव, गतः ।23।

अर्थ — चारुदत्त — चाहे नये नये आये हुए किसी परदेशी ने अथवा चोरी सीखने वाले किसी पुरुष ने मेरे घर में यह सेंध लगायी हो। (परन्तु) वह, गरीब अतः निश्चिन्त सोये हुए जन (हम दोनों) को नहीं जान पाया (अर्थात् हमारी हालत उसे नहीं मालूम थी)। हमारे इस मकान की भारी बनावट को देखकर पहले वह आशा करके देर तक सेंध फोड़ने के कारण परेशान हुआ (और) बाद में निराश ही चला गया (अर्थात् बेचारा कितनी आशा से मेहनत करके घुसा, परन्तु एक कौड़ी भी हाथ नहीं लगी)।

कः श्रद्धास्यति भूतार्थं सर्वो मां तुलयिष्यति।

शंकनीया हि लोकेऽस्मिन्निष्प्रतापा दरिद्रता।।24।।

अन्वयः — कः, भूतार्थम्, श्रद्धास्यति, सर्वः, माम्, तुलयिष्यति, हि, अस्मिन्, लोके, निष्प्रतापा, दरिद्रता, शंकनीया, (भवति) ।24।

अर्थ — चारुदत्त — (धीरज धारण करके) मित्र।

कौन सच्ची बात पर विश्वास करेगा ? सब मुझ पर ही सन्देह करेंगे। क्योंकि इस संसार में तेजहीन दरिद्रता सन्देह का कारण होती है अर्थात् लोग गरीब को ही दोषी ठहराते हैं। हाय बड़ा दुःख है।

यदि तावत्कृतान्तेन प्रणयोऽर्थेषु मे कृतः।

किमिदानीं नृशंसेन चारित्रमपि दूषितम्।।25।।

अन्वयः – यदि, तावत्, कृतान्तेन, मे, अर्थेषु, प्रणयः, कृतः, (तर्हि), नृशंसेन, इदानीम्, चारित्रम्, अपि, किम्, दूषितम् ।25।

अर्थ – यदि भाग्य ने मेरा धन दीन लिया तो क्यों उस निष्ठुर ने अब मेरे चरित्र पर भी धब्बा लगा दिया ?

भैक्ष्येणाप्यर्जयिष्यामि पुनर्न्यासप्रतिक्रियाम्।

अनृतं नाभिधास्यामि चारित्रभ्रंशकारणम्।।26।।

अन्वयः – भैक्ष्येण, अपि, न्यासप्रतिक्रियाम्, पुनः, अर्जयिष्यामि, चारित्रभ्रंशकारणम्, अनृतम्, न, अभिधास्यामि ।26।

अर्थ – (मैं) भीख माँगकर भी धरोहर लौटाऊँगा। किन्तु चरित को बिगाड़ देने वाले झूठ को नहीं बोलूँगा।

आत्मभाग्यक्षतद्रव्यः स्त्रीद्रव्येणानुकम्पितः।

अर्थतः पुरुषो नारी या नारी साऽर्थतः पुमान्।।27।।

अन्वयः – आत्मभाग्यक्षतद्रव्यः, स्त्रीद्रव्येण, अनुकम्पितः, पुरुषः, अर्थतः, नारी, (भवति, तथा) या, नारी, सा, अर्थतः, पुमान् (भवति) ।27।

अर्थ – चारुदत्त :– क्या ब्राह्मणी (मेरी स्त्री) मुझ पर दया कर रही है ? हाय ! इस समय में दरिद्र हो गया हूँ।

विभवानुगता भार्या सुखदुःखसुहृदभवान्।

सत्यं च न परिभ्रष्टं यद्दरिद्रेषु दुर्लभम्।।28।।

अन्वयः – (यस्य मम) स्त्री, विभवानुगता, भवान्, सुखदुःखसुहृत्, सत्यम्, च, न, परिभ्रष्टम्, यत्, दरिद्रेषु, दुर्लभम् ।28।

अर्थ – अथवा मैं दरिद्र नहीं हूँ। जिस मेरी – पत्नी धन के अनुसार चलने वाली है अर्थात् कम अथवा अधिक धन के अनुसार घर के खर्च का प्रबन्ध करने वाली पत्नी है। आप सुख तथा दुख में एक भाव से साथ देने वाले मित्र हैं। और सच बोलना भी नहीं छूटा है – जो कि (ये दोनों बातें) निर्धनों के पास बड़ी मुश्किल से मिलती हैं।

यं समालम्ब्य विश्वासं न्यासोऽस्मासु तया कृतः।

तस्यैतन्महतो मूल्यं प्रत्ययस्यैव दीयते।।29।।

अन्वयः – तया, यम्, विश्वासम्, समालम्ब्य, अस्मासु, न्यासः, कृतः, तस्य, महतः, प्रत्ययस्य, एव, एतत्, मूल्यम्, प्रदीयते ।29।

अर्थ – चारुदत्त – मित्र ! ऐसा मत (कहो)

उस वसन्तसेना ने जिस विश्वास के सहारे हमारे पास धरोहर रखी है, उस बहुत बड़े विश्वास की ही यह कीमत दी जा रही है (न की उस सोने के भाण्ड की)।

एताभिरिष्टिकाभिः संधिः क्रियतां सुसंहृतः शीघ्रम्।

परिवादबहलदोषान्न यस्य रक्षां परिहरामि।।30।।

अन्वयः – एताभिः, इष्टिकाभिः, सन्धिः, शीघ्रम्, सुसंहतः, क्रियताम्, परिवादबहलदोषात्, यस्य, रक्षाम्, न, परिहरामि ।30।

अर्थ – वर्धमानक ! इन ईंटों से इस सेंध को जल्द ही अच्छी तरह भर दो। लोगों में फैलने वाले अपयश में महान् दोष होने के कारण जिस सेंध की मरम्मत की उपेक्षा नहीं करूँगा अर्थात् यदि यह सेंध इसी प्रकार फूटी रहेगी तो जनता में मेरे बारे में अनेक तरह की बुरी बातें फैलेंगी।

चतुर्थोऽङ्कः

दत्त्वा निशाया वचनीयदोषं निद्रां च जित्वा नृपतेश्च रक्ष्यान्।

स एष सूर्योदयमन्दरश्मिः क्षपाक्षयाच्चन्द्र इवास्मि जातः।।1।।

अन्वयः – निशायाः, वचनीयदोषम्, दत्त्वा, निद्राम्, च, नृपतेः, रक्ष्यान्, च, जित्वा, सः, एषः, (अहम्), क्षपाक्षयात्, सूर्योदयमन्दरश्मिः, चन्द्रः, इव, जातः, अस्मि।1।

अर्थ – शर्विलक – रात्रि को निन्दा का दोष देकर अर्थात् 'रात में ही चोरी जैसे खराब काम होते हैं। इस प्रकार का दोष लगाकर नींद तथा राजा के पहरेदारों को जीत कर, यह मैं रात के बीत जाने पर सूर्योदय के कारण मन्द तेजवाले चन्द्रमा के समान हो गया हूँ।

यः कश्चित्त्वरितगतिर्निरीक्षते मां

संभ्रान्तं द्रुतमुपसर्पति स्थितं वा।

तं सर्वं तुलयति दूषितोऽन्तरात्मा

स्वैर्दोषैर्भवति हि शंकितो मनुष्यः।।2।।

अन्वयः – यः, कश्चित्, त्वरितगतिः, (सन्), संभ्रान्तम्, माम्, निरीक्षते, वा, स्थितम्, (माम्), द्रुतम्, उपसर्पतिः, दूषितः, अन्तरात्मा, तम्, सर्वम्, तुलयति, हि, मनुष्यः, स्वैः, दोषैः, शंकितः, भवति।2।

अर्थ – जल्दी–जल्दी चलने वाला जो कोई मनुष्य मुझ भयभीत को देखता है, अथवा खड़े हुए मेरे पास वेग से आता है, दोषी मेरी अन्तःकरण उन सब को सन्देह के साथ देखने लगता है अर्थात् यह सोचता है कि मुझे पकड़ने के लिये तो नहीं आ रहे हैं ? सचमुच मनुष्य अपने दोषों के कारण (ही) शंका करता है।

परिजनकथासक्तः कश्चिन्नरः समुपेक्षितः

क्वचिदपि गृहं नारीनाथं निरीक्ष्य विवर्जितम्।

नरपतिबले पार्श्वायाते स्थितं गृहदारुवद्–

व्यवसितशतैरेवंप्रायैर्निशा दिवसीकृता।।3।।

अन्वयः – (मया), परिजनकथासक्तः, कश्चित्, नरः, समुपेक्षितः, क्वचित्, अपि, गृहम्, नारीनाथम्, निरीक्ष्य, विवर्जितम्, नरपतिबले, पार्श्वायाते, गृहदारुवत्, स्थितम्, एवंप्रायैः, व्यवसितशतैः, निशा, दिवसीकृता।3।

अर्थ – परिवार के साथ बात करने में लगे हुए किसी पुरुष की उपेक्षा कर दी अर्थात् उसके घर में नहीं घुसा। और किसी घर को इसलिए भी छोड़ दिया कि उस घर में केवल स्त्रियाँ ही थीं। यदि राजा के पहरेदार बगल में आ गए तो घर में लगे हुए काठ के खम्भे के समान चुपचाप खड़ा हो गया। इस प्रकार के सैकड़ों कार्यों से मैंने रात को दिन बना दिया अर्थात् रात जागते ही जागते एवं काम करते करते बिता दी।

मदनमपि गुणैर्विशेषयन्ती रतिरिव मूर्तिमती विभाति येयम्।

मम हृदयमनंगवह्नितप्तं भृशमिव चन्दनशीतलं करोति।।4।।

अन्वयः – या, इयम्, गुणैः, मदनम्, अपि, विशेषयन्ती, मूर्तिमती, रतिः, इव, विभाति, (सा), अनंगवह्नितप्तम्, मम, हृदयम्, भृशम्, चन्दनशीतलम्, इव, करोति।4।

अर्थ – शर्विलक – (देख कर) अरे ! यह मदनिका !

जो यह मदनिका (चित्त को उन्मत्त बना देने वाले) गुणों के द्वारा कामदेव को भी अतिक्रमित करती हुई, शरीर को धारण करने वाली कामदेव की स्त्री रति के समान सुशोभित हो रही है। वह कामाग्नि से झुलसे हुए मेरे हृदय को चन्दन की भाँति अत्यधिक शीतल कर रही है।

दारिद्र्येणाभिभूतेन त्वत्स्नेहानुगतेन च।

अद्य रात्रौ मया भीरु ! त्वदर्थे साहसं कृतम्।।5।।

अन्वयः – हे भीरु ! दारिद्र्येण, अभिभूतेन, च, त्वत्स्नेहानुगतेन, मया, अद्य, रात्रौ, त्वदर्थे, साहसम्, कृतम्।5।

अर्थ – शर्विलक – हे डरने वाली स्त्री ! गरीबी से परेशान एवं तुम्हारे प्रेम में फँसे हुए मैंने आज रात में तुम्हारे लिए अर्थात् तुमको छुड़ाने के लिये चोरी की है।

नो मुष्णान्यबलां विभूषणवतीं फुल्लामिवाहं लतां

विप्रस्वं न हरामि कांचनमथो यज्ञार्थमभ्युद्धृतम्।

धात्र्युत्संगतं हरामि न तथा बालं धनार्थी क्वचि

त्कार्याकार्यविचारिणी मम मतिश्चौर्येऽपि नित्यं स्थिता।।6।।

अन्वयः – धनार्थी, अहम्, फुल्लाम्, लताम्, इव, विभूषणवतीम्, अबलाम्, नो, मुष्णामि, विप्रस्वम्, अथो, यज्ञार्थम्, अभ्युद्धृतम्, कांचनम्, न, हरामि, तथा क्वचित्, धात्र्युत्संगतम्, बालम्, न हरामि, चौर्ये, अपि, मम, मतिः, नित्यम्, कार्याकार्यविचारिणी, (सती), स्थिताः।6।

अर्थ – शर्विलक – धन को चाहने वाला मैं, फूली हुई लता के समान आभूषणों से सजी हुई स्त्री को नहीं लूटता हूँ। ब्राह्मण के धन एवं यज्ञ के लिये निकाल कर रखे हुए सोना को भी नहीं चुराता हूँ। और मैं कहीं धाय की गोद में स्थित बच्चे को भी छीनकर नहीं ले जाता हूँ। चोरी में भी मेरी बुद्धि हमेशा उचित और अनुचित का विचार करती है।

अयं तव शरीरस्य प्रमाणादिव निर्मितः।

अप्रकाशो ह्यलंकारो मत्स्नेहाद्धार्यतामिति।।7।

अन्वयः – अयम्, अलंकारः, तव, शरीरस्य, प्रमाणात्, इव, निर्मितः (अस्ति, तथा), अप्रकाशः, (अस्ति), हि, मत्स्नेहात्, धार्यताम्, इति।7।

अर्थ – यह आभूषण मानों तुम्हारे शरीर की ही नाप से बनाया गया है। यह (दूसरों को) दिखाने के लायक भी नहीं है। मेरे ऊपर प्रेम करके (आप) इसे ले लें।

विषादस्रस्तसर्वांगी संभ्रमभ्रान्तलोचना।

नीयमानाऽभुजिष्यात्वं कम्पसे नानुकम्पसे।।8।।

अन्वयः – विषादस्रस्तसर्वांगी, संभ्रमभ्रान्तलोचना, कम्पसे, अभुजिष्यात्वम् नीयमाना, (अपि, किम्, मयि), न अनुकम्पसे।8।

अर्थ – शर्विलक – मदनिका ! धीरज धरो। इस समय तुम क्यों – दुःख से शिथिल सब अंगों वाली, घबराहट से चंचल आँखों वाली काँप रही हो ? दासीपन से छुड़ाई जाती हुई (भी तुम मेरे ऊपर) कृपा क्यों नहीं कर रही हो ?

त्वत्स्नेहबद्धहृदयो हि करोम्यकार्यं

सद्वृत्तपूर्वपुरुषेऽपि कुले प्रसूतः।

रक्षामि मन्यथविपन्नगुणोऽपि मानं

मित्रं च मां व्यपदिशस्यपरं च यासि।।9।।

अन्वयः – सद्वृत्तपूर्वपुरुषे, कुले, प्रसूतः, अपि, (अहम्) त्वत्नेहबद्धहृदयः, (सन्), हि, अकार्यम्, करोमि, मन्मथविपन्नगुणः, (सन्), अपि, मानम्, रक्षामि, (किन्तु, त्वम्) माम्, मित्रम्, व्यपदिशसि, च, अपरम्, च, यासि।9।

अर्थ – शर्विलक – (ईर्ष्या के साथ) मदनिका ! क्या प्रिय हुआ ?

सदाचारी पुरखों के कुल में पैदा हुआ भी मैं तेरे प्रेम के अधीन होकर ऐसा कुकर्म करता हूँ अर्थात् चोरी करता हूँ। कामदेव के प्रभाव के कारण गुणहीन होकर भी सम्मान की रक्षा करता हूँ। (इतने पर भी तू ऊपर से तो) मुझको अपना मित्र बतलाती है, और दूसरे (प्रेमी) के पीछे जाती है अर्थात् हृदय से किसी और को चाहती है।

इह सर्वस्वफलिनः कुलपुत्रमहाद्रुमाः।

निष्फलत्वमलं यान्ति वेश्याविहगभक्षिताः।।10।।

अन्वयः – इह, सर्वस्वफलिनः, कुलपुत्रमहाद्रुमाः, वेश्याविहगभक्षिताः, अलम्, निष्फलत्वम्, यान्ति।10।

अर्थ – इस संसार में अपना सारा धन ही जिनका फल है ऐसे कुलीन पुत्र रूपी बड़े पेड़ वेश्या रूपी चिड़ियों के द्वारा खाये जाकर एकदम निष्फल कर दिये जाते हैं। अर्थात् जिस प्रकार चिड़ियाँ फल खाकर पेड़ को फलहीन कर देती हैं, उसी प्रकार वेश्याएँ धन खाकर पुरुषों को गरीब कर देती हैं।

अयं च सुरतज्वालः कामाग्निः प्रणयेन्धनः।

नराणां यत्र हूयन्ते यौवनानि धनानि च।।11।।

अन्वयः – सुरतज्वालः, प्रणयेन्धनः, अयम्, कामाग्निः, (अस्ति), यत्र, नराणाम्, यौवनानि, धनानि, च, हूयन्ते।11।

अर्थ – सम्भोग जिसकी लपटें हैं, प्रेम जिसका ईंधन है, ऐसी कामवासना रूपी आग में मनुष्यों की जवानी और सम्पत्ति दोनों ही होम की जाती हैं।

अपण्डितास्ते पुरुषा मता मे ये

स्त्रीषु च श्रीषु च विश्वसन्ति।

श्रियो हि कुर्वन्ति तथैव नार्यो

भुजंगकन्यापरिसर्पणानि।।12।।

अन्वयः – ये, पुरुषाः स्त्रीषु, च, श्रीषु, च, विश्वसन्ति, ते, अपण्डिताः, मे, मताः, हिं, श्रियः, तथैव, नार्यः, भुजंगकन्यापरिसर्पणानि, कुर्वन्ति।12।

अर्थ – जो आदमी स्त्रियों एवं धन पर भरोसा रखते हैं, वे मुझे मूर्ख लगते हैं। सम्पत्ति तथा स्त्रियाँ नागिन के समान टेढ़ी चाल चला करती हैं।

स्त्रीषु न रागः कार्यो रक्तं पुरुषं स्त्रियः परिभवन्ति।

रक्तैव हि रन्तवया विरक्ताभावा तु हातव्या।।13।।

अन्वयः – स्त्रीषु, रागः, न कार्यः, स्त्रियः, रक्तम्, पुरुषम्, परिभवन्ति, हि, रक्ता, एव, रन्तव्या, विरक्तभावा, तु, हातव्या।13।

अर्थ – स्त्रियों पर प्रेम नहीं करना चाहिए। स्त्रियाँ अपने पर प्रेम करने वाले पुरुष को अपमानित करती हैं। प्रेम करने वाली स्त्री के साथ ही रमण करना चाहिए। और उदासीन (प्रेम न करने वाली स्त्री) को त्याग देना चाहिए। अर्थात् उससे प्रेम नहीं करना चाहिए।

एता हसन्ति च रुदन्ति च वित्तहेतो–

र्विश्वासयन्ति पुरुषं न तु विश्वसन्ति।

तस्मान्नरेण कुलशीलसमन्वितेन

वेश्याः श्मशानसुमना इव वर्जनीयाः।।14।।

अन्वयः – एताः, वित्तहेतोः, हसन्ति, च, रुदन्ति, च, पुरुषम्, विश्वासयन्ति, तु, न, विश्वसन्तिः, तस्मात्, कुलशीलसमन्वितेन, नरेण, श्मशानसुमनाः, इव, वेश्याः, वर्जनीयाः। ।14।

अर्थ – ये (व्यापारी स्त्रियाँ) धन के लिए हँसती और रोती हैं। पुरुष को विश्वास दिलाती हैं, किन्तु (स्वयं पुरुष का) विश्वास नहीं करती हैं। इसलिए अच्छे कुल एवं स्वभाव वाले पुरुष को चाहिए कि वह वेश्याओं को श्मशान भूमि के फूल के समान छोड़ दे।

समुद्रवीचीव चलस्वभावाः संध्याभ्रलेखेव मुहूर्तरागाः।

स्त्रियो हृतार्थाः पुरुषं निरर्थं निष्पीडितालक्तकवत्त्यजन्ति।।15।।

अन्वयः – समुद्रवीची इव, चलस्वभावाः, सन्ध्याभ्रलेखा, इव, मुहूर्तरागाः, स्त्रियः, हृतार्थाः, (सत्यः), निरर्थम्, पुरुषं, निष्पीडितालक्तकवत्, त्यजन्ति।15।

अर्थ – सागर की लहरों के समान चंचल स्वभाव वाली, सायंकालीन बादलों की रेखा के समान क्षण भर के लिए राग (बादलों के पक्ष में–लालिमा एवं स्त्रियों के पक्ष में – प्रेम) वाली स्त्रियाँ (वेश्यायें) धन लेकर के (बाद में) निर्धन हुए मनुष्य को, निचोड़े गये महावर (अलक्तक) के समान, छोड़ देती हैं।

अन्यं मनुष्यं हृदयेन कृत्वा अन्यं ततो दृष्टिभिराह्वयन्ति।

अन्यत्र मुंचन्ति मदप्रसेकमन्यं शरीरेण च कामयन्ते।।16।।

अन्वयः – (स्त्रियः), हृदयेन, अन्यम् मनुष्यम्, कृत्वा, ततः, अन्यम् दृष्टिभिः, आह्वयन्ति, अन्यत्र, मदप्रसेकम्, मुंचन्ति, शरीरेण, अन्यम्, च, कामयन्ते।16।

अर्थ – अपने हृदय में दूसरे पुरुष को रखकर उससे किसी दूसरे पुरुष को आँख के इशारों से बुलाती हैं। उससे भी दूसरे पुरुष पर मदिरा का कुल्ला करती हैं और अपनी शरीर से (उससे भी किसी) अन्य पुरुष को चाहती हैं अर्थात् आलिंगन करती हैं।

न पर्वताग्रे नलिनी प्ररोहति

न गर्दभा वाजिधुरं वहन्ति।

यवाः प्रकीर्णा न भवन्ति शालयो

न वेशजाताः शुचयस्तथांगनाः।।17।।

अन्वयः – पर्वताग्रे, नलिनी, न, प्ररोहति, गर्दभाः, वाजिधुरम्, न, वहन्ति, प्रकीर्णाः, यवाः, शालयः, न, भवति, तथा, वेशजाताः, अंगनाः, शुचयः, न, (भवन्ति)।17।

अर्थ – पहाड़ की चोटी पर कमललता नहीं उगती है। गधे घोड़े के भार को नहीं ढोते हैं। (खेत में) बोए हुए जौ धान नहीं हो जाते हैं। इसी प्रकार वेश्या के घर में पैदा हुई स्त्रियाँ पवित्र नहीं होती है।

छायार्थं ग्रीष्मसंतप्तो यामेवाहं समाश्रितः।

अजानता मया सैव पत्रैः शाखा वियोजिता।।18।।

अन्वयः – ग्रीष्मसन्तप्तः, अहम्, छायार्थम्, याम्, एव, समाश्रित, अजानता, मया, सा, एव, शाखा, पत्रैः, वियोजिता।18।

अर्थ – गर्मी से परेशान हुए मैंने छाँह के लिए जिस डाली का आश्रय लिया, उसी को अनजाने में मैंने ही पत्तों से हीन बना दिया। अर्थात् अपनी कामाग्नि से परेशान होकर मैं जिस 'वसन्तसेना' से 'मदनिका' को छुड़ाना चाहा उसी 'वसन्तसेना' का आभूषण चुराया। वास्तव में यह भूल हो गयी।

स्त्रियो हि नाम खल्वेता निसर्गादेव पण्डिताः।

पुरुषाणां तु पाण्डित्यं शास्त्रैरेवोपरिदश्यते।।19।।

अन्वयः – वास्तव में, ये स्त्रियाँ जन्म से ही चतुर होती हैं। पुरुषों की चतुरता तो शास्त्रों के द्वारा ही सिखाई गई होती है अर्थात् शास्त्र पढ़ने के बाद ही पुरुष चतुर होते हैं।19।

न खलु मम विषादः साहसेऽस्मिन्भयं वा

कथयसि हि किमर्थं तस्य साधोर्गुणांस्त्वम् ?।

जनयति मम वेदं कुत्सितं कर्म लज्जां

नृपतिरिह शठानां मादृशां किं नु कुर्यात् ?।।20।।

अन्वयः – अस्मिन्, साहसे, मम, विषादः, वा, भयम्, न, खलुः, (अस्ति), त्वम्, तस्य, साधोः, गुणान्, किमर्थं, कथयसि ? हि, इदम्, कुत्सिम्, कर्म, वा, मम, लज्जाम्, जनयति, इह, नृपतिः, मादृशाम्, शठानाम्, किम्, नु, कुर्यात् ?।20।

अर्थ – शर्विलक – इस चोरी के काम में, सचमुच, मुझे न तो पछतावा ही है और न राजा के दण्ड आदि का डर ही। ऐसी हालत में तुम सज्जन उन आर्य 'चारुदत्त' के कृपा आदि गुणों की बात क्यों कह रही हो ? अरे ! मैंने तो चोरी रूप जिस बुरे काम को किया है, वहीं मुझे मेरी लज्जा उत्पन्न कर रहा है। नहीं तो इस विषय में राजा हम जैसे धूर्तों का कर ही क्या सकता है ? अर्थात् कुछ नहीं कर सकता।

मयाप्ता महती बुद्धिर्भवतीमनुगच्छता।

निशायां नष्टचन्द्रायां दुर्लभो मार्गदर्शकः।।21।।

अन्वयः – भवतीम्, अनुगच्छता, मया, महती, बुद्धिः, आप्ता, नष्ट–चन्द्रायाम्, निशायाम्, मार्गदर्शकः, दुर्लभः (भवति)।21।

अर्थ – शर्विलक – तुम्हारे अनुसार चलकर मैंने बड़ी बुद्धि पाई है। जिस रात में चन्द्रमा डूब जाता है, उस रात में राह बतलाने वाला दुर्लभ होता है।

गुणेष्वेव हि कर्त्तव्यः प्रयत्नः पुरुषैः सदा।

गुणयुक्तो दरिद्रोऽपि नेश्वरैरगुणैः समः।।22।।

अन्वयः – पुरुषैः सदा, गुणेषु, एव, प्रयत्नः, कर्त्तव्यः, हि, गुायुक्तः, दरिद्रः, अपि, अगुणैः, ईश्वरैः, समः, न, (भवति)।22।

अर्थ – मनुष्यों को हमेशा अच्छे गुणों को पाने के लिए प्रयत्न करना चाहिए क्योंकि गुणवान् दरिद्र भी गुणहीन धनिकों के समान नहीं (बल्कि उनसे बढ़ कर है)।

गुणेषु यत्नः पुरुषेण कार्यो न किंचिद्प्राप्यतमं गुणानाम्।

गुणप्रकर्षादुडुपेन शंभोरलंघ्यमुल्लंघितमुत्तमांगम्।।23।।

अन्वयः – पुरुषेण, गुणेषु, यत्नः, कार्यः, गुणानां किंचित्, अपि, अप्राप्यतमं, न, (अस्ति), उडुपेन, गुणप्रकर्षात्, अलंघ्यम्, शम्भोः, उत्तमांगम्, लंघितम्।23।

अर्थ – मनुष्य को हमेशा अच्छे गुणों (दया, परोपकार आदि की प्राप्ति) में उपाय करना चाहिए। क्योंकि गुणों अर्थात् गुणी जनों के लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं है। ताराओं के राजा चन्द्रमा ने (अपनी शीतलता आदि) गुणों की महत्ता के कारण ही किसी भी प्राणी के द्वारा न लांघे जाने वाले भगवान् शिवजी के मस्तक को लांघ लिया अर्थात् मस्तक पर बैठ गये।

सुदृष्टः क्रियतामेव शिरसा वन्द्यतां जनः।

यत्र ते दुर्लभं प्राप्तं वधूशब्दावगुण्ठनम्।।24।।

अन्वयः – एषः, जनः, सुदृष्टः, क्रियताम्, (तथा), शिरसा, वन्द्यतां, यत्र, ते, दुर्लभं, वधूशब्दावगुण्ठनं, प्राप्तम्।24।

अर्थ – 'वसन्तसेना' को भली भांति देख लो और शिर झुका कर प्रणाम कर लो। जिन की कृपा से तुमने दुर्लभ बहु शब्द रूप घूँघट पाया है अर्थात् जिस 'वसन्तसेना' की कृपा से खुले रूप में रहने वाली तुम वेश्या से अब घूँघट में रहने वाली वधू हो गयी हो।

द्वयमिदमतीव लोके प्रियं नराणां सुहृच्च वनिता च।

संप्रति तु सुन्दरीणां शतादपि सुहृद्विशिष्टतमः।।25।।

अन्वयः – लोके, सुहृद, वनिता, च, इदं, द्वयं, नराणाम्, अतीव, प्रियं, तु, सम्प्रति, सुन्दरीणां, शतात्, अपि, सुहृद्, विशिष्टतमः (अस्ति)।25।

अर्थ – इस दुनियाँ में मित्र और स्त्री दोनों ही – मनुष्यों को बहुत प्रिय हैं। किन्तु इस समय (जबकि मित्र कारागर में है) सैंकड़ों सुन्दर स्त्रियों से भी मित्र बढ़कर हैं।

ज्ञातीन्विटान् स्वभुजविक्रमलब्धवर्णान्

राजापमानकुपिताश्च नरेन्द्रभृत्यान्।

उत्तेजयामि सुहृदः परिमोक्षणाय

यौगन्धरायण इवोदयनस्य राज्ञः।।26।।

अन्वयः – उदयनस्य, राज्ञः, यौगन्धरायणः, इव, सुहृदः, परिमोक्षणाय, ज्ञातीन्, विटान्, स्वभुजविक्रमलब्धवर्णान्, राजापमानकुपितान्, नरेन्द्रभृत्यान्, च, उत्तेजयामि।26।

अर्थ – उदयन नामक राजा को छुड़ाने के लिये मन्त्री यौगन्धराज की तरह मैं मित्र आर्यक को कारागार से छुड़ाने के लिये अपनी जाति के आदमियों, विटों, अपनी भुजाओं के पराक्रम से यश पाने वालों, राजा के द्वारा किये गये अपमान से गुस्साये हुए राजा के कर्मचारियों को उत्तेजित करता हूँ।

प्रियसुहृदमकारणे गृहीतं

रिपुभिरसाधुभिराहितात्मशंकैः।

सरभसमभिपत्य मोचयामि

स्थितमिव राहुमुखे शशांकबिम्बम्।।27।।

अन्वयः — अकारणे, आहितात्मशंकैः, असाधुभिः, रिपुभिः, गृहीतं, राहुमुखे शशांकबिम्बम्, इव, स्थितं, प्रियसुहृदं, सरभसम्, अभिपत्य, मोचयामि।27।

अर्थ — विना कारण के ही अपने मन में भय करने वाले, दुष्ट शत्रुओं के द्वारा पकड़ कर बन्द किये गये, अतएव राहु के मुँह में वर्तमान चन्द्रमा के मण्डल के समान प्रिय मित्र 'आर्यक' को अचानक हमला बोल कर छुड़ाता हूँ।

परगृहललिताः परान्नपुष्टाः परपुरुषैर्जनिताः परांगनासु।

परधननिरता गुणेष्ववाच्या गजकलभा इव बन्धुला ललमः।।28।।

अन्वयः — परगृहललिताः, परान्नपुष्टाः, परपुरुषैः, परांगनासु, जनिताः, परधननिरताः, गुणेषु, अवाच्याः, (वयं) बन्धुलाः, गजकलभाः, इव, ललामः।28।

अर्थ — बन्धुलोग — वास्तव में दूसरे के घर में प्रेमपूर्वक रहने वाले, दूसरों के दाने से पले हुए, दूसरे पुरुषों के द्वारा दूसरे की स्त्रियों में पैदा किये गये, पराये धन को आनंद से खाने वाले, गुणों से हीन (हम) बन्धुल लोग हाथियों के बच्चों के समान विहार करते हैं।

मा दाव जइ वि एसो उज्जलो

सिणिद्धो ल सुअंधो अ।

तह वि मसाणवीधीए जाटो विअ

चंपअरुक्खो अणहिगमणीओ लोअस्स।।29।।

मा तावद्यद्यप्येष उज्ज्वलः

स्निग्धश्च सुगन्धश्च।

तथापि श्मशानवीथ्यां जात इव

चम्पकवृक्षोऽनभिगमनीयो लोकस्य।।29।।

अन्वयः — मा, तावत्, यद्यपि, एषः, उज्जवलः, स्निग्धः, च, सुगन्धः, च, (अस्ति), तथापि, श्मशानवीथ्याम्, जातः, चम्पकवृक्षः, इव, लोकस्य, अनभिगमनीयः, (अस्ति)।29।

अर्थ — ऐसी बात नहीं है। यद्यपि यह सुघड़ तथा चिकना—चुपड़ा एवं सुगन्धित है। किन्तु फिर भी श्मशान की गली में उगे हुए चम्पा के पेड़ की तरह यह लोगों के लिये त्याज्य है।

सीधु सुरासवमत्तिअ एआवत्थं गदा हि अत्तिआ।

जइ मरइ एत्थ अत्तिआ भोदि सिआलसहस्सपज्जत्तिआ।।30।।

सीधुसुरासवमत्ता एवावदवस्थां गता हि माता।

यदि म्रियतेऽत्र माता भवति श्रृगालसहस्रपर्याप्तिका।।30।।

अन्वयः – सीधुसुरासवमत्ता, माता, एतावदवस्थाम्, गता, हि, यदि, अत्र, माता, म्रियते, (तु), श्रृगालसहस्रपर्याप्तिका, भवति ।30 ।

अर्थ – सीधु, सुरा एवं आसव (ये तीनों भिन्न–भिन्न मदिराओं के नाम है) से मतवाली (यह तुम लोगों की) माता इस हालत को प्राप्त हो गयी है। यदि इस समय यह माता मर जाती है तो हजारों सियारों की (पेट–) पूर्ति होगी।

एसो असोअवुच्छो णवणिग्गमकुसुमपल्लवो भादि।

सुभडो व्व समरमज्झे घणलोहिदपंकचच्चिक्को।।31।।

अन्वयः – नवनिर्गतकुसुमपल्लवः, एषः, अशोकवृक्षः, समरमध्ये, घनलोहितपंकचर्चिकः, सुभटः, इव, भाति ।31 ।

अर्थ – नये निकले हुए फूलों एवं पत्तों (कोपलों) वाला यह अशोक का पेड़, लड़ाई के मैदान में गाढ़े खून रूपी कीचड़ से लथपथ हुए वीर योद्धा की भाँति, शोभायमान हो रहा है।

गुणप्रवालं विनयप्रशाखं विश्रम्भमूलं महनीयपुष्पम्।

त साधुवृक्षं स्वगुणैः फलाढ्यं सुहृद्विहंगाः सुखमाश्रयन्ति ?।।32।।

अन्वयः – गुणप्रवालं, विनयप्रशाखं, विश्रम्भमूलं, महनीयपुष्पम्, स्वगुणैः, फलाढ्यं, तं, साधुवृक्षं, सुहृद्विहंगाः, सुखम्, आश्रयन्ति ? ।32 ।

अर्थ – वसन्तसेना – आर्य मैत्रेय ! क्या इस समय, जिसके गुण ही कोंपलें हैं, नम्रता ही डालियाँ हैं, विश्वास ही जड़ है, महानता ही फूल है ऐसे अपने गुणों के द्वारा फलपरिपूर्ण उस सज्जन चारुदत्त रूपी वृक्ष पर मित्र रूपी पक्षी सुखपूर्वक आश्रय लेते हैं ?

उदयन्तु नाम मेघा भवतु निशा वर्षमविरतं पततु।

गणयामि नैव सर्वं दयिताभिमुखेन हृदयेन।।33।।

अन्वयः – मेघाः, उदयन्तु, नामः, निशा, भवतु, अविरतम्, वर्षं, पततु, (अहं) दयिताभिमुखेन, हृदयेन, सर्वं, नैव, गणयामि ।33 ।

अर्थ – वसन्तसेना – घटाएँ भले ही घिर आये, रात हो जाय, लगातार पानी गिरता रहे, फिर भी मैं प्रियतम से मिलने के लिये तड़पने वाले हृदय के कारण इन सबकी कुछ भी परवाह नहीं करती।

पंचमोऽंक

आलोकितं गृहशिखण्डिभिरुत्कलापै–

र्हंसैर्यियासुभिरपाकृतमुन्मनस्कैः।

आकालिक सपदि दुर्दिनमन्तरिक्ष–

मुत्कण्ठितस्य हृदयं च समं रुणद्धि।।1।।

अन्वयः – उत्कलापैः, गृहशिखण्डिभिः, आलोकितं, यियासुभिः, उन्मनस्कैः, हंसैः, अपाकृतम्, आकालिकम्, दुर्दिनम्, सपदि, अन्तरक्षिम्, उत्कण्ठितस्य, हृदयम्, च, समम्, रुणद्धि ।1 ।

अर्थ – (इसके बाद आसन पर बैठा हुआ उत्कण्ठित चारुदत्त प्रवेश करता है)

चारुदत्त – (ऊपर की ओर देखकर) कुसमय में ही दुर्दिन (झड़ी लगाने वाला काला– काला मेघ) उमड़ रहा है। जो यह – ऊपर की ओर पंख छितराए हुए पालतू मोरों के द्वारा (आनन्द के साथ) देखा गया, (मानसरोवर को) जाने की

इच्छा वाले खिन्न–मन हंसों के द्वारा तिरस्कृत किया गया कुसमय का यह दुर्दिन (मेघों से युक्त दिन) शीघ्र ही आसमान तथा विरही आदमी के हृदय को साथ–साथ आच्छन्न कर रहा है।

मेघो जलार्द्रमहिषोदरभृंगनीलो

विद्युत्प्रभारचितपीतपटोत्तरीयः।

आभाति संहतबलाकगृहीतशंखः

खं केशवोऽपर इवाक्रमितुं प्रवृत्तः।।2।।

अन्वयः – जलार्द्रमहिषोदरभृंगनीलः, विद्युत्प्रभारचितपीतपटोत्तरीयः, संहतबलाकगृहीतशंखः, अपरः, केशवः, इव, खम्, आक्रमितुं, प्रवृत्तः, मेघ, आभाति।2।

अर्थ – पानी से भीगे हुए भैंसे के उदर एवं भौंरे के समान नीला, बिजली की चमक रूपी बने हुए पीताम्बर का दुपट्टा धारण करने वाला (विष्णु के पक्ष में – बिजली की चमक के समान बना हुआ पीताम्बर ही हैं दुपट्टा जिसका), इकट्ठी हुई बगुलों की पाँत रूपी शंख को लेने वाला (विष्णु के पक्ष में – इकट्ठी हुई बगुलों की पाँत की भाँति लिया है, पांचजन्य नामक शंख जिसने), वामनरूपधारी दूसरे विष्णु के समान आकाश को व्याप्त करने के लिये तैयार मेघ शोभित हो रहा है।

केशवगात्रश्यामः कुटिलबलाकावलीरचितशंखः।

विद्युद्गुणकौशेयश्चक्रधर इवोन्नतो मेघः।।3।।

अन्वयः – केशवागात्रश्यामः, कुटिलबलाकावलीरचितशंखः, विद्युद्गुणकौशेयः, मेघः, चक्रधरः, इव, उन्नतः।3।

अर्थ – विष्णु की शरीर के समान साँवला, बगुलों की टेढ़ी पाँत रूपी शंख को धारण करने वाला, बिजली रूपी धागे से बना हुआ पीताम्बर पहनने वाला यह बादल विष्णु के समान उमड़ रहा है।

एता निषिक्तरजतद्रवसंनिकाशा।

धारा जवेन पतिता जलदोदरेभ्यः।

विद्युत्प्रदीपशिखया क्षणदृष्टनष्टा–

श्छिन्ना इवाम्बरपटस्य दशाः पतन्ति।।4।।

अन्वयः – निषिक्तरजतद्रवसंनिकाशाः, जलदोदरेभ्यः, जवेन, पतिताः, विद्युत्प्रदीपशिखया– क्षणदृष्टनष्टाः, एताः, धाराः, अम्बरपटस्य, छिन्नाः, दशाः, इव, पतन्ति।4।

अर्थ – छिड़के हुए चाँदी के द्रव जैसी, बादलों के उदर से वेग के साथ गिरती हुई बिजली रूपी दीपक की लौ के कारण क्षण भर के लिये दिखलायी पड़कर अदृश्य हो जाने वाली, ये जल की धाराएँ आकाश रूपी कपड़े के टूटे हुए छोर के समान गिर रही हैं अर्थात् ये धाराएँ ऐसी मालूम पड़ती हैं मानो आकाश रूपी फटे कपड़े के सूत गिर रहे हो।

संसक्तैरिव चक्रवाकमिथुनैर्हंसैः प्रडीनैरिव

व्याविद्धैरिव मीनचक्रमकरैर्हर्म्यैरिव प्रोच्छ्रितैः।

तैस्तैराकृतिविस्तरैरनुगतैर्मेघैः समभ्युन्नतैः

पत्रच्छेद्यमिवेह भाति गगनं विश्लेषितैर्वायुना।।5।।

अन्वयः – संसक्तैः, चक्रवाकमिथुनै, इव, प्रडीनैः, हंसैः, इव, व्याविद्धैः, मीनचक्रमकरैः, इवः, प्रोच्छ्रितैः, हर्म्यैः, इवः, तैः, तैः, आकृतिविस्तरैः, वायुना, विश्लेषितैः, अनुगतैः, समुन्नतैः, मेघैः, इह, गगनं, पत्रच्छेद्यम्, इव, भाति |5 |

अर्थ – आपस में मिले हुए चक्रवाक के जोड़ों के समान, उड़ते हुए हंसों की भाँति, फेंके हुए मछलियों के झुण्ड तथा मगरों की तरह, ऊँचे–ऊँचे महलों जैसे, भिन्न–भिन्न आकार से फैलने वाले, हवा की झोंकों से छिन्न–भिन्न एक दूसरों के पीछे चलने वाले, उमड़ते हुए बाल के द्वारा यहाँ आकाश चित्र की भाँति सुशोभित हो रहा है।

एतत्तद्धृतराष्ट्रवक्त्रसदृशं मेघान्धकारं नभो

हृष्टो गर्जति चातिदर्पितबलो दुर्योधनो वा शिखी।

अक्षद्यूतजितो युधिष्ठिर इवाध्वानं गतः कोकिलो

हंसा संप्रति पाण्डवा इव वनादज्ञातचर्यां गताः।।6।।

अन्वयः – मेघान्धकारम्, एतत्, नभः, तद्धृतराष्ट्रवक्त्रसदृशं, (वर्तते), अतिदर्पितबलः, शिखी, दुर्योधनः, वा, हृष्टः, (सन्), गर्जति, कोकिलः, अक्षद्यूतजितः, युधिष्ठिरः, इव, अध्वानं, गतः, सम्प्रति, हंसाः, पाण्डवा, इव, वनात्, अज्ञातचर्यां, गताः |6 |

अर्थ – बादलों के कारण अँधेरा यह आकाश उस धृतराष्ट्र के मुख के समान है (धृतराष्ट्र का मुँह भी आँखों के न होने से अन्धकार पूर्ण था और आकाश की भी सूर्य– चन्द्रमा रूपी दोनों आँखें बादलों में नष्ट हो गयी हैं)। अत्यन्त अभिमानी सेना है जिसकी ऐसे प्रसन्न दुर्योधन की भाँति घमण्ड को सूचित कर रहा है रूप जिसका ऐसा मोर प्रसन्न होकर गरज रहा है। कोयल पाँसे के द्वारा जुए में हारे हुए युधिष्ठिर के समान मौन (युधिष्ठिर के पक्ष में – 'अध्वान' के माने वन मार्ग) को प्राप्त हो गयी है। इस समय हंस पाण्डवों के समान वन (हंसों के पक्ष में जल और पाण्डवों के पक्ष में – वनवास) से अज्ञातवास (अर्थात् मानसरोवर) को चले गये हैं।

यं समालम्ब्य विश्वासं न्यासोऽस्मासु तया कृतः।

तस्यैतन्महतो मूल्यं प्रत्ययस्येव दीयते।।7।।

अन्वयः – तया, यं, विश्वासं, समालम्ब्य, अस्मासु, न्यासः, कृतः, तस्य, महतः, प्रत्ययस्य, एव, एतत्, मूल्यं, प्रदीयते |7 |

अर्थ – चारुदत्त – मित्र ! ऐसी बात मत कहो। उसने जिस विश्वास के भरोसे हमारे पास धरोहर रखी, उस बहुत बड़े विश्वास की ही यह कीमत चुकायी जा रही है।

वेगं करोति तुरगस्त्वरितं प्रयातुं

प्राणव्ययान्न चरणास्तु तथा वहन्ति।

सर्वत्र यान्ति पुरुषस्य चलाः स्वभावाः

खिन्नास्ततो हृदयमेव पुनर्विशन्ति।।8।।

अन्वयः – तुरगः, त्वरितं, प्रयातुं, वेगं, करोति, तु, प्राणव्ययात्, (तस्य), चरणाः, तथा, न, वहन्ति, (इत्थं), पुरुषस्य, चलाः, स्वभावाः, सर्वत्र, यान्ति (किन्तु), ततः, खिन्नाः, पुनः, हृदयम्, एव, विशन्ति |8 |

अर्थ – घोड़ा जल्दी जाने के लिये वेग करता है। किन्तु कमजोरी के कारण पैर उस प्रकार नहीं चलते हैं। (इसी प्रकार) पुरुष के चंचल स्वभाव अर्थात् मनोरथ चारों ओर जाते हैं, किन्तु (सफलता न मिलने पर) उदास होकर फिर हृदय में ही लौट आते हैं अर्थात् गरीब की सारी इच्छाएँ धन के बिना उसके मन में ही सड़ जाती हैं। इसी तरह वसन्तसेना को पाने की मेरी भी इच्छा मन में ही रह जा रही है।

यस्यार्थास्तस्य सा कान्ता धनहार्यो ह्यसौ जनः।

(स्वगतम्) न गुणहार्यो ह्यसौ जनः। (प्रकाशम्)

वयमर्थैः परित्यक्ता ननु त्यक्तैव सा मया।।9।।

अन्वयः – यस्य, अर्थाः, (सन्ति), तस्य, सा, कान्ता, (अस्ति), हि, असौ, जनः, धनहार्यः, (अस्ति), वयं, अर्थैः, परित्यक्ताः, (अतः), ननु, सा, मया, त्यक्ता, एव।9।

अर्थ – और भी मित्र ! जिस आदमी के पास धन है उसी की वह वसन्तसेना प्रिया है। क्योंकि यह जन (वेश्या वसन्तसेना) धन के द्वारा ही वश में करने के लायक है अर्थात् वश में होती है।

(अपने आप) नहीं, यह जन वसन्तसेना गुणों के द्वारा वश में करने लायक है।

(स्पष्ट रूप में) धन ने हम लोगों को छोड़ दिया है। इसलिये मेरे द्वारा तो वह वसन्तसेना छोड़ ही दी गयी है।

जधा जधा वश्शदि अब्भखंडे तधा तधा तिस्मदि पुट्ठिचम्मे।

जधा जधा लग्गदि शीदवादे तधा तधा वेवदि मे हलक्के।।10।।

यथा यथा वर्षत्यभ्रखण्डं तथा तथा तिम्यति पृष्ठचर्म।

यथा यथा लगति शीतवातस्तथा तथा वेपते मे हृदयम्।।10।।

अन्वयः – यथा, यथा, अभ्रखण्डं, वर्षति, तथा, तथा, पृष्ठचर्म, तिम्यति, यथा, यथा, शीतवातः, लगति, तथा, तथा, मे हृदयं, वेपते।10।

अर्थ – चेट – (प्रवेश करके) मनुष्यों ! समझो (कि) जैसे जैसे बादलों का टुकड़ा बरस रहा है, वैसे वैसे पीठ का चमड़ा भीग रहा है। जैसे जैसे ठण्डी हवा लग रही है, वैसे वैसे मेरा हृदय काँप रहा है।

वंशं वाए शतच्छिद्दं शुशद्दं

वीण वाए शत्ततंतिं णदंतिं।

गीअं गाए गद्दहश्शाणुलूअं के

मे गाणे तुंबुलू णालदे वा।।11।।

वंशं वादयामि सप्तच्छिद्रं सुशब्दं

वीणां वादयामि सप्ततन्त्रीं नदन्तीम्।

गीतं गायामि गर्दभस्यानुरूपं

को मे गाने तुम्बुरुर्नारदो वा।।11।।

अन्वयः – सप्तछिद्रं = सात छेदों वाली, सुशब्दं = सुन्दर शब्द वाली, वंशं = बाँसुरी को, वादयामि = बजाता हूँ। सप्ततन्त्रीं = सात तातों वाली, नदन्तीं = झंकार करती हुई, वीणां = वीणा को, वादयामि = बजाता हूँ। गर्दभस्य = गधा के, अनुरूपं = समान, गीतं = गीत को, गायामि = गाता हूँ, मे = मेरे, गाने = गाने में अर्थात् गाने के समान् तुम्बुरुः = तुम्बुरु नामक गन्धर्व, वा = अथवा, नारदः = नारद मुनि, कः = कौन (है)? ।11।

अर्थ – सात छेदों वाली तथा सुन्दर शब्द वाली बाँसुरी बजाता हूँ। सात तारों वाली झंकार करती हुई वीणा बजाता हूँ। गधे के समान गाना गाता हूँ। मेरे गाने पर तुम्बुरु और नारद कौन हैं ? अर्थात् मेरे गाने के सामने वे लोग भी कुछ नहीं हैं।

अपद्मा श्रीरेषा प्रहरणमनंगस्य ललितं

कुलस्त्रीणां शोको मदनवरवृक्षस्य कुसुमम्।

सलीलं गच्छन्ती रतिसमयलज्जाप्रणयिनी

रतिक्षेत्रे रंगे प्रियपथिकसार्थैरनुगता।।12।।

अन्वयः – रतिसमयलज्जाप्रणयिनी, प्रियपथिकसार्थैः, अनुगता, रंगे, (इव), रतिक्षेत्रे, सलीलं, गच्छन्ती, एषा, अपद्मा, श्रीः, अनंगस्य, ललितं, प्रहरणं, कुलस्त्रीणां, शोकः, मदनवरवृक्षस्य, कुसुमम् (अस्ति)।12।

अर्थ – विट – (वसन्तसेना को उद्देश्य करके) सम्भोग के समय लजानेवाली, पथिकों के प्रिय समूहों से अनुगमन की जाने वाली, नाटकघर की भाँति (आनन्द देने वाले) संकेत – स्थान में हाव–भाव के साथ जाती हुई यह वसन्तसेना बिना कमल की लक्ष्मी है, कामदेवका सुकुमार अस्त्र है, कुलीन स्त्रियों का साक्षात् शोक है (क्योंकि इसकी सुन्दरता से खिंचकर कुलपुत्र वेश्यागामी बन जाते हैं। अतः उनकी स्त्रियाँ शोक करती हैं) तथा कामरूपी सुन्दर वृक्ष का फूल है।

गर्जन्ति शैलशिखरेषु विलम्बिबिम्बा

मेघा वियुक्तवनिताहृदयानुकाराः।

येषां रवेण सहसोत्पतितैर्मयूरैः

खं वीज्यते मणिमयैरिव तालवृन्तैः।।13।।

अन्वयः – वियुक्तवनिताहृदयानुकाराः, शैलशिखरेषु, विलम्बिबिम्बाः, मेघाः, गर्जन्ति, येषां, रवेण, सहसा, उत्पतितैः, मयूरैः, मणिमयैः, तालवृन्तैः, खं व्रीज्यते, इव।13।

अर्थ – वसन्तसेना देखो–देखो – विरहिणी स्त्रियों के हृदय के समान मलिन, पर्वत की चोटियों पर लटकते हुए आकार वाले बादल गरज रहे हैं। जिनके गरजने से अचानक उड़े हुए मोरों के द्वारा अपने पंख रूपी मणिमय तालवृन्तों से मानो आकाश को पंख किया जा रहा है।

पंकक्लिन्नमुखाः पिबन्ति सलिलं धाराहता दर्दुराः

कण्ठं मुंचति बर्हिणः समदनो नीपः प्रदीपायते।

संन्यासः कुलदूषणैरिव जनैर्मेघैर्वृतश्चन्द्रमा

विद्युन्नीचकुलोद्गतेव युवतिर्नैकत्र संतिष्ठते।।14।।

अन्वयः – धाराहताः, पंकक्न्निमुखाः, दुर्दराः, सलिलं, पिबन्ति, समदनः, बर्हिणः, कण्ठं, मुंचति, नीपः, प्रदीपायते, कुलदूषणैः, जनैः, संन्यासः, इव, मेघैः, चन्द्रमा, वृतः, नीचकुलोद्गता, युवतिः, इव, विद्युत्, एकत्र, न, सन्तिष्ठते।14।

अर्थ – (पानी की) धारा से ताडित एवं कीचड़ से लथ–पथ मुँहवाले मेंढक पानी पी रहे हैं। कामातुर मोर मीठी आवाज में बोल रहा है। कदम्ब का पेड़ दीपक सा मालूम पड़ रहा है। बादलों के द्वारा चन्द्रमा उसी प्रकार ढँक

लिया गया है जिस प्रकार कुल को दूषित करने वाले लोगों के द्वारा संन्यास (कलंकित कर दिया जाता है), नीच कुल में पैदा हुई युवती के समान बिजली एक स्थान पर नहीं ठहर रही है।

मूढे ! निरन्तरपयोधरया मयैव

कान्तः सहाभिरमते यदि किं तवात्र ?

मां गर्जितैरपि मुहुर्विनिवारयन्ती

मार्गं रुणद्धि कुपितेव निशा सपत्नी।।15।।

अन्वयः – कुपिता, सपत्नी, इव, निशा, हे मूढे ! निरन्तरपयोधरया, मया, एव, सह, कान्तः, यदि, अभिरमते, (तदा), अत्र, तव, किम् ?, (ईदृशैः), गर्जितैः अपि, मुहुः, विनिवारयन्ती, (मम), मार्गं, रुणद्धि।15।

अर्थ – वसन्तसेना – श्रीमान् जी ! आप का कहना ठीक है। यह कुपित हुई रात्रि के समान रात–मूर्ख ! यदि घने पयोधर (रात के पक्ष में बादल, रात्रि के पक्ष में – स्तन) वाली मेरे ही साथ प्रियतम (रात के पक्ष में – चन्द्रमा, रात्रि के पक्ष में – चारुदत्त) रमण करता है तो इस में तुम्हारा क्या ? (इस प्रकार के) बार–बार गरजने से भी बारम्बार मुझे मना करती हुई रास्ता रोक रही है।

मेघा वर्षन्तु गर्जन्तु मुंचन्त्वशनिमेव वा।

गणयन्ति न शीतोष्णं रमणाभिमुखाः स्त्रियः।।16।।

अन्वयः – मेघाः, वर्षन्तु, गर्जन्तु, वा, अशनिम्, एव, मुंचन्तुः (परन्तु), रमणाभिमुखाः, स्त्रियः, शीतोष्णं, न, गणयन्ति।16।

अर्थ – बादल बरसें, गरजें अथवा वज्र ही गिरा दें। (परन्तु) प्रेमी के साथ रमण करने के लिये जाती हुई स्त्रियाँ ठण्डक–गर्मी की परवाह नहीं करती हैं।

पवनचपलवेगः स्थूलधाराशरौघः

स्तनितपटहनादः स्पष्टविद्युत्पताकः।

हरति करसमूहं खे शशांकस्य मेघो

नृप इव पुरमध्ये मन्दवीर्यस्य शत्रोः।।17।।

अन्वयः – पवनचपवेगः, स्थूलधाराशरौघः, स्तनितपटहनादः, स्पष्टविद्युत्पताकः, मेघः, मन्दवीर्यस्य, शत्रोः, पुरमध्ये, नृपः, इवः, खे, शशांकस्य, करसमूहं, हरति।17।

अर्थ – विट – वसन्तसेना ! देखो, देखो ! यह दूसरा – (बादल और विजयी राजा का एक साथ वर्णन) (पानी की) मोटी धाराएँ ही जिसके बाण के समूह हैं, जिसका गरजना ही नगाड़े की आवाज है, स्पष्ट बिजली जिसकी पताका है, ऐसा मेघ आकाश में चन्द्रमा की किरणों को उसी प्रकार से छीन ले रहा है अर्थात् छिपा दे रहा है जैसे हवा की भाँति चंचल गति वाला, मोटी मोटी धाराओं जैसा बाण–समूह वाला, बादलों की गड़गड़ाहट के तुल्य लड़ाई के नगाड़े की आवाज वाला, चमकती हुई बिजली की भाँति पताका वाला विजयी राजा मन्द पराक्रम वाले शत्रु (राजा) के कर (टैक्स) को छीन लेता है। (हरण कर लेता है)।

एतैरेव यदा गजेन्द्रमलिनैराध्मातलम्बोदरै–

र्गर्जद्भिः सतडिद्बलाकशबलैर्मेघैः सशल्यं मनः।

तत्किं प्रोषितभर्तृवध्यपटहो हा हा हताशो बकः

प्रावृट् प्रावृडिति ब्रवीति शठधोः क्षारं क्षते प्रक्षिपन्।।18।।

अन्वयः – यदा, गजेन्द्रमलिनैः, आध्मातलम्बोदरैः, सतडिद्बलाकशबलैः, गर्जद्भिः, एतैः, मेघैः, एव, मनः, सशल्यं, भवति, हा, हा, तत्, प्रोषितभर्तृवध्यपटहः, हताशः, शठधीः, बकः, क्षते, क्षारं, प्रक्षिपन्, इव, किं, प्रावृट्, प्रावृट्, इति, ब्रवीति।18।

अर्थ – वसन्तसेना – ऐसा ही है। तो क्यों यह दूसरा – जब कि गजराजों के समान मलिन फूले हुए तथा लटकते हुए उदर वाले, बिजली एवं बगुलों से युक्त चितकबरे, गरजते हुए इन्हीं बादलों के ही कारण वियोगिनियों का मन काँटे से चुभ रहा है। हाय हाय ! तब, परदेश गये हैं पति जिनके ऐसी वियोगिनियों के लिए वध के समय बजने वाले नगाड़े की भाँति अभागा धूर्त बुद्धिवाला बगुला घाव पर नमक छिड़कता हुआ सा क्यों वर्षा, वर्षा – इस प्रकार चिल्ला रहा है।

बलाकापाण्डुरोष्णीषं विद्युदुत्क्षिप्तचामरम्।

मत्तवारणसारूप्यं कर्तुकाममिवाम्बरम्।।19।।

अन्वयः – बलाकापाण्डुरोष्णीषं, विद्युदुत्क्षिप्तचामरम्, अम्बरम्, मत्तवारणसारूप्यं, कर्तुकामम्, इव, (प्रतिभाति)।19।

अर्थ – विट – वसन्तसेना ! यह ऐसा ही है। इस दूसरे (दृश्य) को देखो – बगुलियाँ ही जिसकी सफेद पगड़ी हैं, बिजली ही जिसका डुलाया जाता हुआ चामर है, ऐसा यह आकाश, बगुलियों के समान जिसकी सफेद पगड़ी है, बिजली के समान चामर जिस पर डुलाया जा रहा है, ऐसे मत्त हाथी की मानों समानता करना चाहता है।

एतैरार्द्रतमालपत्रमलिनैरापीतसूर्यं नभो

वल्मीकाः शरताडिता इव गजाः सीदन्ति धाराहताः।

विद्युत्कांचनदीपिकेव रचिता प्रासादसंचारिणी

ज्योत्स्ना दुर्बलभर्तृकेव वनिता प्रोत्सार्य मेघैर्हृता।।20।।

अन्वयः – आर्द्रतमालपत्रमलिनैः, एतैः, (मेघैः), नभः, आपीतसूर्यं, (जातम्) धाराहताः, वल्मीकाः, शरताडिताः, गजाः, इव, सीदन्ति, विद्युत्, प्रासादसंचारिणी, कांचनदीपिका, इव, रचिता, दुर्बलभर्तृका, वनिता, इव, ज्योत्स्ना, मेघैः, प्रोत्सार्य, हृता।20।

अर्थ – श्रीमान् जी ! देखिये, देखिये – गीले तमाल के पत्तों के समान नीले रंग के इन बादलों के द्वारा आसमान में सूर्य ढक दिया गया है, धाराओं से आहत वल्मीक (दीमकों के घर), बाण से मारे गये हाथियों के समान, नष्ट हो रहे हैं, बिजली महलों पर घूमने वाली सोने के दीपक जैसी बना ली गयी है, कमजोर है पति जिसका ऐसी स्त्री के समान चाँदनी का मेघों ने बलपूर्वक हरण कर लिया है।

एते हि विद्युद्गुणबद्धकक्षा गजा इवान्योन्यमभिद्रवन्तः।

शक्राज्ञया वारिधराः सधारा गां रूप्यरज्ज्वेव समुद्धरन्ति।।21।।

अन्वयः – विद्युद्गुणबद्धकक्षाः, अन्योन्यम्, अभिद्रवन्तः, गजाः, इव, सधाराः, एते, वारिधराः, शक्राज्ञया, गां, रूप्यरज्ज्वा, इव, समुद्धरन्ति।21।

अर्थ – विट – वसन्तसेना ! देखो, देखो – बिजली रूपी रस्सी बँधी हुई कमर वाले, आपस में एक दूसरे को धक्का देते हुए हाथियों के समान, पानी की धाराओं वाले ये बादल इन्द्र की आज्ञा से जमीन को मानो पानी की धार रूपी चाँदी की रस्सियों के द्वारा ऊपर उठा रहे हैं।

महावाताध्मातैर्महिषकुलनीलैर्जलधरै–

श्चलैर्विद्युत्पक्षैर्जलधिभिरिवान्तः प्रचलितैः।

इयं गन्धोद्दामा नवहरितशष्पांकुरवती

धरा धारापातैर्मणिमयशरैर्भिद्यत इव।।22।।

अन्वयः – महावाताध्मातैः, महिषकुलनीलैः, विद्युत्पक्षैः, अन्तःप्रचलितैः, जलधिभिः, इव, चलैः, जलधरैः, नवहरितशष्पांकुरवती, गन्धोद्दमामा, इयं, धरा, धारापातैः, मणिमयशरैः, भिद्यते, इव।22।

अर्थ – प्रबल हवा से भरे हुए, भैंसों के झुण्ड की भाँति नीले, बिजली रूपी पंख वाले, आकाश में हिलने वाले सागरों की भाँति, इधर–उधर दौड़ने वाले, जल से भरे हुए बादलों के द्वारा, नयी हरी घासों के अंकुरवाली तथा तेज महक वाली यह पृथ्वी धारापातरूपी मणिमय बाणों से भेदी सी जा रही है।

एह्येहीति शिखण्डिनां पटुतरं केकाभिराक्रन्दितः

प्रोड्डीयेव बलाकया सरभसं सोत्कण्ठमालिंगितः

हंसैरुज्झितपंकजैरतितरां सोद्वेगमुद्वीक्षितः

कुर्वन्नंजनमेचका इव दिशो मेघः समुत्तिष्ठति।।23।।

अन्वयः – शिखण्डिनां, केकाभिः, एहि एहि, एति, पटुतरम्, आक्रन्दितः, बलाकया, सरभसं, प्रोड्डीय, सोत्कण्ठम्, आलिंगितः, इव, उज्झितपंकजैः, हंसैः, अतितरां, सोद्वेगम्, उद्वीक्षितः, मेघः, दिशः, अंजनमेचकाः, कुर्वन्, इव, समुत्तिष्ठति।23।

अर्थ – वसन्तसेना – भाव ! यह दूसरा – मोरों की केका ध्वनि के द्वारा 'आओ, आओ' इस प्रकार भलीभाँति बुलाया गया, बगुलों की पाँजों के द्वारा वेग पूर्वक उड़कर उत्कण्ठा के साथ मानो आलिंगन किया गया तथा कमलों को छोड़ने वाले हंसों के द्वारा अत्यन्त घबराहट के साथ देखा गया बदल दिशाओं को काजल के समान काली करता हुआ उमड़ रहा है।

निष्पन्दीकृतपद्मषण्डनयनं नष्टक्षपावासरं

विद्युद्भिः क्षणनष्टदृष्टतिमिरं प्रच्छादिताशामुखम्।

निश्चेष्टं स्वपितीव संप्रति पयोधारागृहान्तर्गतं

स्फीताम्भोधरधामनैकजलदच्छत्रापिधानं जगत्।।24।।

अन्वयः – निष्पन्दीकृतपद्मषण्डनयनं, नष्टक्षपावासरं, विद्युद्भिः, क्षणनष्टदृष्टतिमिरं, प्रच्छादिताशामुखं, स्फीताम्भोधरधामनैकजलदच्छत्रापिधानं, पयोध्यारागृहान्तर्गतं, जगत्, सम्प्रति, निश्चेष्टं, स्वपिति, इव।24।

अर्थ – विट – तुम्हारा कहना ठीक है। और देखो – जिसने कमलों के समूह रूपी नेत्रों को बन्द कर लिया है, जिसके रात–दिन समाप्त हो गये हैं अर्थात् जिसके रात–दिन का पता नहीं चल रहा है। जिसमें बिजली की चमक से क्षण में अन्धकार समाप्त हो जाता है और पुनः दिखलाई पड़ने लगता है, जिसका दिशा रूपी मुँह ढक गया है, बढ़े हुए बादलों के निवास स्थान आकाश में बहुत से बादल ही जिसके ढँकने वाले छाता हैं, ऐसा संसार इस समय जलधारा रूपी घर के भीतर मानो निश्चल होकर सो रहा है।

गता नाशं तारा उपकृतमसाधाविव जने

वियुक्ताः कान्तेन स्त्रिय इव न राजन्ति ककुभः।

प्रकामान्तस्तप्तं त्रिदशपतिशस्त्रस्य शिखिना

द्रवीभूतं मन्ये पतति जलरूपेण गगनम्।।25।।

अन्वयः – असाधौ, जने, उपकृतम्, इव, ताराः, नाशं, गताः, कान्तेन, वियुक्ताः, स्त्रियः, इव, ककुभः, न, राजन्ति, त्रिदशपतिशस्त्रस्य, शिखिना, प्रकामम्, अन्तस्तप्तम्, (अत एव), द्रवीभूतं, गगनं, जलरूपेण, पतति, (इति, अहम्) मन्ये ।25।

अर्थ – वसन्तसेना – भाव ! ऐसा ही है। देखो–देखो तो – दुष्ट आदमी पर किये गये उपकार की भाँति सभी सारे नाश को प्राप्त हो गए हैं प्रेमी के द्वारा वियुक्त स्त्रियों के समान, दिशाएँ शोभित नहीं हो रही हैं। देवताओं के स्वामी इन्द्र के वज्र की आग से भीतर ही अत्यन्त तपा हुआ आकाश मानो पिघलकर जल के रूप में गिर रहा है।

उन्नमति नमति वर्षति गर्जति मेघः करोति तिमिरौघम्।

प्रथमश्रीरिव पुरुषः करोति रूपाण्यनेकानि।।26।।

अन्वयः – प्रथमश्रीः, पुरुषः, इव, मेघः, अनेकानि, रूपाणि, करोति, (सः, कदाचित्) उन्नमति, नमति, वर्षति, गर्जति, तिमिरौघं, करोति ।26।

अर्थ – पहले पहल धन पाये हुए पुरुष के समान बादल बहुत से रूपों को (धारण) कर रहा है। (कभी तो वह) उमड़ रहा है, (कभी) झुक रहा है, (कभी) बरस रहा है, गरज रहा है तथा (कभी) अँधेरा कर रहा है।

विद्युद्भिर्ज्वलतीव संविहसतीवोच्चैर्बलाकाशतै–

र्माहेन्द्रेण विवल्गतीव धनुषा धाराशरोद्गारिणा।

विस्पष्टाशनिनिस्वनेन रसतीवाघूर्णतीवानिलै–

र्नीलैः सान्द्रमिवाहिभिर्जलधरैर्धूपायतीवाम्बरम्।।27।।

अन्वयः – अम्बरम्, विद्युद्भिः, ज्वलति, इव, बलाकाशतैः, उच्चैः, संविहसति, इव, धाराशरोद्गारिणा, माहेन्द्रेण, धनुषा, विवल्गति, इव, विस्पष्टाशनिनिस्वनेन, रसति, इव, अनिलैः, आघूर्णति, इव, अहिभिः, इव, नीलैः, जलधरैः, सान्द्रं, धूपायति, इव ।27।

अर्थ – विट – ऐसा ही है – आकाश बिजलियों से मानो जल रहा है, बगुलों की सैंकड़ों, पाँतों से अत्यधिक हँस सा रहा है, धारा रूपी बाणों को बरसाने वाले इन्द्रधनुष से मानो पैतरा बदल रहा है, वज्र के स्पष्ट घोष से गर्जन सा कर रहा है, हवाओं के द्वारा घूम सा रहा है और नीले सर्पों की भाँति (काले) बादलों से खूब घने रूप में धूपित सा हो रहा है।

जलधर ! निर्लज्जस्त्वं यन्मां दयितस्य वेश्म गच्छन्तीम्।

स्तनितेन भीषयित्वा धाराहस्तैः परामृशसि।।28।।

अन्वयः – हे जलधर ! त्वं, निर्लज्जः, (असि) यत्, दयितस्य, वेश्म, गच्छन्तीं, मां, स्तनितेन, भीषयित्वा, धाराहस्तैः, परामृशसि ।28।

अर्थ – वसन्तसेना – हे जल से भरे–पूरे बादल ! तुम निर्लज्ज हो, जो कि प्रेमी के घर जाती हुई मुझको गर्जन से डराकर जल धरा रूपी हाथों से छू रहे हो।

किं ते ह्यहं पूर्वरतिप्रसक्ता यत्त्वं नदस्यम्बुदसिंहनादैः ?।

न युक्तमेतत्प्रियकांक्षिताया मार्गं निरोद्ध मम वर्षपातैः।।29।।

अन्वयः – भो शक्र ! अहं, किं, ते, पूर्वरतिप्रसक्ता, (आसम्) ? यत्, त्वम्, अम्बुदसिंहनादैः, नदसिः, प्रियकांक्षितायाः, मम, मार्गं, वर्षपातैः, निरोद्धुम्, एतत्, न, युक्तम्।29।

अर्थ – हे इन्द्र ! मैं क्या कभी पहले तुम्हारे प्रेम में आसक्त थी, जो तुम बादलों के सिंहनादों से गरज रहे हो ? प्रेमी को चाहने वाली मेरा, वर्षा करके रास्ता रोकना यह ठीक नहीं है।

यद्वदहल्याहेतोर्मृषा वदसि शक्र ! गौतमोऽस्मीति।

तद्वन्ममापि दुःखं निरपेक्ष ! निवार्यतां जलदः।।30।।

अन्वयः – हे शक्र ! यद्वत्, अहल्याहेतोः, गौतमः, अस्मि, इति, (त्वम्) मृषा, वदसि, हे निरपेक्ष ! तद्वत्, मम, अपि, दुःखं (जानीहि, अतः), जलदः, निवार्यताम्।30।

अर्थ – हे इन्द्र – जिस प्रकार अहल्या के लिये 'मैं गौतम हूँ' यह तुमने झूठ कहा था। हे पराई पीड़ा को न जानने वाले ! उसी प्रकार मेरा भी दुःख जानो और बादलों को रोक लो।

गर्ज वा वर्ष वा शक्र ! मुंच वा शतशोऽशनिम्।

न शक्या हि स्त्रियो रोद्धुं प्रस्थिता दयितं प्रति।।31।।

अन्वयः – हे शक्र ! गर्ज, वा, वर्ष, वा, शतशः, अशनिं, मुंच (किन्तु) दयितं, प्रति, प्रस्थिताः, स्त्रियः, रोद्धुं, न, शक्याः, हि।31।

अर्थ – हे इन्द्र ! गरजो चाहे बरसो अथवा सैकड़ों बार वज्र छोड़ो। किन्तु प्रेमी के पास जाती हुई स्त्रियाँ नहीं रोक जा सकतीं।

यदि गर्जति वारिधरो गर्जतु तन्नाम निष्ठुराः पुरूषाः।

अयि ! विद्युत्प्रमदानां त्वमपि च दुःखं न जानासि।।32।।

अन्वयः – यदि, वाराधिरः, गर्जति, तद्, गर्जतु, नाम, (यतः), पुरुषाः, निष्ठुराः, (भवन्ति, किन्तु), अयि, विद्युत् ! त्वम्, अपि, च, प्रमदानां, दुःखं, न, जानासि ?।32।

अर्थ – यदि बादल गरजता है तो वह भले ही गरजे, क्योंकि पुरुष निर्दयी होते हैं। किन्तु हे बिजली ! तुम भी क्या कामिनियों की पीड़ा को नहीं जानती हो।

ऐरावतोरसि चलेव सुवर्णरज्जुः

शैलस्य मूर्ध्नि निहितेव सिता पताका।

आखण्डलस्य भवनोदरदीपिकेय–

माख्याति ते प्रियतमस्य हि सन्निवेशम्।।33।।

अन्वयः – ऐरावतोरसि, चला, सुवर्णरज्जुः, इव, शैलस्य, मुर्ध्नि, निहिता, सिता, पताका, इव, आखण्डलस्य, भवनोदरदीपिका, इव, ते, प्रियतमस्य, सन्निवेशम्, आख्याति, हि।33।

अर्थ – विट – श्रीमती जी ! उलाहना देना बन्द कीजिए। यह बिजली तुम्हारा उपकार करने वाली है – इन्द्र के हाथी ऐरावत की छाती पर चंचल सोने की रस्सी के समान, पर्वत की चोटी पर रखी गई सफेद पताका की भाँति, इन्द्र के घर की दीपिका के तुल्य यह बिजली तुम्हारे प्रेमी के घर के बतला रही है।

यदि कुप्यसि नास्ति रतिः, कोपेन विनाऽथवा कुतः कामः ?।

कुप्य च कोपय च त्वं प्रसीद च त्वं प्रसादय च कान्तम्।।34।।

अन्वयः – यदि, कुप्यसि, रतिः, न, अस्ति, अथवा, कोपेन, विना, कामः, कुतः ? (अतः) त्वं, कुप्य, च, कान्तम्, च, कोपय, त्वं, प्रसीद, च (कान्तम्) च, प्रसादय।34।

अर्थ – यदि तुम केवल कोप ही करती हो तो अनुराग नहीं है। अथवा कोप के बिना सम्भोग का आनन्द कहाँ ! तुम कोप करो और प्रेमी को भी कोप कराओ एवं तुम खुश होओ और प्रेमी को भी खुश करो।

एषा फुल्लकदम्बनीपसुरभौ काले घनोद्भासिते

कान्तस्यालयमागता समदना हृष्टा जलार्द्रालका।

विद्युद्वारिदगर्जितैः सचकिता त्वद्दर्शनाकांक्षिणी

पादौ नूपुरलग्नकर्दमधरौ प्रक्षालयन्ती स्थिता।।35।।

अन्वयः – फुल्लकदम्बनीपसुरभौ, घनोद्भासिते, काले, समदना, हृष्टा, जलार्द्रालका, विद्युद्वारिदगर्जितैः, सचिकिता, त्वद्दर्शनाकांक्षिणी, कान्तस्य, आलयम्, आगता, एषा, नूपुरलग्नकर्दमधरौ, पादौ प्रक्षालयन्ती, स्थिता।35।

अर्थ – अच्छा ! ऐसा ही। हे, हे ! आर्य चारुदत्त से नम्रता के साथ कहो – फूले हुए कदम्ब एवं नीप के कारण सुन्दर गन्ध वाले, बादलों से सुशोभित समय में काम से पीड़ित, प्रसन्न, पानी से गीले केशों वाली, बिजली तथा बादलों के गरजने से भयभीत, तुम्हारे दर्शन को चाहने वाली, प्रिय (चारुदत्त) के घर आई हुई यह (वसन्तसेना) नूपुर में लिपटे हुए कीचड़ को धारण करने वाले पैरों को धोती हुई (दरवाजे पर) खड़ी है।

साटोपकूटकपटानृतजन्मभूमेः

शाठ्यात्मकस्य रतिकेलिकृतालयस्य।

वेश्यापणस्य सुरतोत्सवसंग्रहस्य

दाक्षिण्यपण्यसुखनिष्क्रयसिद्धिरस्तु।।36।।

अन्वयः – साटोपकूटकपटानृतजन्मभूमेः, शाठ्यात्मकस्य, रतिकेलिकृतालयस्य, सुरतोत्सव– संग्रहस्य, वेश्यापणस्य, दाक्षिण्यपण्यसुखनिष्क्रयसिद्धिः, अस्तु।36।

अर्थ – विट – (अपने आप) इस उपाय से बड़ी चतुरता के साथ लौटा दिया गया हूँ। (प्रकट रूप में) ऐसा ही हो। सुश्री वसन्तसेना ! गर्व के सहित माया, छल एवं झूठ का जो जन्मस्थान है अर्थात् जो गर्व आदि को उत्पन्न करता है धूर्तता ही जिस की आत्मा है, सम्भोग–क्रीडा ने जिसको अपना घर बनाया है अर्थात् जिसमें रतिक्रीड़ा की प्रधानता रहती है। जहाँ रमण के सुख का संग्रह है, ऐसे वेश्या रूपी बाजार की उदारता से न कि पैसे से बिकने वाली वस्तु की सुख के साथ लेन–देन होवे।

सदा प्रदोषो मम याति जाग्रतः

सदा च मे निःश्वसतो गता निशा।

त्वया समेतस्य विशाललोचने !

ममाद्य शोकान्तकरः प्रदोषकः।।37।।

अन्वयः – सदा, जाग्रतः (एव) मम प्रदोषः, यति, सदा निश्वसतः। (एव) में, निशा, गता, हे विशाललोचने। अद्य, त्वया, समेतस्य, मम, प्रदोषकः शोकान्तकरः, (भवति) ।37।

अर्थ – हे प्रिये। हमेशा जागते हुए ही मेरा प्रदोष बीता है और सर्वदा आहें भरते हुए ही मेरी रात बीती है। किन्तु हे बड़ी–बड़ी आँखों वाली स्त्री। आज तुम्हारे साथ मिलने वाले मेरा प्रदोष दुःखों को समाप्त करने वाला हो रहा है।

वर्षोदकमुद्गिरता श्रवणान्तविलम्बिना कदम्बेन।

एकः स्तनोऽभिषिक्तो नृपसुत इव यौवराज्यस्थः।।38।।

अन्वयः – वर्षोदकम्, उद्गिरता, श्रवणान्तविलम्बिना, कदम्बेन, एकः, स्तनः, यौवराज्यस्थः, नृपसुतः, इव, अभिषिक्तः ।38।

अर्थ – चारुदत्त – मित्र ! देखो, देखो – वर्षा के जल को गिराते हुए कान के छोर पर लटकने वाले कदम्ब के फूल ने एक स्तन का, युवराज–पद पर बैठे हुए राजकुमार के समान, अभिषेक कर दिया है।

योऽस्माभिश्चिन्तितो व्याजः कर्तुं न्यासप्रतिक्रियाम्।

स एव प्रस्तुतोऽस्माकं किंतु सत्यं विडम्बना।।39।।

अन्वयः – अस्माभिः, न्यासप्रतिक्रियाम्, कर्तुं, यः, व्याजः, चिन्तितः, सः, एव, अस्माकं, प्रस्तुतः, (किन्तु), सत्यम्, (इयं) विडम्बना, (अस्ति) ।39।

अर्थ – चारुदत्त – मित्र ! जो बहाना हम लोगों ने धरोहर की क्षति–पूर्ति करने के लिये सोचा था वही (बहाना) हमारे सामने उपस्थित है। किन्तु सचमुच यह जाल साजी (प्रतारणा ही) है अर्थात् यह वह सुवर्णभाण्ड नहीं है जो हमारे घर से चोरी गया था, किन्तु हम लोगों की ढाँढस के लिये इसने दूसरा आभूषण ला रखा है।

धनैर्वियुक्तस्य नरस्य लोके किं जीवितेनादित एव तावत्।

यस्य प्रतीकारनिरर्थकत्वात्कोपप्रसादा विफलीभवन्ति।।40।।

अन्वयः – लोके, धनैः, वियुक्तस्य, नरस्य, आदितः, एव, जीवितेन, किं तावत्, प्रतिकार– निरर्थकत्वात्, यस्य, कोपप्रसादाः, विफलीभवन्ति ।40।

अर्थ – चारुदत्त – (अलग से) अरे ! दुःख है – संसार में निर्धन मनुष्य के जन्म से ही जीने से क्या लाभ ? बदला चुकाने में असमर्थ होने के कारण जिसके कोप और अनुग्रह दोनों ही निष्फल होते हें अर्थात् निर्धन किसी पर खुश होकर उसे कुछ दे नहीं सकता है और नाराज होने पर उसका कुछ बिगाड़ भी नहीं सकता है।

पक्षविकलश्च पक्षी शुष्कश्च तरुः सरश्च जलहीनम्।

सर्पश्चोद्धृतदंष्ट्रस्तुल्य लोके दरिद्रश्च।।41।।

अन्वयः – लोके, पक्षविकल, पक्षी, च, शुष्कः, तरुः, च, जलहीनं, सरः, च, उद्धृतदंष्ट्र, सर्पः, च, (एतत्, सर्वं) तुल्यम् ।41।

अर्थ – संसार में, बिना पंख की चिड़ियाँ, सूखा पेड़, बिना जल का तालाब तथा दाँत उखाड़ा हुआ साँप एवं दरिद्र मनुष्य ये सभी समान होते हैं।

शून्यैर्गृहैः खलु समाः पुरुषा दरिद्राः

कूपैश्च तोयरहितैस्तरुभिश्च शीर्णैः।

यद्दृष्टपूर्वजसंगमविस्मृताना

मेव भवन्ति विफलाः परितोषकालाः। ।42।।

अन्वयः – दरिद्राः, पुरुषाः, खलु, शून्यैः, गृहैः, तोयरहितैः, कूपैः, च, शीर्णैः, तरुभिः, च, समाः, (भवन्ति), यत्, दृष्टपूर्वजनसंगमविस्मृतानां, (तेषां), परितोषकालाः, एवं, विफलाः, भवन्ति ।42।

अर्थ – दरिद्र मनुष्य वस्तुतः सूने घरों, बिना पानी के कुओं तथा सूखे पेड़ों के समान है। क्योंकि पहले के परिचित जनों के मिलने से (खुशी के कारण अपनी दरिद्रता को) भूल जाने वाले निर्धन लोगों की प्रसन्नता के समय इसी तरह निष्फल हो जाते हैं।

कः श्रद्धास्यति भूतार्थं सर्वो मां तुलयिष्यति।

शंकनीया हि लोकेऽस्मिन्निष्प्रतापा दरिद्रता। ।43।।

अन्वयः – कः, भूतार्थं, श्रद्धास्यति, सर्वः, मां, तुलयिष्यति, हि, अस्मिन्, लोके, निष्प्रतापा, दरिद्रता, शंकनीया, (भवति) ।43।

अर्थ – कौन सच्ची बात का विश्वास करेगा ? सभी मुझे तौलेंगे। क्योंकि इस संसार में, निर्बल दरिद्रता निश्चित रूप से शंका के योग्य होती है।

अमूर्हि भित्त्वा जलदान्तराणि पंकान्तराणीव मृणालसूच्यः।

पतन्ति चन्द्रव्यसनाद्विमुक्ता दिवोऽश्रुधरा इव वारिधाराः। ।44।।

अन्वयः – हि, अमूः, वारिधाराः, मृणालसूच्यः, पंकान्तराणि, इव, जलदान्तराणि, भित्त्वा, चन्द्रव्यसनात्, विमुक्ताः, दिवः, अश्रुधाराः, इव, पतन्ति ।44।

अर्थ – चारुदत्त – आप ने ठीक कहा – अवश्य ही ये जल की धाराएँ, कीचड़ को फाड़कर निकले हुये कमललता की जड़ के अंकुर के समान बादलों के पेट को चीर कर प्रेमी चन्द्रमा की विपत्ति के कारण बहायी गयी आकाश की आँसुओं की धाराओं के समान गिर रही हैं।

धाराभिरार्यजनचित्तसुनिर्मलाभि–

श्चण्डाभिरर्जुनशरप्रतिकर्कशाभिः।

मेघाः स्रवन्ति बलदेवपटप्रकाशाः

शक्रस्य मौक्तिकनिधानमिवोद्‌गिरन्तः। ।45।।

अन्वयः – बलदेवपटप्रकाशाः, मेघाः, आर्यजनचित्तसुनिर्मलाभिः, अर्जुनशरप्रतिकर्कशाभिः, चण्डाभिः, धाराभिः, शक्रस्य, मौक्तिकनिधानम्, उद्‌गिरन्तः, इव, स्रवन्ति ।45।

अर्थ – बलदेव जी के वस्त्रों के समान आभा वाले बादल सज्जनों के चित्त के समान विमल, अर्जुन के तीरों के तुल्य कठोर एवं तीखी धाराओं के द्वारा मानों इन्द्र के मोतियों के खजाने को बिखराते हुए झर रहे हैं।

एतैः पिष्टमालवर्णकनिभैरालिप्तमम्भोधरैः

संसक्तैरुपवीजितं सुरभिभिः शीतैः प्रदोषानिलैः।

एषाम्भोदसमागमप्रणयिनी स्वच्छन्दमभ्यागता

रक्ता कान्तमिवाम्बरं प्रियतमा विद्युत्समालिंगति। ।46।।

अन्वयः — अम्भोदसमागमप्रणयिनी, स्वच्छन्दम्, आगता, रक्ता, प्रियतमा, इव, एषा, विद्युत्, पिष्टतमालवर्णकनिभैः, एतैः, अम्भोधरैः, आलिप्तम्, संसक्तैः, सुरभिभिः, शीतैः, प्रदोषानिलैः, उपवीजितं, च, कान्तम्, इव, अम्बरम्, समालिंगति।46।

अर्थ — प्रिये ! देखो, देखो — बादलों के समागम की प्रबल इच्छा वाली, अपनी इच्छा से आयी हुई, लाल रंग वाली यह बिजली, पिसे हुये तमाल के रंग जैसे इन बादलों से घिरे हुये हमेशा बहने वाली सुगन्धित एवं ठण्डी सायंकाल की हवाओं से पंखा झले जाते हुये, आकाश का उसी प्रकार से आलिंगन कर रही है जैसे बादलों के उमड़ने से प्रियतम की इच्छा वाली, अपनी इच्छा से आयी हुई, अनुरागिणी कामिनी प्रेमी का आलिंगन करती है।

भो मेघ ! गम्भीरतरं नद त्वं तव प्रसादात्स्मरपीडितं मे

संस्पर्शरोमांश्चितजातरागं कदम्बपुष्पत्वमुपैति गात्रम्।।47।।

अन्वयः — भो मेघ ! त्वं, गम्भीरतरं, नद, तव, प्रसादात्, स्मरपीडितं, मे, गात्रम्, स्पर्श— रोमांचितजातरागं, (सत्), कदम्बपुष्पत्वम्, उपैति।47।

अर्थ — चारुदत्त — (स्पर्श का अभिनय करते हुये बदले में आलिंगन करके) ऐ बादल ! तू और अधिक गम्भीरता से गरज, तेरी ही कृपा से कामदेव के द्वारा सताया गया मेरा शरीर (वसन्तसेना के) स्पर्श से रोमांचित एवं उत्पन्न—वासना वाला होकर कदम्ब फूल के समान हो रहा है।

वर्षशतमस्तु दुर्दिनमविरतधारं शतह्रदा स्फुरतु।

अस्मद्विधदुर्लभया यदहं प्रियया परिष्वक्तः।।48।।

अन्वयः — अविरतधारं, दुर्दिनं, वर्षशतम्, अस्तु, शतहदा, स्फुरतु, यत्, अहम्, श्रस्मद्विध— दुर्लभया, प्रियया, परिष्वक्तः।48।

अर्थ — चारुदत्त — मित्र ! तुम्हें दुर्दिन को उलाहना नहीं देना चाहिये। हमेशा धाराओं से बरसने वाला यह दुर्दिन सौ वर्ष तक रहे। बिजली चमकती रहे। क्योंकि हमारे जैसे निर्धनों के लिये दुर्लभ प्रिया के द्वारा मैं आलिंगित किया जा रहा हूँ।

धन्यानि तेषां खलु जीवितानि

ये कामिनीनां गृहमागतानाम्।

आर्द्राणि मेघोदकशीतलानि

गात्राणि गात्रेषु परिष्वजन्ति।।49।।

अन्वयः — तेषां, जीवितानि, खलु, धन्यानि, ये, गृहम्, आगतानां, कामिनीनां, मेघोदक— शीतलानि, गात्राणि, गात्रेषु, परिष्वजन्ति।49।

अर्थ — वास्तव में उन्हीं के जीवन धन्य हैं, जो घर में आयी हुई कामिनियों के बादल के जल से ठण्डे हुये गीले अंगों का अपने अंगों में कसकर आलिंगन करते हैं।

स्तम्भेषु प्रचलितवेदिसंचयान्तं

शीर्णत्वात्कथमपि धार्यते वितानम्

एषा च स्फुटितसुधाद्रवानुलेपा

त्संक्लिकन्ना सलिलभरेण चित्रभित्तिः।।50।।

अन्वयः – प्रचलितवेदिसंचयान्तं, वितानम्, शीर्णत्वात्, स्तम्भेषु, कथमपि, धार्यते। एषा, चित्रभित्तिः, च, स्फुटितसुधाद्रवानुलेपात्, सलिलभरेण, संक्लिन्न, (जाता) ।50।

अर्थ – प्रिये वसन्तसेने ! (हवा की झोकों से) हिल रहा है वेदी के समूह में बँधा हुआ छोर जिसका ऐसा वितान जर्जन होने के कारण खम्भों पर बड़ी मुश्किल से ठहरा हुआ है और यह चित्रित दीवार कहीं–कहीं गली हुई चूने की कलई (सुधा–द्रव) के लिप जाने के कारण जल के वेग से एकदम गीली हो गयी है।

विद्युज्जिह्वेनेदं महेन्द्रचापोच्छ्रितायतभुजेन।

जलधरविवृद्धहनुना विजृम्भितमिवान्तरिक्षेण।।51।।

अन्वयः – विद्युज्जिह्वेन, महेन्द्रचापोच्छ्रितायतभुजेन, जलधरविवृद्धहनुना, अन्तरिक्षेण, विजृम्भितम्, इव ।51।

अर्थ – (ऊपर की ओर देखकर) अरे ! इन्द्र धनुष ! प्रिये, देखो ! देखो !

बिजली रूपी जिह्वा वाले, इन्द्र धनुष रूपी ऊपर उठी हुई एवं लम्बी भुजावाले, पानी से भरे बादल रूपी बढ़ी हुई ठोढ़ी वाले आकाश ने मानों जँभाई ली है।

तालीषु तारं विटपेषु मन्द्रं शिलासु रुक्षं सलिलेषु चण्डम्।

संगीतवीणा इव ताड्यमानास्तालानुसारेण पतन्ति धाराः।।52।।

अन्वयः – धाराः, तालीषु, तारं, विटपेषु, मन्द्रं, शिलाषु, रूक्षं, सलिलेषु, चण्डम्, ताड्यमानाः, संगीतवीणा, इव, तालानुसारेण, पतन्ति ।52।

अर्थ – तो आओ, भीतर ही चलें (ऐसा कह कर उठकर घूमता है)

(पानी की) धाराएँ ताल के पत्तों पर ऊँचे स्वर, पेड़ों की डालियों पर गम्भीर पत्थर की चट्टानों पर कर्कश तथा जल में प्रचण्ड (ध्वनि) से, बजायी जाती हुई संगीत की वीणा के समान, ताल के अनुसार गिर रही हैं।

1.4 अपनी प्रगति जांचिए

1 मृच्छकटिक के रचयिता कौन है ?

2 मृच्छकटिक में कितने अंक हैं ?

3 मृच्छकटिक के प्रथम अंक का क्या नाम है ?

4 चारुदत्त की पत्नी का क्या नाम है ?

5 मृच्छकटिक के पंचम अंक का क्या नाम है ?

1.5 सारांश

प्रथम अंक

रचयिता व रचना के विषय में परिचय देने के पश्चात् सूत्रधार अपने घर में असाधारण तैयारी देखकर आश्चर्य चकित होता है। पूछने पर उसे नटी से पता चलता है कि वह तैयारी 'अभिरूप पति' नामक व्रत के निमित्त की गई है। वह कुछ क्रोधित होता है परन्तु नटी के द्वारा समझाने पर वह शान्त हो जाता है। नटी उसे व्रत में किसी ब्राह्मण को निमन्त्रित करने को कहती है। ब्राह्मण को खोजने के लिए निकले हुए सूत्रधार को चारुदत्त का मित्र विदूषक मैत्रेय

दृष्टिगोचर होता है। सूत्रधार उसे भोजन के लिए अपने घर निमन्त्रित करता है परन्तु मैत्रेय के द्वारा अस्वीकार कर देने पर वह अन्य ब्राह्मण की खोज में चला जाता है। इसी के साथ प्रस्तावना समाप्त हो जाती है।

प्रथम दृश्य के प्रारम्भ में मंच पर मैत्रेय आता है। उसके कथन से ज्ञात होता है कि आर्य चारुदत्त के प्रिय मित्र जूर्णवृद्ध ने उसे चमेली के पुष्पों से सुगन्धित उत्तरीय देवकार्य सम्पादित करने वाले चारुदत्त के पास ले जाने का आदेश दिया है। तभी मंच पर चारुदत्त तथा मदनिका प्रवेश करते हैं। चारुदत्त अपने भूतकाल तथा वर्तमानकाल की परिस्थितियों पर विचार कर रहा है। अतीत की सम्पन्नता एवं वर्तमान की निर्धनता को देखकर वह भाग्य के विपर्यय पर चिन्तित होता है। तभी उसे मैत्रेय दृष्टिगोचर होता है। वह प्रसन्नता से मैत्रेय का स्वागत करता है। मैत्रेय उसे जूर्णवृद्ध प्रदत्त उत्तरीय प्रदान करता है। मैत्रेय के साथ दरिद्रता विषयिकी चर्चा में वह (चारुदत्त) दरिद्रता से मृत्यु को श्रेयस्कर बताता है। मैत्रेय के द्वारा सान्तवना देने पर वह कहता है कि वह विभव विनाश से दुःखी नहीं है अपितु निर्धनता के कारण अतिथियों द्वारा की जाने वाली उपेक्षा से उसे कष्ट होता है। वह निर्धनता को सब दुःखों का मूल कारण बताता है और मैत्रेय को मातृदेवियों को बलि अर्पण करने के लिए चौराहे पर भेजता है। मैत्रेय उस समय राजपथ पर गमन में भय व्यक्त करता है। उसे कुछ देर ठहरने की कहकर चारुदत्त अपने पूजाकार्य में लग जाता है। यहीं प्रथमदृश्य की समाप्ति होती है। द्वितीय दृश्य में वसन्तसेना अत्यन्त भयभीत होकर भागती हुई जाती दिखाई देती है और शकार, विट तथा चेट उसे पकड़ने की चेष्टा में उसका पीछा करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। राजा का साला शकार कामासक्त होकर वसन्तसेना को किसी भी तरह से अपने वश में करना चाहता है। वह वसन्तसेना को प्रलोभन देता है, पुकारता है, मारने की धमकी भी देता है परन्तु वसन्तसेना उसके किसी भी प्रलोभन आदि को स्वीकार नहीं करती। शकार वसन्तसेना का चित्रण बाजारी वस्तु के रूप में करता है। शकार के वाक्यों से ही वसन्तसेना को ज्ञात होता है कि वह चारुदत्त के घर के समीप पहुँच गई है। तभी पूजा से निवृत्त चारुदत्त द्वारा मातृदेवियों को बलि अर्पित करने के लिए प्रेषित मैत्रेय मदनिका के साथ दीपक लेकर द्वार खोलता है। वसन्तसेना शीघ्रता से दीपक बुझाकर घर में प्रविष्ट हो जाती है। विदूषक दीपक जलाने के लिए पुनः घर में प्रवेश करता है। रदनिका बाहर निकलती है और अंधेरे में शकार उसे वसन्तसेना समझकर पकड़ लेता है। वह प्रतिवाद करती है और दीपक को पुनः जलाकर बाहर आया हुआ मैत्रेय (विदूषक) रदनिका के प्रति अभद्र आचरण देखकर शकार को फटकारता है। विट विदूषक को पहचान लेता है। वह क्षमा याचना करके उस घटना के सम्बन्ध में चारुदत्त से कोई चर्चा न करने का अनुरोध करता है। विट शकार को चलने के लिए कहता है। शकार के मना करने पर विट चला जाता है। विदूषक के साथ कुछ देर के वाद– विवाद के बाद शकार चेट के साथ चला जाता है।

घर के अन्दर चारुदत्त वसन्तसेना को रदनिका समझ लेता है। वह उसे बालक रोहसेन को अन्दर ले जाने को कहता है। चारुदत्त द्वारा प्रदत्त चमेली से सुगन्धित उत्तरीय को ग्रहण करके उसकी सुगन्ध से यह अनुमान करती है कि चारुदत्त का यौवन निर्धनता के दोष से रहित है। वसन्तसेना चुपचाप खड़ी रहती है। कोई उत्तर न मिलने पर खिन्न चारुदत्त पुनः रोहसेन को अन्दर ले जाने को कहता है। तभी विदूषक तथा रदनिका प्रवेश करते है। विदूषक से वास्तविक स्थिति को जान कर चारुदत्त वसन्तसेना को पहचान लेता है और क्षमा याचना करता है। वसन्तसेना अपने आभूषणों को धरोहर के रूप में रखना चाहती है जिसे चारुदत्त कुछ संकोच के साथ स्वीकार कर लेता है। चारुदत्त और विदूषक वसन्तसेना को उसके घर पहुँचा कर आ जाते हैं। चारुदत्त द्वारा दिन में वर्धमानक तथा रात्रि में विदूषक को उन आभूषणों का रक्षा भार सौंपने के साथ ही प्रथम अंक समाप्त हो जाता है। इस अंक की संज्ञा 'अलंकारन्यास' है।

द्वितीय अंक

चारुदत्त विषयिकी चिन्ता में मग्न वसन्तसेना के साथ रदनिका प्रवेश करती है। तभी एक चेटी आकर माता की स्नान एवं देवपूजा सम्पन्न करने सम्बन्धी आज्ञा सुनाती है। वसन्तसेना के अस्वीकार करने पर चेटी चली जाती है।

मदनिका द्वारा वसन्तसेना से उसकी उद्विग्नता का कारण पूछने पर वह चारुदत्त विषयक अपने प्रेम को प्रकट करती है। वह बताती है कि यद्यपि चारुदत्त निर्धन है परन्तु वह उससे प्रेम करती है और उससे मिलने के लिए ही योजनानुसार अपने आभूषण वहाँ छोड़ दिए हैं।

द्वितीय दृश्य में संवाहक, माथुर द्यूताध्यक्ष तथा एक जुआरी के परस्पर वार्तालाप से हमें ज्ञात होता है कि संवाहक माथुर से द्यूत में पराजित होकर उसका दश सुवर्ण मुद्राओं का ऋणी हो गया है। उसका पीछा करते हुए माथुर तथा जुआरी देवी के मन्दिर में पहुँचते हैं। संवाहक को न पाकर दोनों वहां जुआ खेलने लग जाते हैं। द्यूतप्रिय संवाहक स्वयं को रोक नहीं पाता और वहाँ स्वयं ही प्रकट हो जाता है। माथुर और जुआरी उसे पीटते है। तभी दर्दुरक आकर उसे छुड़ाता है। माथुर और दर्दुरक के झगड़े में अवसर पाकर दर्दुरक माथुर की आँखों में धूल झौंक देता है और संवाहक के साथ वहाँ से भाग जाता है।

संवाहक वहाँ से भागकर वसन्तसेना के घर में शरण लेता है। संवाहक के परिचय में चारुदत्त का प्रसंग सुनकर प्रसन्न वसन्तसेना चेटी द्वारा अपना कंकण माथुर के पास भेज देती है और संवाहक को मुक्त करा देती है। संवाहक बौद्ध संन्यासी बनने का संकल्प करके निकल जाता है। तभी कर्णपूरक प्रवेश करके वसन्तसेना को बताता है कि उसने एक परिव्राजक को खुण्टमोडक नामक मत्त हाथी से बचाया है तथा किसी व्यक्ति ने उसके साहस से प्रसन्न होकर अपना उत्तरीय पुरस्कार रूप में प्रदान किया है। उत्तरीय पर चारुदत्त का नाम अंकित देखकर वसन्तसेना कर्णपूरक को एक आभूषण देकर उससे उत्तरीय लेकर प्रसन्नता से ओढ़ लेती है। कर्णपूरक से यह जानकर कि चारुदत्त इसी मार्ग से जा रहा है, वसन्तसेना तथा चेटी छत पर जाकर उसे देखती हैं। यही द्वितीय अंक समाप्त हो जाता है। इस अंक का नाम 'द्यूतकर संवाहक' है।

तृतीय अंक

प्रारम्भ में मध्यरात्रि के समय तक भी चारुदत्त के घर न लौटने पर चेट चिन्ता व्यक्त करता है। तभी चारुदत्त और विदूषक मंच पर प्रवेश करते हैं। चारुदत्त रेभिल के कुशलता एवं मनोहरता से गाये गये गीत की प्रशंसा करता है। घर पहुँचने पर चेट वर्धमानक चारुदत्त के पैर धोता है और रात को सुवर्णभाण्ड की रक्षा का भार विदूषक पर होने के कारण उसे सौंप देता है। उस सुवर्णभाण्ड को हाथ में लिए हुए ही विदूषक सो जाता है।

रात्रि में वसन्तसेना की दासी मदनिका का प्रेमी शर्विलक उसे दासता से मुक्त कराने के लिए चारुदत्त के घर में सेंध लगाता है। सेंध से पूर्व वह विभिन्न प्रकार की सेंधों तथा विभिन्न विधियों का वर्णन करता है। वह यज्ञोपवीत से नापकर सेंध लगाता है और भीतर प्रवेश करता है जब शर्विलक निरीक्षण कर रहा होता है तभी विदूषक स्वप्न देखता है कि घर में चोर ने सेंध लगाई है। अतः स्वप्न में ही वह चारुदत्त को पुकार कर सुवर्णभाण्ड उसे सौंप देता है। चारुदत्त के गहननिद्रा में होने के कारण शर्विलक उसे सुवर्णभाण्ड को विदूषक के हाथ से लेकर सावधानी से घर से बाहर निकल जाता है।

प्रातःकाल चारुदत्त सेंध के आकर की प्रशंसा करता है। विदूषक से यह सुनकर कि उसने रात्रि में सुवर्णभाण्ड चारुदत्त को दे दिया था, चारुदत्त कोई प्रतिवाद नहीं करता। वह प्रसन्न है कि चोर उसके घर से निराश नहीं गया। वह चिन्तित भी है कि लोग चोरी के वृत्तान्त पर विश्वास न करके उसकी निन्दा ही करेंगे। यह वृत्तान्त जानकर चारुदत्त की पत्नी अपने पिता द्वारा प्रदत्त एक बहुमूल्य रत्नावली यथोचित उपयोग के लिए दे देती है। वह मैत्रेय विदूषक को यह आदेश देता है कि वसन्तसेना के घर जाकर यह रत्नावली सुवर्णालंकारों के बदले उसे दे आये। वर्धमानक को सेंध बन्द करने का आदेश देकर चारुदत्त सन्ध्योपासना के लिए चला जाता है। इसी के साथ 'सन्धिच्छेद' नमाक इस अंक की समाप्ति होती है।

चतुर्थ अंक

प्रारम्भ में चारुदत्त के चित्र को देखती वसन्तसेना और मदनिका को चेटी शकार की गाड़ी में बैठने सम्बन्धी माता की आज्ञा सुनाती है। वसन्तसेना इस आदेश को पालन करने से मना कर देती है।

द्वितीय दृश्य में वसन्तसेना पलंग पर चारुदत्त का चित्र रखकर मदनिका को तालवृन्त लाने के लिए भेजती है। इसी समय शर्विलक वसन्तसेना के घर पर प्रवेश करता है। मदनिका से वार्त्तालाप करते समय शर्विलक द्वारा चारुदत्त के घर से चोरी किए गए आभूषणों को मदनिका चारुदत्त द्वारा भेजे गए आभूषण कहकर ही वसन्तसेना को सौंपने के लिए कहती है। उन दोनों के इस वार्तालाप को खिड़की के पीछे से छिपकर वसन्तसेना सुन लेती है। शर्विलक द्वारा वसन्तसेना को आभूषण सौंपने पर सब कुछ जानने वाली वसन्तसेना मदनिका को शर्विलक को पत्नी के रूप में स्वीकार करने की बात कहती है और उन दोनों को अपनी गाड़ी में बिठाकर विदा करती है।

तभी नेपथ्य से सूचना मिलती है कि राजा पालक के आर्यक को बन्दीगृह में डाल दिया है। शर्विलक अपने घनिष्ठ मित्र आर्यक की रक्षा के लिए अपनी नवविवाहता पत्नी को चेट के साथ सार्थवाह रेभिल के घर भेज देता है। अन्तिम दृश्य में विदूषक वसन्तसेना के घर पहुँचकर उसके भव्य प्रासाद को देखकर आश्चर्यचकित होता है। वसन्तसेना विदूषक का स्वागत करती है। सामान्य कुशल–क्षेम प्रश्न के उपरान्त विदूषक जुए में सुवर्ण अलंकार हार जाने का वृत्तान्त सुनाकर उसके बदले में भेजी गई रत्नावली वसन्तसेना को प्रदान करता है। वसन्तसेना उसे ले लेती है। वह चारुदत्त से मिलने का संदेश देकर विदूषक को विदा करती है। इसी के साथ 'मदनिकाशर्विलक' नामक चतुर्थ अंक की समाप्ति होती है।

पंचम अंक

प्रारम्भ में ही चारुदत्त सूर्यास्त के समय विदूषक की प्रतीक्षा कर रहा है। तभी मैत्रेय (विदूषक) आकर उसे वसन्तसेना के रत्नावली स्वीकार करने तथा सायंकाल को चारुदत्त से मिलने का संदेश देता है। चारुदत्त वेश्याओं की स्वार्थपूर्ण प्रीति की अत्यन्त निन्दा करता है। तभी कुम्भीलक चारुदत्त के पास आकर वसन्तसेना के आगमन की सूचना देता है। सूचना सुनकर चारुदत्त प्रसन्नता से अपना उत्तरीय कुम्भीलक को पारितोषिक रूप में प्रदान करता है।

द्वितीय दृश्य में विट और वसन्तसेना चारुदत्त के घर की ओर जाते दिखाई देते हैं। उनके चारुदत्त की वाटिका के पास पहुँचने पर आवाज सुनकर चारुदत्त विदूषक को पता लगाने के लिए बाहर भेजता है। वसन्तसेना को आचरण सम्बन्धी निर्देश देकर विट के चले जाने के बाद विदूषक वसन्तसेना को घर में आने के लिए आमन्त्रित करता है। चारुदत्त वसन्तसेना का स्वागत करता है तथा वस्त्रों के भीग जाने से उसके अन्य वस्त्रों की व्यवस्था करवाता है। विदूषक के द्वारा आगमन का कारण पूछने पर चेटी कहती है कि वसन्तसेना रत्नावली को जुए में हार जाने से उसके बदले सुवर्णभाण्ड प्रदान करने आई है। चारुदत्त और विदूषक उसे देखकर आश्चर्यचकित हो जाते हैं। चेटी द्वारा विदूषक तथा विदूषक द्वारा चारुदत्त को सम्पूर्ण सुवर्णभाण्ड प्राप्ति का वृत्तान्त बताने से सारा वातावरण आमोद–प्रमोद युक्त हो जाता है। विदूषक के द्वारा घर के भीतर जाने का संकेत प्रदान करने पर चारुदत्त के साथ वसन्तसेना घर में प्रवेश करके सम्पूर्ण रात्रि वहीं पर व्यतीत करती है। इसके साथ ही 'दुर्दिन' संज्ञक पंचम अंक समाप्त हो जाता है।

1.6 मुख्य शब्दावली

- **समाधिः** – ब्रह्म के चिन्तन में पूर्ण लीनता
- **द्विरदेन्द्रगतिः** – गजराज के समान चाल वाले
- **अल्पक्लेशम्** – कम दुःखदायी
- **सर्वापदाम्** – सभी आपत्तियों की

- **शमिनाम्** – शान्तचित्तवाले व्यक्तियों के
- **कटीतटनिवेशितम्** – कमर भाग में बँधी हुई
- **धनहार्यम्** – धन के द्वारा ग्रहण करने के योग्य
- **प्रगल्भम्** – धृष्टतापूर्वक
- **उपदिश्यते** – सिखाई जाती है
- **न्यासप्रतिक्रियाम्** – धरोहर के बदले का धन

1.7 अपनी प्रगति जांचिए के उत्तर

1 शूद्रक

2 दस

3 अलंकार–न्यास

4 धूता

5 दुर्दिन

1.8 अभ्यास हेतु प्रश्न

1 महाकवि शूद्रक का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व स्पष्ट कीजिए।

2 मृच्छकटिक में प्रतिबिम्बित समाज एवं संस्कृति का विश्लेषण कीजिए।

3 मृच्छकटिक की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

4 मृच्छकटिक के प्रमुख पात्रों का चरित्र–चित्रण कीजिए।

5 मृच्छकटिक के प्रथम पाँच अंकों का सार लिखिए।

1.9 आप ये भी पढ़ सकते हैं

1 मृच्छकटिक – श्रीनिवास शास्त्री, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ

2 मृच्छकटिक – रमाशंकर त्रिपाठी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली

3 मृच्छकटिक – आचार्य जगदीश प्रसाद पाण्डेय एवं मदनगोपाल वाजपेयी, भारतीय बुक कॉरपोरेशन, दिल्ली

4 मृच्छकटिक का शास्त्रीय, सामाजिक एवं राजनीतिक अध्ययन – डॉ० शालीग्राम द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

इकाई –2
मृच्छकटिक (6–10 अंक)

इकाई की रूपरेखा

2.1 परिचय

डॉ० परमानन्द गुप्त ने 'संस्कृत साहित्य का परिचय' नामक पुस्तक में मृच्छकटिक के छठे अंक से दसवें अंक तक का परिचय इस प्रकार दिया है –

छठे अंक में चारुदत्त पुष्पकरण्डक जीर्णोद्यान में चला जाता है। वसन्तसेना चारुदत्त के पुत्र रोहसेन के लिए मिट्टी की गाड़ी के स्थान पर सोने की गाड़ी बनवाने के लिए अपने आभूषण प्रस्तुत करती है। इसके बाद चारुदत्त तथा शकार की गाड़ियों के बदलने का दृश्य है। वसन्तसेना तो चारुदत्त की गाड़ी समझकर शकार की गाड़ी में बैठ जाती है तथा चारुदत्त की गाड़ी में कैद से भागा हुआ आर्यक चढ़ जाता है। सातवें अंक में आर्यक चारुदत्त मिलन होता है तथा चारुदत्त आर्यक को अभय प्रदान कर उसे विदा करता है। आठवें अंक में शकार वसन्तसेना का गला घोंट कर उसे मूर्छित कर मृत समझ कर पत्तों से ढक कर न्यायालय चला जाता है ताकि चारुदत्त पर वसन्तसेना की हत्या का झूठा मुकद्दमा चलाया जावे। इधर बौद्ध भिक्षु बना हुआ संवाहक वसन्तसेना को होश में ले आता है। नवें अंक में न्यायालय में यह प्रमाणित हो जाता है कि आभूषणों के लिए चारुदत्त ने वसन्तसेना की हत्या की है। प्रमाणस्वरूप विदूषक के पास से वसन्तसेना के आभूषण भी उपलब्ध हो जाते हैं। परिणामतः चारुदत्त को प्राणदण्ड मिलता है। दसवें अंक में वसन्तसेना के उपस्थित होने पर चारुदत्त को छोड़ दिया जाता है। इधर शर्विलक राजा पालक को मार कर आर्यक को राजा बनाता है। वसन्तसेना को चारुदत्त की वधू बना दिया जाता है।

2.2 इकाई के उद्देश्य

- कवि शूद्रक की भाषा–शैली का विश्लेषण कर पाएंगे;
- मृच्छकटिक के छठे से दसवें अंक तक की कथावस्तु का विवेचन कर सकेंगे;

- मृच्छकटिक की नायिका वसन्तसेना के चरित्र से अवगत हो पाएंगे;
- शर्विलक का चरित्र–चित्रण कर पाएंगे;
- नाट्य–कला की दृष्टि से मृच्छकटिक की समीक्षा कर पाएंगे।

2.3 मृच्छकटिक (6–10 अंक)

षष्ठोऽंक

हित्वाऽहं नरपतिबन्धनापदेश–

व्यापत्तिव्यसनमहार्णवं महान्तम्।

पादाग्रस्थितनिगडैकपाशकर्षी

प्रभ्रष्टो गज इव बन्धनाद्भ्रमामि।।1।।

अन्वयः – महान्तम्, नरपतिबन्धनापदेशव्यापत्तिव्यसनमहार्णवं, हित्वा, पादाग्रस्थितनिग– डैकपाशकर्षी, अहं, बन्धनात्, प्रभ्रष्टः, गजः, इव, भ्रमामि।

अर्थ – आर्यक – राजा की कैद के बहाने से होने वाली बहुत बड़े आपत्तिरूप संकट के विशाल महासागर को पार करके, पैर के निचले हिस्से में लगे, बेड़ी रूप एक पाश को खींचने वाला मैं, बन्धन से छूटे हाथी के समान, घूम रहा हूँ।1।

भाग्यानि मे यदि तदा मम कोऽपराधो

यद्वन्यनाग इव संयमितोऽस्मि तेन।

दैवी च सिद्धिरति लंघयितुं न शक्या,

गम्यो नृपो बलक्ता सह को विरोधः ?।।2।।

अन्वयः – यदि, मे, भाग्यानि, तदा, मम, कः, अपराधः, यत्, तेन, वन्यनागः, इव, संयमितः, अस्मिः, दैवी, सिद्धिः, अपि, च, लंवयितुं न, शक्या, (तथापि), नृपः, गम्यः, बलवता, सह, कः, विरोधः ?

अर्थ – यदि मेरे भाग्य हैं, तो उसमें मेरा कौन सा दोष ? जिससे उस राजा पालक के द्वारा मैं, जंगली हाथी के समान, बन्धन में डाल दिया गया था। भाग्य वश होने वाली राज्य की सिद्धि भी टाली नहीं जा सकती। फिर भी राजा (सबके लिये) सेवा करने के योग्य है। (क्योंकि) बलशाली के साथ क्या विरोध ? (अर्थात् – भाय में यदि राज्य होगा तो अवश्य मिलेगा। किन्तु इस समय बलशाली राजा के विरोध करके कष्ट उठाना ठीक नहीं है। उससे मेल कर लेना चाहिए)।2।

इदं गृहं भिन्नमदत्तदण्डो विशीर्णसंधिश्च महाकपाटः।

ध्रुवं कुटुम्बी व्यसनाभिभूतां दशां प्रपन्नो मम तुल्यभाग्यः।।3।।

अन्वयः – इदं, गृहं, भिन्नम्, अदत्तदण्डः, विशीर्णसन्धिः, महाकपाटः, च, (अस्ति, अतः, ज्ञायते), मम, तुल्यभाग्यः, कुटुम्बी, ध्रुवं, व्यसनाभिभूतां, दशां, प्रपन्नः, (अस्ति)।

अर्थ – यह घर फूटा हुआ है। बिना दण्ड लगायी हुई, फटे हुए जोड़ – स्थान वाली, किवाड़ है। (अतः मालूम पड़ता है कि) मेरे जैसा मन्द भाग्यवाला यह घर का मालिक अवश्य ही दुःखों से भरी हालत को प्राप्त हो गया है।3।

भवेद्गोष्ठीयानं न च विषमशीलैरधिगतं

वधूसंयानं वा तदभिगमनोपस्थितमिदम्।

बहिर्नेतव्यं वा प्रवरजनयोग्यं विधिवशा–

द्विविक्तत्वाच्छून्यं मम खलु भवेद्दैवविहितम्।।4।।

अन्वयः – इदम्, विषशीलैः, अधिगतं, गोष्ठयानं, न, च, भवेत्, वा, वधूसंयानं, (न, भवेत्), (यत्), दैवविहितम्, भवेत्।

अर्थ – आर्यक – (सुनकर) अरे, गाड़ी इधर ही आ रही है।

यह गाड़ी खराब आचरणवाले आदमियों के द्वारा चढ़ी गयी किसी उत्सव में जाने वाली सवारी न हो अथवा यह किसी दुलहिन की सवारी न हो जो उसे ले जाने के लिये आयी है ? अथवा भाग्य के कारण सूनी बाहर ले जाने वाली, बड़े लोगों के चढ़ने के लायक न हो अथवा निर्जन होने के कारण खाली यह गाड़ी निश्चय ही मेरे भाग्य के द्वारा न भेजी गयी हो ?।4।

किं अच्छध वीसद्धा जो सो गोवालदारओ बद्धो।

भेत्तूण समं वच्चइ णरवइहिअअं अ बंधणं चावि।।5।।

किं स्थ विश्रब्धा यः स गोपालदारको बद्धः।

भित्त्वा समं व्रजति नरपतिहृदयं च बन्धनं चापि।।5।।

अन्वयः – विश्रब्धाः, किं, स्थ, यः, गोपालदारकः, रुद्धः, सः, नरपतिहृदयं, च, बन्धनम्, अपि, समं, भित्त्वा, व्रजति।

अर्थ – वीरकः – अरे ! अरे ! जय, जयमान, चन्दनक, मंगल एवं पुष्पभद्र आदि प्रधान (रक्षकों)। तुम लोग निश्चिन्त होकर क्यों खड़े हो ? जो अहीर का लड़का बन्दी बनाया गया था, वह राजा के हृदय एवं बन्ध दोनों को एक साथ ही तोड़कर भागा जा रहा है।5।

आअच्छध वीसत्था तुरिअं जत्तेह लहु करेज्जाह

लच्छी जेण ण रण्णेपहवइ गोत्तंतरं गंतुं।।6।।

आगच्छथ विश्वस्तास्त्वरितं यतध्वं लघु कुरुत।

लक्ष्मीर्येन न राज्ञः प्रभवति गोत्रान्तरं गन्तुम्।।6।।

अन्वयः – हे विश्वस्ताः ! आगच्छथ, त्वरितं, यतध्वं, लघु, कुरुत, येन, राज्ञः, लक्ष्मीः, गोत्रान्तरं, गन्तुम्, न, प्रभवति।6।

अर्थ – हे विश्वासपात्रों ! आओ, शीघ्रता से (आर्यक को पकड़ने की) कोशिश करो, शीघ्रता करो। जिससे राजा पालक की राज्य–लक्ष्मी दूसरे कुल में न जा सके अर्थात् आर्यक राजा न हो सके।

उज्जाणेसु सहासु अ मग्गे णअरीअ आवणे घोसे।

तं तं जोहह तुरिअं संका का जाअए जत्थ।।7।।

उद्यानेषु सभासु च मार्गे नगर्यामापणे घोषे।

तं तमन्वेषयत त्वरितं शंका वा जायते यत्र।।7।।

अन्वयः – उद्यानेषु, सभासु, च, मार्गे, नगर्याम्, आपणे, घोषे, वा, यत्न, शंका, जायते, तं, तं, त्वरितम्, अन्वेषयत।

अर्थ – बगीचों में, सभाओं में, रास्ते में, नगरी, बाजार एवं अहीरों की बस्ती में, जहाँ कहीं शंका पैदा हो उन उन जगहों को शीघ्रतया खोजो।7।

रे रे वीरअ ! किं किं दरिसेसि भणादि दाव वीसद्धं।

भेत्तूण अ बंधणअं को सो गोवालदारअं हरइ।।8।।

रे रे वीरक ! किं किं दर्शयसि भणसि तावद्विश्रब्धम्।

भित्तवा च बन्धनकं कः स गोपालदारकं हरति।।8।।

अन्वयः – रे रे वीरक ! किं किं, दर्शयसि, विश्रब्धं, किं, भणसि, तावत् बन्धनकम्, भित्त्वा, सः, कः, (यः), गोपालदारकम्, हरति।

अर्थ – अरे वीरक ! क्या क्या दिखला रहे हो ? विश्वासपूर्वक क्या कह रहे हो ? बन्धन को तोड़कर वह कौन अहीर के बच्चे को छुड़ाये लिये जा रहा है ?।8।

कस्सट्टमो दिणअरो कस्स चउत्थो अ वट्टए चंदो।

छट्ठो अ भग्गवगहो भूमिसुओ पंचमो कस्स ?।।9।।

कस्याष्टमो दिनकरः कस्य चतुर्थश्च वर्तते चन्द्रः।

षष्ठश्च भार्गवग्रहो भूमिसुतः पंचमः कस्य ?।।9।।

अन्वयः – कस्य, अष्टमः, दिनकरः, कस्य, चन्द्रः, चतुर्थः, च, वर्तते कस्य, भार्गवग्रहः, षष्ठः, च, भूमिसुतः, पंचमः, वर्तते।

अर्थ – किसके आठवें स्थान पर सूर्य है ? चन्द्रमा किसके चौथे स्थान पर है ? किसके छठे स्थान पर शुक्र एवं पाँचवें स्थान पर मंगल है ?।9।

भण कस्स जम्मछट्ठो जीवो णवमो तहेअ सूरसुओ।

जीअंते चंदणए को सो गोवालदारअं हरइ।।10।।

भण कस्य जन्मषष्ठो नवमस्तथैव सूरसुतः।

जीवति चन्दनके कः स गोपालदारकं हरति।।10।।

अन्वयः – भण, जीवः, कस्यः, जन्मषष्ठः, तथैव, सूरसुतः, (कस्य), नवमः ?, चन्दके, जीवति, सः, कः, (यः), गोपालदारकम्, हरति।

अर्थ – बतलाओ, बृहस्पति किसकी जन्म–राशि से छठे स्थान पर है ? तथा शनि नवें स्थान पर है ? चन्दनक के जिन्दा रहते हुए वह कौन है जो अहीर के बच्चे को छुड़ाये ले जा रहा है ?।10।

अवहरइ कोवि तुरिअं चंदणअ सवामि तुज्ज हिअएण।

जइ अद्धइददिणअरे गोवालअदारओ खुडिदो।।11।।

अन्वयः – हे चन्दनक ! तव, हृदयेन, शपे, कोऽपि, त्वरितं, (आर्यकम्) अपहरित, यथा, अर्धोदितदिनकरे, गोपालदारकः, खुटितः।

अर्थ – मैं तुम्हारे हृदय की सौगन्ध खाता हूँ। हे चन्दनक ! कोई जल्दी से आर्यक लिये जा रहा है। क्योंकि सूर्य के आधा निकलने के समय वह गोपाल–पुत्र भाग निकला था।11।

ओहारिओ पवहणो वच्चइ मज्झेण राअमग्गस्स।

एदं दाव विआरह कस्स कहिं पवसिओ पवहणो त्ति।।12।।

अपवारितं प्रवहणं व्रजति मध्येन राजमार्गस्य।

एतत्तावद्विचारय कस्य कुत्र प्रेषितं प्रवहणमिति।।12।।

अन्वयः – राजमार्गस्य, मध्येन, अपवारितं, प्रवहणं, व्रजति, एतत्, तावत्, विचारय, कस्य, प्रवहणं, कुत्र, प्रेषितम्, इति।

अर्थ – सड़क के बीचोबीच कपड़े से ढकी हुई गाड़ी जा रही है। यह सब पूछताछ करो कि किसकी गाड़ी है और कहाँ जा रही है।12।

को तं गुणारविंदं सीलमिअंकं जणो ण जाणादि।

आवण्णदुक्खमोक्खं चउसाअरसारअं रअणं।।13।।

कस्तं गुणारविन्दं शीलमृगांकं जनो न जानाति।

आपन्नदुःखमोक्षं चतुःसागरसारं रत्नम्।।13।।

अन्वयः – गुणारविन्दम्, शीलमृगांकम्, आपन्नदुःखमोक्षम्, चतुःसागरसारम्, रत्नम्, तम्, कः, जनः, न, जानाति।

अर्थ – गुणों में कमल के समान (सुन्दर), स्वभाव में चन्द्रमा के तुल्य (प्रिय), विपत्ति में पड़े हुए लोगों के दुःख को दूर करने वाले, चारों–सागरों के सारभूत रत्न उस (आर्य चारुदत्त) को कौन आदमी नहीं जानता ? (अर्थात् सभी उनको जानते हैं)।13।

द्वावेव पूजनीयाविह नगर्यां तिलकभूतौ च।

आर्या वसन्तसेना धर्मनिधिश्चारुदत्तश्च।।

दो ज्जेव पूअणीआ इह ण्अरीए तिलअ भूदा अ

अज्जा वसंतसेणा धम्मणिही चारुदत्तो अ।।14।।

अन्वयः – इह, नगर्याम्, द्वौ, एव, पूजनीयौ, तिलकभूतौ, च, आर्या, वसन्तसेना, धर्मनिधिः, चारुदत्तः, च।

अर्थ – इस (उज्जयिनी) नगरी में दो ही व्यक्ति पूजनीय एवं सिरमौर रूप हैं – आर्या वसन्तसेना और धर्मनिधि चारुदत्त।14।

जाणामि चारुदत्तं वसंतसेणं अ सुट्ठ जाणामि।

पत्तते अ राअकज्जे पिदरं पि अहं ण जाणामि।।15।।

जानामि चारुदतं वसन्तसेनां च सुष्ठु जानामि।

प्राप्ते च राजकार्ये पितरमप्यहं न जानामि।।15।।

अन्वयः – चारुदत्तम्, जानामि, वसन्तसेनाम्, च सुष्ठु जानामि, च, राजकार्ये, प्राप्ते, अहम्, पितरम्, अपि, न, जानामि।

अर्थ – वीरक – अरे चन्दनक – चारुदत्त को जानता हूँ और वसन्तसेना को भी भली भाँति जानता हूँ। (किन्तु) राजकीय कार्य पड़ने पर मैं (अपने) पिता को भी नहीं जानता हूँ।15।

एककार्यनियोगेऽपि नानयोस्तुल्यशीलता।

विवाहे च चितायां च यथा हुतभुजोर्द्वयोः।।16।।

अन्वयः — एककार्यनियोगे, अपि, अनयोः, तुल्यशीलता, न, यथा, विवाहे, च, चितायाम्, च, द्वयोः, हुतभुजोः।

अर्थ — इस प्रकार के ही काम में लगे रहने पर भी इन दोनों का स्वभाव एक समान नहीं है। जिस तरह विवाह की अग्नि तथा चिता की अग्नि — दोनों में समानता नहीं होती। (अर्थात् चन्दनक विवाह की आग के समान सुखदायी है और वीरक चिता की आग की तरह दुःखदायी है)।16।

भीमस्यानुकरिष्यामि बाहुः शस्त्रं भविष्यति।

वरं व्यायच्छतो मृत्युर्न गृहीतस्य बन्धने।।17।।

अन्वयः — (अहम्), भीमस्य, अनुकरिष्यामि, (मे) बाहुः, शस्त्रम् भविष्यति, व्यायच्छतः, (मम), मृत्युः, वरम्, बन्धने, गृहीतस्य, न।

अर्थ — (मैं) भीम की नकल करूंगा। (मेरी) भुजा ही शस्त्र होगी। लड़ते हुए मर जाना अच्छा है, कारागार में पड़े हुए का नहीं (मरना ठीक है)।17।

त्यजति किल तं जयश्रीर्जहति च मित्राणि बन्धुवर्गश्च।

भवति च सदोपहास्यो यः खलु शरणागतं त्यजति।।18।।

अन्वयः — यः, शरणगतम् त्यजति, तम्, जयश्रीः, खलु त्यजति, मित्राणि, बन्धुवर्गः, च, किल, जहति, (सः), सदा, उपहास्यः, च, भवति।

अर्थ — आर्यक — जो (व्यक्ति) शरण में आये हुए की रक्षा नहीं करता है, निश्चय ही उसको विजयलक्ष्मी त्याग देती है। मित्र तथा भाई—बन्धु भी उसे छोड़ देते हैं। और वह हमेशा हँसी का पात्र होता है।18।

भीदाभअप्पदाणं दत्तस्य परोवआरसिअस्स।

जइ होइ होउ णाओ तहवि हु लोए गुणो जेव।।19।।

भीताभयप्रदानं ददतः परोपकाररसिकस्य।

यदि भवति भवतु नाशस्तथापि खलु लोके गुण एव।।19।।

अन्वयः — भीताभयप्रदानम्, ददतः, परोपकाररसिकस्य, (जनस्य) यदि, नाशः, भवति, भवतु, तथापि, लोके, गुणः, एव, (भवति)।

अर्थ — डरे हुए को अभयदान देने वाले परोपकार करने के प्रेमी (आदमी) की यदि मृत्यु हो जाती है तो होने दो। मर जाने पर भी संसार में (उसकी) प्रशंसा ही होती है अर्थात् मुझे आर्यक की रक्षा करनी चाहिए, चाहे इसमें हमारी मृत्यु ही हो जाय।19।

संभमघग्घरकंठो तुमं पि जादो सि जं तुए मणिदं।

दिट्ठो मए खु अज्जो पुणो वि अज्जा वसतसेणेति।।20।।

संभ्रमघर्घरकण्ठस्त्वमपि जातोऽसि यत्त्वया भणितम्।

दृष्टो मया खल्वार्यः पुनरप्यार्या वसन्तसेनेति।।20।।

अन्वयः – त्वम्, अपि, संभ्रमघर्घरकण्ठः, जातः, असि, यत्, त्वया, (पूर्वम्), मया, खलु, आर्यः, दुष्ट पुनरपि, आर्या, वसन्तसेना, इति।

अर्थ – वीरक – घबड़ाहट के कारण तुम्हारी आवाज घर्घरा (लड़खड़ा) रही है। और तुमने (पहले) कहा मैंने आर्य को देख लिया और बाद में कहा आर्या वसन्तसेना को देख लिया। (इससे मुझे संदेह हो गया है।) ।20।

जाणंतो वि हु जादिं तुज्झ अ ण भणामि सीलविहवेण।

चिट्ठउ महच्चिअ मणे किं च कइत्थेण भग्गेण।।21।।

जानन्नपि खलु जातिं तव च न भणामि शीलविभवेन।

तिष्ठतु ममैव मनसि किं च कपित्थेन भग्नेन।।21।।

अन्वयः – तवः, जातिम्, खलु, जानन्, अपि, शीलविभवेन, न, भणामि, (सा), मम, एव, मनसि, तिष्ठतु, कपित्थेन, भग्नेन, च, किम्।

अर्थ – तुम्हारी जाति को ठीक–ठीक जानते हुए भी (अपनी) शील–सम्पन्नता के कारण नहीं कह रहा हूँ। (तुम्हारी जाति का नाम) मेरे ही मन में रहे, कैथ तोड़ने से क्या लाभ ? (अर्थात् तुम्हारी जाति प्रकट करने से तुम्हारी नीचता ही सिद्ध होगी। जिस प्रकार ऊपर से सुन्दर लगने वाले कैथ के फल को तोड़ने से अन्दर की निस्सारता प्रकट हो जाती है) ।21।

सिण्णसिलाअलहत्थो पुरिसाणं कुच्चगंठिसंठवणो।

कत्तरिवावुदहत्थो तुमं पि सेणावई जादो।।22।।

अन्वयः – शीर्णशिलातलहस्तः, पुरुषाणाम्, कूर्चग्रन्थिसंस्थापनः, कर्तरीव्यापृतहस्तः, त्वम्, अपि, सेनापतिः, जातः।

अर्थ – चन्दनक – (उस्तरा पैना करने के लिये) टूटे पत्थर के टुकड़े को हाथ में रखनेवाला, पुरुषों की दाढ़ी छीलनेवाला एवं कैंची चलाने में व्यस्त हाथवाला तू (नाई) भी सेनापति हो गया है।22।

जादी तुज्झ विसुद्धा मादा भेरी पिदा वि दे पडहो।

दुम्मुह ! करडअभादा तुमं पि सेणावई जादो।।23।।

जातिस्तव विशुद्धा माता भेरी पितापि ते पटहः।

दुर्मुख ! करटकभ्राता त्वमपि सेनापतिर्जातः।।23।।

अन्वयः – तव, जातिः, विशुद्धा, भेरी, ते माता, पिता, अपि, पटहः, हे दुर्मुख ! करटकभ्राता, त्वम्, अपि, सेनापतिः, जातः।

अर्थ – हे कटु बोलने वाले ! तुम्हारी जाति एकदम पवित्र है। भेरी (दुन्दुभि) माता है, पटह (तासा) पिता है, करटक (एक प्रकार का चमड़े से मढ़ा बाजा) के भाई तुम (चमार) भी सेनापति हो गये।23।

अये शस्त्रं मया प्राप्तं स्पन्दते दक्षिणो भुजः।

अनुकूलं च सकलं हन्त संरक्षितो ह्यहम्।।24।।

अन्वयः – अये, मया, शस्त्रम्, प्राप्तम्, दक्षिणः, भुजः, स्पन्दते, सकलम्, अनुकूलम्, हन्त ! अहम्, हि, संरक्षित।

अर्थ – आर्यक – (तलवार लेकर प्रसन्नतापूर्वक अपने आप)

अरे ! मैंने शस्त्र पा लिया। दायीं भुजा फड़क रही है। सब कुछ अनुकूल है। प्रसन्नता है, मैं बच गया हूँ।24।

एत्थ मए विण्णविदा पच्चइदा चंदणं पि सुमरेसि।

ण भणामि एस लुद्धो णेहस्स रसेण बोल्लामो।।25।।

अत्र मया विज्ञप्ता प्रत्ययिता चन्दनमपि स्मरसि।

न भणाम्येष लुब्धः स्नेहस्य रसेन ब्रूमः।।25।।

अन्वयः – अत्र, मया, विज्ञप्ता, प्रत्ययिता, (त्वम्), चन्दनम्, अपि, स्मरसि, एषः, लुब्धः (सन्), न, भणामि, (किन्तु) स्नेहस्य, रसेन, ब्रूमः।

अर्थ – चन्दनक – आर्ये ! आपसे मेरी विनती है कि इस विपत्ति से निकल जाने पर निश्चिन्तता की हालत में (मुझ) चन्दनक को भी याद रखना। (यह बात) मैं किसी लालच के कारण नहीं कह रहा हूँ, (बल्कि) स्नेह रस के कारण कह रहा हूँ (अर्थात् मेरे कहने का यह मतलब नहीं है कि राजा होने पर मुझे कोई बड़ा पद देना। मैं केवल प्रेमवश कह रहा हूँ)।25।

चन्दनचन्द्रशीलाढ्यो दैवादद्य सुहृन्मम।

चन्दनं भोः स्मरिष्यामि सिद्धादेशस्तथा यदि।।26।।

अन्वयः – चन्द्रशीलाढ्यः, चन्दनः, दैवात्, अद्य, मम, सुहृत्, (जातः), भोः (मित्र !), यदि, सिद्धादेशः, तथा (तदा), चन्दनम्, स्मरिष्यामि।

अर्थ – आर्यक – चन्द्रमा के समान (सुन्दर) स्वभाववाला चन्दनक संयोग से आज मेरा मित्र हो गया है। हे (मित्र) ! यदि सिद्ध की भविष्यवाणी सही निकली तो (मैं) चन्दनक को याद करूँगा।26।

अभअं तुह देउ हरो विण्हू बम्हा रवी अ चंदो अ।

हत्तूण सत्तूवक्खं सुंभणिसुंभे जधा देवी।।27।।

अभयं तव ददातु हरो विष्णुर्ब्रह्मा रविश्च चन्द्रश्च।

हत्वा शत्रुपक्षं शुम्भनिशुम्भौ यथा देवी।।27।।

अन्वयः – हरः, विष्णुः, ब्रह्मा, रविः, चन्द्रः, च, तव, अभयम्, ददातु, शत्रुपक्षम्, हत्वा, (तथैव, विजयम्, लभस्व), यथा, शुम्भनिशुम्भौ (हत्वा) देवी (प्राप्तवती)।

अर्थ – चन्दनक – शंकर, विष्णु, ब्रह्मा, सूर्य और चन्द्रमा तुम्हें अभय प्रदान करें। शत्रु के दल को मारकर (तुम उसी प्रकार विजय पाओ) जैसे शुम्भ एवं निशुम्भ को मारकर देवी ने पाया था।27।

सप्तमोऽंक

वणिज इव भान्ति तरवः पण्यानीव स्थितानि कुसुमानि।

शुल्कमिव साधयन्तो मधुकरपुरुषाः प्रविचरन्ति।।1।।

अन्वयः – तरवः, वणिजः, इवः, भान्ति, कुसुमानि, पण्यानि, इव, स्थितानि, मधुकरपुरुषाः, शुल्कम्, साधयन्तः, इव, प्रविचरन्ति।

अर्थ – विदूषक – अहा ! देखिये, देखिये पुष्पकरण्डक जीर्णोद्यान (पुराने बगीचे) की सुन्दरता को। चारुदत्त – मित्र

! ऐसा ही है। क्योंकि – वृक्ष बनियों जैसे लग रहे हैं। फूल बेची जाने वाली वस्तुओं के समान विराज रहे हैं। (सरकारी) पुरुषों की भाँति भौंरे कर वसूल करते हुए से फिर रहे हैं।1।

किं यात्यस्य पुरः शनैः प्रवहणं तस्यान्तरं मार्गते

भग्नेऽक्षे परिवर्तनं प्रकुरुते छिन्नोऽथ वा प्रग्रहः।

वर्त्मान्तोज्झितदारुवारितगतिर्मार्गान्तरं याचते

स्वैरं प्रेरितगोयुगः किमथवा स्वच्छन्दमागच्छति।।2।।

अन्वयः – किम्, अस्य, पुरः, प्रवहणम्, शनैः, याति, तस्य, अन्तरम्, मार्गते ? अक्षे, भग्ने, परिवर्तनम्, कुरुते ? अथवा, प्रग्रहः, छिन्नः ? (अथवा) 'वर्त्मान्तोज्झितदारुवारितगतिः (सन्), मार्गान्तरम्, याचते ? अथवा, स्वैरम्, प्रेरितगोयुगः, स्वच्छन्दम्, आगच्छति, किम् ?

अर्थ – चारुदत्त – तो क्यों देर कर रहा है?

क्या वर्धमानक के आगे कोई दूसरी गाड़ी धीरे–धीरे जा रही है ? और वह उस गाड़ी से आगे बढ़ने का रास्ता ढूँढ रहा है ? अथवा धुरा टूट जाने पर बदल रहा है ? अथवा रस्सी ही टूट गयी ? अथवा सड़क के बीचो–बीच रख छोड़े गये भारी काठ से रास्ता रूक जाने के कारण दूसरा मार्ग ढूँढ रहा है अथवा धीरे–धीरे बैलों को हाँकता हुआ मौज से आ रहा है क्या ?।2।

नरपतिपुरुषाणां दर्शनाद्भीतभीतः

सनिगडचरणत्वात्सावशेषापसारः।

अविदितमधिरूढो यामि साधोस्तु याने

परभृत इव नीडे रक्षितो वायसीभिः।।3।।

अन्वयः – नरपतिपुरुषाणाम्, दर्शनात्, भीतभीतः, सनिगडचरणत्वात्, सावशेषापसारः, (अहम्) वायसीभिः, नीडे, रक्षितः, परभृतः, इव, साधोः, याने, अविदितम्, (तु), अधिरूढः, (सन्), यामि।

अर्थ – (छिपकर बैठा हुआ आर्यक जिसमें ऐसी गाड़ी पर बैठा हुआ प्रवेश करके)

चेट – चलो बैलो ! चलो !

आर्यक – (अपने आप) राजपुरुषों को देखने से अत्यन्त डरा हुआ, बेड़ी से पैर जकड़े रहने के कारण पूर्णरूप से भाग निकलने में असमर्थ, मैं कौवों की स्त्रियों के द्वारा घोसले में पाले गये कोयल के समान, किसी सज्जन पुरुष की सवारी पर छिपे रूप से चढ़कर जा रहा हूँ।3।

स तावदस्माद्व्यसनार्णवोत्थितं निरीक्ष्य साधुः समुपैति निर्वृत्तिम्।

शरीरमेतद्गतमीदृशीं दशां धृतं मया तस्य महात्मनो गुणैः।।4।।

अन्वयः – तावत्, सः, साधुः, अस्मात्, व्यसनार्णवोत्थितम्, (माम्), निरीक्ष्य, निर्वृत्तिम्, समुपैति, ईदृशीम्, दशाम्, गतम्, एतत्, शरीरम्, मया, तस्य, महात्मनः, गुणैः, धृतम्।

अर्थ – वह सज्जन इस विपत्तिरूपी सागर से उबरा हुआ मुझे देखकर सुख को प्राप्त होंगे। मैंने ऐसी हालत में पड़े हुए इस शरीर को उन्हीं महात्मा के गुणों से ही धारण किया है।4।

करिकरसमबाहुः सिंहपीनोन्नतांसः

पृथुतरसमवक्षास्ताम्रलोलायताक्षः।

कथमिदमसमानं प्राप्त एवंविधो यो

वहति निगडमेकं पादलग्नं महात्मा।।5।।

अन्वयः – करिकरसमबाहुः, सिंहपीनोन्नतांसः, पृथुतरसमवक्षाः, ताम्रलोलायताक्षः, यः, एवंविधः, महात्मा, (अस्त, सः), कथम्, इदम्, असमानम्, (बन्धनम्) प्राप्तः, (सन्) पादलग्नम्, एकम्, निगडम्, वहति।

अर्थ – चारुदत्त – (गाड़ी पर चढ़कर और देखकर) अरे ! तो यह कौन है ?

हाथी के सूँड के समान जिसकी भुजाएँ हैं। सिंह के समान मोटे एवं ऊँचे जिसके कन्धे हैं। ऊँची एवं समतल जिसकी छाती है। ताँबे के रंग की, चंचल तथा बड़ी–बड़ी जिसकी आँखें हैं – इस प्रकार का जो यह महात्मा है (वह) कैसे इस अयोग्य हालत में पड़कर पैर में लगी हुई एक बेड़ी को धारण कर रहा है ?।5।

विधिनैवोपनीतस्त्वं चक्षुर्विषयमागतः।

अपि प्राणानहं जह्यां न तु त्वां शरणागतम्।।6।।

अन्वयः – विधिना, एव, उपनीतः, त्वम्, (मम), चक्षुर्विषयम्, आगतः, (असि)। अहम्, प्राणान्, अपि, जह्याम्, तु, शरणागतम्, त्वाम्, न।

अर्थ – चारुदत्त – भाग्य के द्वारा ही लाये तुम मेरी आँखों के विषय हुए हो। चाहे मैं प्राणों को भले ही छोड़ दूँ, किन्तु शरण में आये हुए तुमको नहीं छोड़ सकता।6।

चारुदत्तः – क्षेमेण व्रज बान्धवान्

आर्यकः – ननु मया लब्धो भवान्बान्धवः

चारुदत्तः – स्मर्तव्योऽस्मि कथान्तरेषु भवता

आर्यकः – स्वात्मापि विस्मर्यते।

चारुदत्तः – त्वां रक्षन्तु पथि प्रयान्तममराः

आर्यकः – संरक्षितोऽहं त्वया

चारुदत्तः – स्वैर्भाग्यैः परिरक्षितोऽसि

आर्यकः – ननु हे तत्रापि हेतुर्भवान्।।7।।

अन्वयः – क्षेमेण, बान्धवान्, व्रज। ननु, मया, भवान्, बान्धवः, लब्धः। भवता, कथान्तरेषु, स्मर्तव्यः, अस्मि। स्वात्मा, अपि, विस्मर्यते ? पथिः, प्रयान्तम्, त्वाम्, अमराः, रक्षन्तु, अहम्, त्वया, संरक्षितः। स्वैः, भाग्यैः, परिरक्षितः, असि। ननु, हे, तत्र, अपि, भवान्, हेतुः।

अर्थ –

चारुदत्त – कुशलता के साथ अपने सम्बन्धियों के पास जाओ।

आर्यक – निश्चय ही मैंने आपको ही सम्बन्धी पा लिया है।

चारुदत्त – (कभी–कभी) बातचीत में मेरी याद कर लेना।

आर्यक – क्या अपना आत्मा भी भुलाया जाता है ?

चारुदत्त – रास्ते में जाते हुए तुम्हारी रक्षा देवता करें।

आर्यक – मैं तुम्हारे द्वार बचाया गया अर्थात् रक्षित हुआ।

चारुदत्त – अपने भाग्यों के द्वारा बचाये गये हो।

आर्यक – मित्र ! निश्चय ही इसमें भी आप कारण हैं।7।

कृत्वैवं मनुजपतेर्महद्व्यलीकं

स्थातुं हि क्षणमपि न प्रशस्तमस्मिन्।

मैत्रेय ! क्षिप निगडं पुराणकूपे

पश्येयुः क्षितिपतयो हि चारदृष्ट्या।।8।।

अन्वयः – एवं, मनुजपतेः, महत्, व्यलीकम्, कृत्वा, अस्मिन्, (उद्याने), क्षणम्, अपि, स्थातुम्, हि, मैत्रेय ! निगडम्, पुराणकूपे, क्षिप, हि, क्षितिपतयः, चारदृष्ट्या, पश्येयुः।

अर्थ – चारुदत्त – इस प्रकार राजा का बहुत बड़ा अपराध करके इस बगीचे में क्षण भर भी रुकना उचित नहीं है। मैत्रेय ! बेड़ी को पुराने कुएँ में फेंक दो, क्योंकि राजा लोग दूत रूपी आँखों से देखते हैं।8।

अपश्यतोऽद्य तां कान्तां वामं स्फुरति लोचनम्।

अकारणपरित्रस्तं हृदयं व्यथते मम।।9।।

अन्वयः – अद्य, ताम्, कान्ताम्, अपश्यतः, मम, वामम्, लोचनम्, स्फुरति, अकारण– परित्रस्तम्, मम, हृदयम्, व्यथते।

अर्थ – आज उस प्रियतमा को न देखने वाले मेरी बायी आँख फड़क रही है। बिना कारण के ही घबराया हुआ मेरा हृदय पीड़ित हो रहा है।9।

अष्टमोऽंकः

शंजम्मध णिअपोटं णिच्चं जग्गेध झाणपडहेण।

विशमा इंदिअचोला हलंति चिलसचिदं धम्मं।।1।।

संयच्छत निजोदरं नित्यं जागत ध्यानपटहेन

विषमा इन्द्रियचौरा हरन्ति चिरसंचितं धर्मम्।।1।।

अन्वयः – निजोदरम्, संयच्छत, ध्यानपटहेन, नित्यम्, जाग्रत, विषयाः, इन्द्रियचौराः, चिरसिंचतम्, धर्मम्, हरन्ति।

अर्थ – भिक्षु (बौद्ध संन्यासी) – अरे अज्ञानी जनों ! धर्म का संचय करो –

अपने पेट को संकुचित करो अर्थात् कम खाओ। ध्यान रूपी नगाड़े से हमेशा जागते रहो, क्योंकि इन्द्रियरूपी बलशाली चोर बहुत दिनों से संचित किये गये धर्म छीन लेते हैं।1।

पंचजण जेण मालिदा इत्थिअ मालिअ गाम लक्खिदे।

अबले क चंडाल मालिदे अवसं वि शे णल शग्ग गाहदि।।2।।

पंचजना येन मारिता स्त्रियं मारयित्वा ग्रामो रक्षितः।

अबलः क्व चण्डालो मारितोऽवश्यमपि स नरः स्वर्गं गाहते।।2।।

अन्वयः – येन, पंचजनाः, मारिताः, स्त्रियम्, मारयित्वा, ग्रामः, रक्षितः, अबलः, चाण्डालः, च, मारितः, सः, नरः, अवश्यम्, स्वर्गम्, गाहते।

अर्थ – जिसने पाँच जनों (इन्द्रियों) को मार दिया अर्थात् भलीभाँति वश में कर लिया, अविद्या रूपी स्त्री को मार कर शरीर रूपी गाँव की रक्षा कर ली तथा घमण्ड रूप निर्बल चाण्डाल का वध कर डाला वह मनुष्य अवश्य ही स्वर्ग में विहार करता है।2।

शिल मुंडिदे तुंड मुंडिदे चित्त ण मुंडिदे कीश मुंडिदे।

जाह उण अ चित्त मुंडिदे शाहु शुट्ठु शिल ताह मुंडिदे।।3।।

शिरो मुण्डितं तुण्डं मुण्डितं चित्तं न मुण्डितं किमर्थं मुण्डितम्।

यस्य पुनश्च चित्तं मुण्डितं साधु सुष्ठु शिरस्तस्य मुण्डितम्।।3।।

अन्वयः – शिरः, मुण्डितम्, तुण्डम्, मुण्डितम् (किन्तु, यदि) चित्तम्, न, मुण्डितम्, (तदा) किमर्थम्, मुण्डितम् ? पुनः, यस्य, च, चित्तम्, साधु, मुण्डितम्, तस्य, शिरः, सुष्ठु, मुण्डितम्।

अर्थ – शिर मुँड़ाया, मुँह मुँड़ा लिया, किन्तु यदि चित्त नहीं मुँड़ाया तब किसलिए मुँड़ाया ? और फिर जिसका चित्त अच्छे प्रकार से मुँड़ा हुआ अर्थात् साफ है उसका शिर भली भाँति मुँड़ गया है अर्थात् चित्त के पवित्र रहने पर बालों का मुँड़ाना भी सार्थक है। यदि चित्त साफ नहीं है तो बालों का मुँड़ाना व्यर्थ की है।3।

अशरणशरणप्रमोदभूतैर्वनतरुभिः क्रियमाणचारुकर्म।

हृदयमिव दुरात्मनामगुप्तं नवमिव राज्यमनिर्जितोपभोग्यम्।।4।।

अन्वयः – अशरणशरणप्रमोदभूतैः, वनतरुभिः, क्रियमाणचारुकर्मः, दुरात्मनाम्, हृदयम्, इव, अगुप्तम्, नवम्, राज्यम्, इव, अनिर्जितापभोग्यम्, (उद्यानम्, भवान, पश्यत्)।

अर्थ – बिना घरवाले लोगों के लिये आश्रय तथा आनन्द स्वरूप वन–वृक्षों के द्वारा जिसमें सुन्दर कम किया जा रहा है अर्थात् आश्रय, छाया एवं फल–फूल दिया जा रहा है। जो दुष्ट मनुष्यों के हृदय के समान अनियन्त्रित हैं और नये राज्य की तरह भलीभाँति वश में नहीं किया गया और सबके उपभोग के योग्य है।4।

अद्याप्यस्य तथैव केशविरहाद्गौरी ललाटच्छविः

कालस्याल्पतया च चीवरकृतः स्कन्धे न जातः किणः।

नाभ्यस्ता च कषायवस्त्ररचना दूरं निगूढान्तरं

वस्त्रान्तं च पटोच्छ्रयात्प्रशिथिलं स्कन्धे न संतिष्ठते।।5।।

अन्वयः – अद्य, अपि, केशविरहात्, अस्य, ललाटच्छविः, तथैव, गौरी, कालस्य, अल्पतया, स्कन्धे, चीवरकृतः, किणः, च, न, जातः, कषायवस्त्ररचना, च, न, अभ्यस्ता, दूरम्, निगूढान्तरम्, पटोच्छ्रयात्, प्रशिथिलम्, वस्त्रान्तम्, च, स्कन्धे, न, संतिष्ठते।

अर्थ – विट – इसमें जानना क्या है ? देखो –

आज भी, शिर के बालों के मुँड़वा देने से इसके मस्तक की कान्ति वैसे ही अर्थात् मुँड़ाने के समय के समान ही गोरी है। थोड़ा ही समय बीतने से कन्धे पर कपड़े (की गठरी लटकाने) का चिह्न भी नहीं पड़ा है। इसने गेरुआ वस्त्र पहनना भी नहीं सीखा है। शरीर के मध्य भाग को बहुत अधिक ढकने वाला, कपड़े की लम्बाई के कारण ढीला–ढाला, कपड़े का छोर कन्धे पर नहीं ठहर रहा है।5।

विर्यस्तमनश्चेष्टैः शिलाशकलवर्ष्मभिः।

मांसवृक्षैरियं मूर्खैर्भाराक्रान्ता वसुंधरा।।6।।

अन्वयः — विपर्यस्तमनश्चेष्टैः, शिलाशकलवर्ष्मभिः, मांसवृक्षैः, मूर्खैः, इयम्, वसुन्धरा, भाराक्रान्ता, (वर्तते)।

अर्थ — विट — ताज्जुब की मूर्खता है — विपरीत मन और काम वाले, पत्थर की शिला के टुकड़े के समान शरीर वाले, मांस के पेड़ों जैसे मूर्खों के द्वारा यह पृथिवी बोझिल हो रही है।6।

अमी हि वृक्षाः फलपुष्पशोभिताः

कठोरनिष्पन्दलतोपवेष्टिताः।

नृपाज्ञयां रक्षिजनेन पालिता

नराः सदारा इव यान्ति निर्वृतिम्।।7।।

अन्वयः — फलपुष्पशोभिताः, कठोरनिष्पन्दलतोपवेष्टिताः, अमी, वृक्षाः, नृपाज्ञया, रक्षिजनेन, पालिताः, सदाराः, नराः, इव, निर्वृतिम्, यान्ति।

अर्थ — विट — छिनार के पुत्र ! बगीचे की शोभा देखो — फलों एवं फूलों से सुशोभित, मोटी, पकी तथा निश्चल लताओं के द्वारा भली—भाँति आलिंगित ये वृक्ष, राजा की आज्ञा से सिपाहियों के द्वारा रखवाली किये गये सपत्नीक पुरुषों के समान, सुख को प्राप्त कर रहे हैं।7।

बहुकुशुमविचित्तिदा अ भूमी

कुशुमभलेण विणामिदा अ रुक्खा

दुमशिहललदाअलंबमाणा

पणशफला विअ बाणला ललंति।।8।।

बहुकुसुमविचित्रता च भूमिः कुसुमभरेण विनामिताश्च वृक्षाः।

द्रुमशिखरलतावलम्बमानाः पनसफलानीव वानरा ललन्ति।।8।।

अन्वयः — भूमिः, च, बहुकुसुमविचित्रता, (अस्ति), वृक्षाः, च, कुसुमभरेण, विनामिताः, (सन्ति), द्रुमशिखरलतावलम्बमानाः, वानराः, पनसफलानि, इव, ललन्ति।

अर्थ — शकार — आप ठीक कह रहे हैं। पृथिवी अनेक रंग के फूलों से रंग—बिरंगी है। वृक्ष फूलों के बोझ से झुकाये गये हैं। पेड़ों के ऊपर की टहनियों में लटके हुए वानर कटहल के फल के समान सुशोभित हो रहे हैं।8।

स्त्रीभिर्विमानितानां कापुरुषाणां विवर्धते मदनः।

सत्पुरुषस्य स एव तु भवति मृदुर्नैव वा भवति।।9।।

अन्वयः — स्त्रीभिः, विमानितानाम्, कापुरुषाणाम्, मदनः, विवर्धते, तु, सत्पुरुषस्य, सः, एव, मृदुः, भवति, वा, न, एव, भवति।

अर्थ — स्त्रियों द्वारा तिरस्कृत नीच पुरुषों की कामवासना अधिक बढ़ जाती है। किन्तु सज्जन पुरुषों की कामवासना कम हो जाती है अथवा होती ही नहीं।9।

णहमज्झगदे शूले दुप्पेक्खे कुविदवाणलशलिच्छे।

भूमी दढशंतत्ता हदपुत्तशदेव्व गंधाली।।10।।

नभोमध्यगतः सूर्यो दुःप्रेक्ष्य कुपितवानरसदृशः।

भूमिर्दृढसंतप्ता हतपुत्रशतेव गान्धारी।।10।।

अन्वयः – नभोमध्यगतः, सूर्यः, कुपितवानरसदृशः, दुःप्रेक्ष्यः, (अस्ति), हतपुत्रशता, गान्धारी, इव, भूमिः, दृढसन्तप्ता, (जाता)।

अर्थ – आकाश के बीचोबीच स्थित सूर्य, क्रुद्ध हुए वानर के (मुँह के) समान, मुश्किल से देखा जा सकता है। मारे गये थे सौ पुत्र जिसके ऐसी गान्धारी के समान यह पृथिवी बहुत अधिक सन्तप्त (पृथिवी के पक्ष में – तपी हुई, गान्धारी के पक्ष में – दुःखी) है।10।

छायासुं प्रतिमुक्तशष्पकवलं निद्रायते गोकुलं

तृष्णातश्च निपीयते वनमृगैरुष्णं पयः सारसम्।

संतापादतिशंक्तिैर्न नगरीमार्गो नरैः सेव्यते

तप्तां भूमिमपास्य च प्रवहणं मन्ये क्वचित्संस्थितम्।।11।।

अन्वयः – प्रतिमुक्तशष्पकवलम्, गोकुलम्, छायासु, निद्रायते, तृष्णार्तैः, वनमृगैः, च, उष्णम्, सारसम्, पयः, निपीयते, संतापात्, अतिशंकितैः, नरैः, नगरीमार्गः, न, सेव्यते, (अतः, अहं) मन्ये (यत्), तप्ताम्, भूमिम्, अपास्य, प्रवहणम्, क्वचित्, संस्थितम् (अस्ति)।

अर्थ – विट – हाँ ऐसी ही बात है – गायों का झुण्ड कोमल घासों का चरना छोड़कर छाया में नींद ले रहा है। प्यास से व्याकुल जंगली जानवर सरोवरों का गर्म जल पी रहे हैं। गर्मी से अत्यन्त डरे हुए मनुष्य नगरी की सड़क से नहीं चल रहे हैं। अतः मैं समझता हूँ कि तपी हुई भूमि को छोड़कर वह गाड़ी कहीं (छाया में) ठहर गयी है।5।

शिलषि मम णिलीणे भाव शुज्जश्श पादे

शउणिखगविहंगा लुक्खशाहाशु लीणा।

णलपुलिशमणुश्शा उण्हदीहं शशंता

घलशलणणिशण्णा आदवं णिव्वहंति।।12।।

शिरसि मम निलीनो भाव ! सूर्यस्य पादः

शकुनिखगविहंगा वृक्षशाखासु लीनाः।

नरपुरुषमनुष्या उष्णदीर्घं श्वसन्तो

गृहशरणनिषण्णा आतपं निर्वहन्ति।।12।।

अन्वयः – हे भाव ! सूर्यस्य, पादः, मम, शिरसि, निलीनः, (अस्ति), शकुनिखगविहंगाः, वृक्षशाखासु, लीनाः, (सन्ति), नरपुरुषमनुष्याः, उष्णदीर्घम्, श्वसन्तः, गृहशरणनिषण्णाः, आतपम्, निर्वहन्ति।

अर्थ – शकार – श्रीमान् जी। सूर्य की किरण मेरे शिर पर पड़ रही हैं। पक्षी वृक्ष की डालों में छिप गये हैं। मनुष्य गर्म तथा लम्बी साँसें लेते हुए घर में बैठे हुए गर्मी को बिता रहे हैं।12।

हिंगुज्जले जीलकभद्दमुश्ते वचाह गंठी शगुडा अ शुंठी।

एशे मए शेविद गंधजुत्ती कधं ण हग्गे मधुलश्शले त्ति।।13।।

हिंगूज्वला जीरकभद्रमुस्ता वचाया ग्रन्थिः सगुडा च शुण्ठी।

एषा मया सेविता गन्धयुक्तिः कथं नाहं मधुरस्वर इति।।13।।

अन्वयः – हिंगूज्ज्वला, जीरकभद्रमुस्ता, वचायाः ग्रन्थिः, सगुडा, शुण्ठो, च, एषा, गन्धयुक्तिः, मया, सेविता, (तर्हि), अहम् कथम्, मधुरस्वरः, न, (भवेयम्) इति।

अर्थ – शकार – हींग मिलाने के कारण सफेद जीरा सहित नागर मोथा, वच की गाँठ और गुड़ मिलायी हुई सोंठ–इस सुगन्धित योग का मैंने (प्रतिदिन स्वर सुधारने के लिये) सेवन किया है, तो मैं मीठा स्वर वाला क्यों न होऊँ ?।13।

हिंगुज्जले दिण्णमलीचचुण्णे वग्घालिदे तेल्लधिएण मिश्शे।

भुत्ते मए पालहुदीअमंशे कधं ण हग्गे मधुलश्शलेत्ति।।14।।

हिंगूज्ज्वलं दत्तमरीचचूर्णं व्याघारितं तैलघृतेन मिश्रम्।

भुक्तं मया पारभृतीयमांसं कथं नाहं मधुरस्वर इति।।14।।

अन्वयः – हिंगूज्ज्वलम्, दत्तमरीचचूर्णम्, तैलघृतेन, मिश्रम्, व्याघारितम्, पारभृतीयमांसम्, मया, भुक्तम्, अहम्, कथम्, न, मधुरस्वरः, (भवेयम्), इति।

अर्थ – शकार – क्यों न गन्धर्व होऊँ ? मैंने हींग से वासित, काली मिर्च के चूर्ण से मिला हुआ तथा तेल एवं घी से मिला और बघारा हुआ कोयल का मांस खाया है, तो मैं मीठा स्वर वाला क्यों न होऊँ।14।

अवनतशिरसः प्रतियाम शीघ्रं पथि वृषभा इव वर्षताडिताक्षाः।

मम हि सदसि गौरवप्रियस्य कुलजनदर्शनकातरं हि चक्षुः।।15।।

अन्वयः – (तदा), पथि, वर्षताडिताक्षाः, वृषभाः, इव, अवनतशिरसः, (वयम्), शीघ्रम्, प्रयामः, हि, सदसि, गौरवप्रियस्य, मम, चक्षुः, कुलजनदर्शनकात्तरम्, हि।

अर्थ – विट – क्या स्त्री ? (तब तो) रास्ते में वर्षा (की धारा) से ताड़ित आँखों वाले बैलों के समान सिर नीचा किये हुए हम जल्द ही भाग चलें। क्योंकि समाज में बड़ाई चाहने वाले मेरी आँख कुलीन स्त्रियों को देखने में डरपोक है अर्थात् समर्थ नहीं है।15।

शरच्चन्द्रप्रतीकाशं पुलिनान्तरशायिनम्।

हंसी हंसं परित्यज्य वायसं समुपस्थिता।।16।।

अन्वयः – हंसी, शरच्चन्द्रप्रतीकाशम्, पुलिनान्तरशायिनम्, हंसम्, परित्यज्य, वायसम्, समुपस्थिता।

अर्थ – विट – (वसन्तसेना के देखकर, दुःखपूर्वक अपने आप) अरे ! कैसे हरिणी बाघ का पीछा कर रही है? अर्थात् वसन्तसेना दुष्ट शकार के पास कैसे आ रही है ? अरे ! खेद है – हंसी, शरद् ऋतु के चन्द्रमा के समान स्वच्छ नदी के दूसरे तट पर सोये हुए अथवा नदी के किनारेवाली भूमि में सोये हुए हंस को छोड़कर कौवे के पास आ गयी अर्थात् हंस के समान चारुदत्त को छोड़कर यह वसन्तसेना कौवे के तुल्य इस शकार के पास आ गई।16।

पूर्वं मानादवज्ञाय द्रव्यार्थे जननीवशात्।

अशौण्डीर्यस्वभावेन वेशभावेन मन्यते।।17।।

अन्वयः – पूर्वम्, मानात्, अवज्ञाय, (सम्प्रति), जननीवशात्, द्रव्यार्थे, (आगता, असि, अथवा) अशौण्डीर्यस्वभावेन, वेशभावेन (आगता, असि, इति) मन्यते।

अर्थ – (पास में) वसन्तसेने ! यह उचित नहीं, यह योग्य भी नहीं।

पहले घमण्ड के कारण दुत्कार कर माता के भेजने से घन के लिए – (आई हो)

वसन्तसेना – नहीं। (ऐसा कह कर शिर हिलाती है।)।

विट – (तब) स्वाभिमान से रहित स्वभाववाले वेश्यापन के कारण (आई हो) यह समझा जाय।17।

एशे पडामि चलणेशु विशालणेत्ते !

हश्तंजलिं दशणहे तव शुद्धदंति !।

जं तं मए अवकिदं मदणातुलेण

तं खम्मिदाशि वलगत्ति ! तव म्हि दाशे।।18।।

एष पादयोः पतामि। मातः, अम्बिके ! श्रृणु मम विज्ञप्तिम्।

एष पतामि चरणयोर्विशालनेत्रे ! हस्तांजलिं दशनखे तव शुद्धदन्ति !।

यत्तव मयापकृतं मदनातुरेण तत्क्षामितासि वरगात्रि ! तवास्मि दासः।।18।।

अन्वयः – हे विशालनेत्रे ! एषः, (अहम्), चरणयोः, पतामि, हे शुद्धदन्ति ! तव, (चरणयोः), दशनखे, हस्तांजलिम्, (करोमि), हे वरगात्रि ! मदनातुरेण, मया, यत्, तव, अपकृतम्, तत्, क्षामिता, असि, (अहम्), तव, दासः, अस्मि।

अर्थ – शकार – यह मैं तुम्हारे पैरों पर गिरता हूँ। (ऐसा कह कर, वसन्तसेना के पास जाकर) माता भवानी ! मेरी प्रार्थना सुनो।

हे बड़ी बड़ी आँखोंवाली ! यह मैं पैरों पर गिरता हूँ। हे सुन्दर दाँतों वाली! तुम्हारे पैरों के दश नखों में हाथों अंजलि रखता हूँ। हे सलोने शरीर वाली ! कामदेव से पीड़ित मैंने तुम्हारा जो बुरा किया है, उसको तुमसे क्षमा कराता हूँ अर्थात् माफ करने के लिये विनती करता हूँ। मैं तुम्हारा दास हूँ।18।

जे चुंबिदे अंबिकमादुकेहिं गदे ण देवाण वि जे पणामं

शे पाडिदे पादलेण मुंडे वणे शिआलेण जधा मुदंगे।।19।।

यच्चुम्बितमम्बिकामातृकाभिर्गतं न देवानामपि यत्प्रणामम्।

तत्पातितं पादतलेन मुण्डं वने श्रृगालेन यथा मृतांगम्।।19।।

अन्वयः – यत्, अम्बिकामातृकाभिः, चुम्बितम्, यत्, देवानाम्, अपि, प्रणामम्, न, गतम्, तत्, मुण्डम्, (त्वया), पादतलेन, (तथैव), पातितम्, यथा, वने, श्रृगालेन, मृतांगम्।

अर्थ – शकार – (क्रोध के साथ)

जिसे मेरी माता (अम्बिका) ने चूमा है, जो देवों के सामने प्रणाम करने के लिये भी नहीं झुका, उसी मेरे मस्तक को तूने पैर के तलवे से उसी प्रकार गिरा दिया जैसे वन में सियार के द्वारा मरा शरीर (कुचला जाता है)।19।

एदेहि दे दशणहुप्पलमंडलेहिं

हत्थेहि चाडुशदताडणलंपडेहिं।

कट्टामि दे वलतणुं णिअजाणकादो

केशेशु बालिदइअं वि जहा जडाऊ।।20।।

एताभ्यां ते दशनखोत्पलमण्डलाभ्यां

हस्ताभ्यां चाटुशतताडनलम्पटाभ्याम्।

कर्षामि ते वरतनुं निजयानका–

त्केशेषु बालिदयितामिव यथा जटायुः।।20।।

अन्वयः – दशखनोत्पलमण्डलाभ्याम्, चाटुशतताडनलम्पटाभ्याम्, एताभ्याम्, हस्ताभ्याम्, केशेषु, (गृहीत्वा), ते, वरतनुम्, निजयानकात्, (तथैव), कर्षामि, यथा, जटायुः, बालिदायिताम्, (अकर्षत्)।

अर्थ – शकार – दश नख रूपी कमल समूह से युक्त एवं मीठे वचनों के समान पीटने के लालची इन (अपने) हाथों से केश पकड़ कर तुम्हारे सुन्दर शरीर को अपनी गाड़ी से उसी प्रकार खींचता हूँ, जिस प्रकार जटायु ने बालि की स्त्री तारा को (खींचा था)।20।

अग्राह्या मूर्धजेष्वेताः स्त्रियो गुणसमन्विताः।

न लताः पल्लवच्छेदमहन्त्युपवनोद्भवाः।।21।।

अन्वयः – गुणसमन्विताः, एताः, स्त्रियः, मूर्धजेषु, अग्राह्याः, उपवनोद्भवाः, लताः, पल्लवच्छेदम्, न अर्हन्ति।

अर्थ – विट – गुणों से युक्त इन स्त्रियों के केश नहीं पकड़ने चाहिए। वृक्षवाटिका में पैदा होने वाली लताएँ पत्ता तोड़ने के योग्य नहीं होती अर्थात् उनका पत्ता तोड़ना ठीक नहीं होता।21।

जदिच्छशे लम्बदशा–विशालं

पावालअं शुत्तशदेहिं जुत्तम्।

मंशं च खादुं, तह तुट्टिट कादुं

चुहू चुहू चुक्कु चुहू चुहूत्ति।।22।।

यदीच्छसि लम्बदशाविशालं

प्रावारकं सूत्रशतैर्हि युक्तम्।

मांसं च खादितुं तथा तुष्टिं

कर्तुं चुहू चुहू चुक्कु चुहू चुहू इति।।22।।

अन्वयः – यदि, सूत्रशतैः, युक्तम्, लम्बदशाविशालम्, प्रावारकम्, तथा, चुहू, चुहू चुक्कु चुहू चुहू इति, (ध्वनिम्, कुर्वन), मांसम्, खादितुम्, तुष्टिम्, च, कर्तुम् इच्छसि।

अर्थ – यदि तुम सैंकड़ों सूतों से बने हुए, लम्बी किनारी वाले, विशाल दुपट्टे को मुझसे (लेना) चाहते हो और चुहू–चुहू, चुक्कु, चुहू–चुहू इस प्रकार (की आवाज के साथ चूसते हुए) मांस खाना और तृप्ति चाहते हो।22।

बालां स्त्रियं च नगरस्य विभूषणं च

वेश्यामवेशसदृशप्रणयोपचाराम्।

एनामनागसमहं यदि घातयामि

केनोडुपेन परलोकनदीं तरिष्ये।।23।।

अन्वयः – यदि, अहम्, नगरस्य, विभूषणम्, अवेशसदृशप्रणयोपचाराम्, वेश्याम्, बालाम्, अनागसम्, एनाम्, स्त्रियम्, घातयामि, (तर्हि), केन, उड्पेन, परलोकनदीम्, तरिष्ये ?

अर्थ – विट – (कानों को ढँककर) यदि मैं उज्जैन नगर की ललाम भूत, वेश्याओं के अयोग्य सच्चा प्रेम व्यवहार करने वाली अर्थात् कुलीन स्त्री की भाँति प्रेम व्यवहार करने वाली वेश्या, निरपराध, इस अबला को मारता हूँ तो परलोक की नदी (वैतरणी) को किस नौका से पार करूँगा ?।23।

पश्यन्ति मां दश दिशो वनदेवताश्च

चन्द्रश्च दीप्तकिरणश्च दिवाकरोऽयम्।

धर्मानिलौ च गगनं च तथान्तरात्मा

भूमिस्तथा सुकृतदुष्कृतसाक्षिभूताः।।24।।

अन्वयः – सुकृतदृष्कृतसाक्षिभूताः, दश, दिशः, वनवेवताः, च, चन्द्रः, च, दीप्तकिरणः, अयम्, दिवाकरः, च धर्मानिलौ, च, गगनम्, च, तथा, अन्तरात्मा, तथा, भूमिः, माम्, पश्यन्ति।

अर्थ – विट – पाप–पुण्य की साक्षी दशों दिशाएँ, वन की देवताएँ, चन्द्रमा और चमकती हुई किरणों वाला यह सूर्य, धर्म और हवा, आकाश और अन्तरात्मा तथा पृथिवी – (ये सब) मुझे देख रहे हैं।24।

जेण म्हि गब्भदाशे विणिम्मिदे भाअघेअदोशेहिं।

अहिंअं च ण कीणिश्शं तेण अकज्जं पलिहलामि।।25।।

येनास्मि गर्भदासो विनिर्मितो भागधेयदोषैः।

अधिकं च न क्रीणिष्यामि तेनाकार्यं परिहरामि।।25।।

अन्वयः – येन, भागधेयदोषैः, गर्भदासः, विनिर्मितः, अस्मिः, तेन, अधिकम्, न, क्रीणिष्यामि, अकार्यम्, च, परिहरामि।

अर्थ – चेट – मालिक ! पीटें चाहे मारें, किन्तु अनुचित काम नहीं करूँगा।

क्योंकि पूर्व जन्म के भाग्य के दोष के कारण मैं जन्म से ही दास बनाया गया हूँ। इसलिये (अनुचित काम करके पाप) अधिक नहीं मोल लूँगा। मैं अनुचित काम न करूँगा।25।

प्रेष्यः परत्र फलमिच्छति नास्य भर्त्ता।

तस्मादमी कथमिवाद्य न यान्ति नाशं

ये वर्धयन्त्यसदृशं सदृशं त्यजन्ति।।26।।

अन्वयः – परिभूतदशः, दरिद्रः, प्रेष्यः, अपि, एषः, परत्र, फलम्, नाम, इच्छति, (किन्तु), अस्य, भर्त्ता, न, (इच्छति), तस्मात्, ये, असदृशम्, वर्धयन्ति, सदृशम्, त्यजन्ति, अमी, अद्य, कथमिव, नाशम्, न, यान्ति।

अर्थ – दयनीय हालत वाला यह दरिद्र दास स्थावरक परलोक के फल की इच्छा करता है, किन्तु इसका स्वामी

(शकार) नहीं। तब जो (शकार जैसे) लोग अनुचित कामों की ढेर लगाते हैं और उचित काम को छोड़ देते हैं, वे आज ही विनाश को क्यों नहीं प्राप्त हो जाते ?।26।

रन्ध्रानुसारी विषमः कृतान्तो

यदस्य दास्यं तव चेश्वरत्वम्।

श्रियं त्वदीयां यदयं न

भुंक्ते यदेतदाज्ञां न भवान्करोति।।27।।

अन्वयः – कृतान्तः, रन्ध्रानुसारी, विषमः, (अस्ति), यत्, (तेन), अस्य, दास्यम्, तव, च, ईश्वरत्म्। (कृतम्)। यत्, अयम्, त्वदीयाम्, श्रियम्, न, भुंक्ते, यत्, भवान्, एतदाज्ञाम्, न, करोति।

अर्थ – और भी – दैव दोष देखनेवाला एवं उलटा कार्य करने वाला है, क्योंकि उसने इस धार्मिक चेट को दासता तथा तुम अधर्मी शकार को प्रभुता दी है, एवं जो यह चेट तुम्हारी धन–सम्पत्ति का उपभोग नहीं करता है। और आप इसके आज्ञाकारी नौकर नहीं है अर्थात् तुम्हारी जगह चेट की और चेट की जगह तुमको न देकर विधाता ने उलटा काम किया है।27।

शव्वकालं मए पुश्टे मंशेण अ घिएण अ।

अज्ज कज्जे शमुप्पण्णे जादे मे वेलिए कधं।।28।।

सर्वकालं मया पुष्टो मांसेन च घृतेन च।

अद्य कार्ये समुत्पन्ने जातो मे वैरी कथम्।।28।।

अन्वयः – सर्वकालम्, मया, मांसेन, च, घृतेन, च, पुष्टः, (त्वम्), अद्य, कार्ये, समुत्पन्ने, मे, वैरी, कथम्, जातः ?

अर्थ – सदा मैंने तुझे मांस और घी से पुष्ट किया है। आज काम आ पड़ने पर तू मेरा शत्रु कैसे हो गया है ?।28।

किं कुलेनोपदिष्टेन, शीलमेवात्र कारणम्।

भवन्ति सुतरां स्फीताः सुक्षेत्रे कण्टकिद्रुमाः।।29।।

अन्वयः – कुलेन, उपदिष्टेन, किम् ? (यतः), अत्र, शीलम्, एव, कारणम्, सुक्षेत्रे, कण्टकिद्रुमाः, सुतराम्, स्फीताः, भवन्ति।

अर्थ – विट – कुल का वर्णन से क्या लाभ ? क्योंकि इसमें (अनुचित काम करने में) तो स्वभाव ही कारण है। अच्छे खेत में भी काँटेदार पौधे बहुत अधिक समृद्ध हो जाते हैं (इसी तरह अच्छे कुल में भी बुरे आचरण वाले व्यक्ति पैदा हो जाते हैं)।29।

अस्मत्समक्षं हि वसन्तसेना

शौण्डीर्यभावान्न भजेत् मूर्खम्।

तस्मात्करोम्येष विविक्तमस्य

विविक्तविश्रम्भरसो हि कामः।।30।।

अन्वयः – वसन्तसेना, शौण्डीर्यभावात्, अस्मत्समक्षम्, मूर्खम्, न, भजेतः, तस्मात्, एषः, (अहम्), अस्याः, विविक्तम्, करोमिः, हि, कामः, विक्तिविश्रम्भरसः, (भवति)।

अर्थ – विट – (अपने आप) वसन्तसेना गर्वीलेपन की आदत के कारण हमारे सामने इस मूर्ख को शायद अंगीकार न करे। अतः मैं वसन्तसेना के लिए एकान्त कर देता हूँ, क्योंकि काम निर्जन एवं विश्वस्त स्थान में आनन्ददायक होता है।30।

शुवण्णअं देमि पिअं वदेमि पडेमि शिशेण शवेश्टणेण।

तधा वि मं णेच्छशि शुद्धदंति ! किं शेवअं कश्टमआ मणुश्शा।।31।।

सुवर्णकं ददामि प्रियं वदामि पतामि शीर्षेण सवेष्टनेन।

तथापि मां नेच्छसि शुद्धदन्ति ! किं सेवकं कष्टमया मनुष्याः।।31।।

अन्वयः – (अहम्, तुभ्यम्), सुवर्णकम्, ददामि, प्रियम्, वदामि, सवेष्टनेन, शीर्षेण, पतामि, तथापि, हे शुद्धदन्ति ! माम्, सेवकम्, किम्, न, इच्छसि ? (सत्यम्) मनुष्याः, कष्टमयाः, (भवन्ति)।

अर्थ – शकार – मैं तुम्हें सोना देता हूँ। मीठी बात कहता हूँ। पगड़ी बधे हुए शिर से (तुम्हारे पैरों पर) गिरता हूँ। तो भी हे चमकीले दाँतों वाली ! मुझ सेवक को क्यों नहीं चाहती हो ? (सच है) मनुष्य बड़े निर्दय होते हैं।31।

खलचरित निकृष्ट ! जातदोषः

कथमिह मां परिलोभयसे धनेन ?।

सुचरितचरितं विशुद्धदेहं

न हि कमलं मधुपाः परित्यजन्ति।।32।।

अन्वयः – हे खलचरित ! निकृष्ट ! (त्वम्), जातदोषः, (सन्), इह, माम्, धनेन, कथम्, परिलोभयसे ? मधुपाः, सुचरितचरितम्, विशुद्धदेहम्, कमलम्, हि, न, परित्यजन्ति।

अर्थ – वसन्तसेना – इसमें क्या सन्देह है ? (नीचे की ओर मुँह किये हुए 'खलचरित' आदि दो श्लोक पढ़ती हैं)

हे दुष्ट चरितवाले अधम् ! तुम अनेकों दोषों की खान होकर यहाँ मुझे धन से क्या लुभा रहे हो ? भौंरे सुन्दर स्वभाव एवं निर्मल आकार वाले कमल को नहीं छोड़ते हैं। अर्थात् मैं तुम्हारे धन के लालच से कमल की तरह पवित्र एवं गुणी चारुदत्त को नहीं छोड़ सकती।32।

यत्नेन सेवितव्यः पुरुषः कुलशीलवान् दरिद्रोऽपि।

शोभा हि पणस्त्रीणां सदृशजनसमाश्रयः कामः।।33।।

अन्वयः – कुलशीलवान्, पुरुषः, दरिद्रः, अपि, यत्नेन, सेवितव्यः, हि, सदृशजनसमाश्रयः, कामः, पणस्त्रीणाम्, शोभा (अस्ति)।

अर्थ – यदि सुन्दर कुल एवं स्वभाववाला पुरुष निर्धन हो तो ही यत्नपूर्णक उसकी सेवा करनी चाहिये अर्थात् उसके साथ विहार करना चाहिये। क्योंकि अपने योग्य आदमी के साथ किया गया प्रेम व्यवहार वेश्याओं की शोभा है।33।

किं शे शक्के वालिपुत्ते महिंदे लंभापुत्ते कालणेमी शुबंधू।

लुद्दे लाआ दोणपुत्ते जडाऊ चाणक्के वा धुंधुमाले तिशंकू।।34।।

किं स शक्रो बालिपुत्रो महेन्द्रो रम्भापुत्रः कालनेमिः सुबन्धुः।

रुद्रो राजा द्रोणपुत्रो जटायुश्चाणक्यो वा धुन्धुमारस्त्रिशंकुः।।34।।

अन्वयः — सः, किम्, शक्रः, बालिपुत्रः, महेन्द्रः ? रम्भापुत्रः, कालनेमिः, सुबन्धुः ? राजा, रुद्रः ? द्रोणपुत्रः, जटायुः ? चाणक्यः ? धुन्धुमारः, वा, त्रिशंकुः, (अस्ति) ?

अर्थ — शकार — वह (चारुदत्त) क्या इन्द्र है ? बलि का पुत्र महेन्द्र है ? या रम्भा का पुत्र कालनेमि अथवा सुबन्धु है? वह राजा रुद्र है अथवा द्रोण का पुत्र जटायु है ? अथवा चाणक्य है, धुन्धुमार अथवा त्रिशंकु है ? ।34।

चाणक्केण जधा शीदा मानिदा भालदे जुए।

एव्वं दे मोडइश्यामि जडाऊ विअ दोव्विदिं।।35।।

चाणक्येन यथा सीता मारिता भारते युगे।

एतं त्वां मोटयिष्यामि जटायुरिव द्रोपदीम्।।35।।

अन्वयः — यथा, भारते, युगे, चाणक्येन, सीता, मारिता, जटायुः, द्रौपदीम् इव, एवम्, त्वाम्, मोटयिष्यामि।

अर्थ — अथवा ये भी तुम्हारी रक्षा नहीं करते। जैसे भारत के युग में चाणक्य ने सीता को मारा था तथा जटायु ने द्रोपदी को (समाप्त कर दिया था) उसी प्रकार मैं तुझे मारूँगा।35।

एदं दोशकलंडिअं अविणअश्शावासभूदं खलं

लत्तं तश्श किलागदश्श लमणे कालागदं आअदं।

किं एशे शमुदाहलामि णिअअं बाहूण शूलत्तणं

णीशाशे वि मलेइ अंब शुमला शीदा जधा भालदे।।36।।

एतां दोषकरण्डिकामविनयस्यावासभूतां खलां

रक्तां तस्य किलागतस्य रमणे कालागतामागताम्।

किमेष समुदाहरामि निजकं बाह्णोः शूरत्वं

निःश्वासापि म्रियतेऽम्बा सुमृता सीता यथा भारते।।36।।

अन्वयः — दोषकरण्डिकाम्, अविनयस्य, आवासभूताम्, खलाम्, रक्ताम्, आगतस्य, तस्य, रमणे, आगताम्, किल, कालागताम्, एताम्, (हत्वा), एषः, (अहम्), निजकम्, बाह्णोः, शूरत्वम्, किम्, उदाहरामि ? निःश्वासा, अपि, अम्बा, (तथैव), म्रियते, यथा, भारते, सीता, सुमृता।

अर्थ — शकार — (प्रसन्नता के साथ) दोषों को पिटारी, उद्दण्डता का घर, दुष्ट, (चारुदत्त) से प्रेम करने वाली, यहाँ आये हुए उस (चारुदत्त) से रमण के लिए निश्चय ही मृत्यु के द्वारा लायी गयी इस वसन्तसेना को (मार कर) यह मैं भुजाओं के अपने पराक्रम का क्या वर्णन करूँ ? श्वास के न रहने पर भी यह माता वसन्तसेना उसी प्रकार मर रही है जिस प्रकार महाभारत के युग में सीता भली–भाँति मर गयी थी।36।

इच्छंतं मम णेच्छति ति गणिआ लोशेण मे मालिदा

शुण्णे पुप्फकलंडके त्ति शहशा पाशेण उत्ताशिदा।

शेवावंचिदभादुके मम पिदा मादेव शा दोप्पदी

जे शे पेक्खदि णेदिशं ववशिदं पुत्ताह शूलत्तणं।।37।।

इच्छन्तं मां नेच्छतीति गणिका रोषेण मया मारिता

शून्ये पुष्पकरण्डक इति सहसा पाशेनोत्त्रासिता।

स वा वंचितो भ्राता मम पिता मातेव सा द्रौपदी

योऽसौ पश्यति नेदृशं व्यवसितं पुत्रस्य शूरत्वम्।।37।।

अन्वयः – इच्छन्तम्, माम्, गणिका, न, इच्छति, इति, रोषेण, मया, शून्ये, पुष्पकरण्डके, सहसा, पाशेन, उत्त्रासिता, मारिता, च, सः, मम, भ्राता, वा, पिता, वंचितः, द्रौपदी, इव, सा, माता, च (वंचिता), यः, असौ, पुत्रस्य, ईदृशम्, शूरत्वम्, व्यवसितम्, च, न, पश्यति।

अर्थ – 'चाहनेवाले मुझको यह वेश्या नहीं चाहती है।' इसी क्रोध से मैंने इस निर्जन पुष्पकरण्डक नामक बगीचे में बाहुरूपी पाश से गला घोंटकर उसको मार डाला। वह मेरा भाई, मेरा पिता एवं द्रौपदी के समान मेरी माता वंचित रह गयी, जिसने अपने पुत्र के इस प्रकार वीरतापूर्ण कार्य को नहीं देखा।37।

दाक्षिण्योदकवाहिनी विगलिता याता स्वदेशं रति–

र्हा हालंकृतभूषणे सुवदने क्रीडारसोद्भासिनि!।

हा सौजन्यनदि प्रहासपुलिने हा मादृशामाश्रये !

हा हा नश्यति मन्मथस्य विपणिः सौभाग्यपण्याकरः।।38।।

अन्वयः – दाक्षिण्योदकवाहिनी, विगलिता, रतिः, स्वदेशम्, याताः, हा ! हा ! अलंकृत– भूषणे! हा प्रहासपुलिने ! सौजन्यनदि ! हा ! मादृशाम्, आश्रये ! हा ! हा ! मन्मथस्य, सौभाग्यपण्याकरः, नश्यति।

अर्थ – विट – (धीरज धारण करके करुणा पूर्व) हाय वसन्तसेना ! उदारता रूपी जल की नदी नष्ट हो गयी, कामदेव की स्त्री रति अपने देश (स्वर्ग) को चली गयी। हा ! आभूषणों को सुशोभित करने वाली ! सुन्दर मुँहवाली ! काम क्रीड़ा के आनन्द को प्रकाशित करने वाली ! हा ! हास–परिहास रूपी बालुकामय किनारों वाली किनारों वाली ! सुजनता की नदी ! हा ! हम जैसे लोगों को आश्रय देने वाली ! हाय! कामदेव की बाजार, सुन्दरता रूपी बेची जाने वाली चीजों की निधि नष्ट हो गयी।38।

किं नु नाम भवेत्कार्यमिदं येन त्वया कृतम्।

अपापा पापकल्पेन नगरश्रीर्निपातिता।।39।।

अन्वयः – किम्, नु, नाम, कार्यम्, भवेत्, येन, त्वया, इदम्, कृतम्, पापकल्पेन, (त्वया), अपापा, नगरश्रीः, निपातिता।

अर्थ – (आँखों में आँसू भर कर) अरे ! कष्ट है कष्ट। कौन सा काम पूरा होगा ? जिसके कारण तूने यह स्त्रीवध किया है। पाप के समान तूने पापरहित, नगर की लक्ष्मी को मार दिया है।39।

अत्थं शदं देमि शुवण्णअं दे कहावणं देमि शवोडिअं दे

एशे दुशद्दाण फलक्कमे मे शामाण्णए भोदु मणुश्शआणं।।40।।

अन्वयः – (अहम्) ते, शतम्, सुवर्णकम्, अर्थम्, ददामि, ते, सवोडिकम्, कार्षाणपम्, ददामि, दोषस्थानम्, मे, एषः, पराक्रमः, मनुष्याणाम्, सामान्यकः, भवतु।

अर्थ – शकार – मैं तुम्हें सौ सोने की मोहरों की धनराशि दूँगा। मैं तुम्हें बीस कौड़िओं के साथ एक कार्षापण दूँगा। अपराध का कारण मेरा यह पराक्रम (वसन्तसेना का वध) मनुष्यों का साधारण कार्य हो जाये (अर्थात् यह दोष किसी और साधारण मनुष्य पर लगा दो)।40।

अप्रीतिर्भवतु विमुच्यतां हि हासो

धिक्प्रीतिं परिभवकारिकामनार्याम्।

मा भूच्च त्वयि मम संगतं कदाचि–

दाच्छिन्नं धनुरिव निर्गुणं त्यजामि।।41।।

अन्वयः – हासः, विमुच्यताम्, अप्रीतिः, भवतु, हि, परिभवकारिकाम्, अनार्याम्, प्रीतिम्, धिक्, त्वयि, मम, संगतम्, कदाचित्, मा भूत्, च, आच्छिन्नम्, निर्गुणम्, धनुः, इव, (त्वाम्) त्यजामि।

अर्थ – विट – हँसी छोड़ो। मेरा और तुम्हारा प्रेम न हो। अनादर कराने वाली निन्दनीय इस मित्रता को धिक्कार है। मेरा एवं तुम्हारा साथ फिर कभी भी न हो। टूटे हुए तथा प्रत्यंचा रहित धनुष की भाँति अच्छे गुणों से हीन तुम्हें छोड़ रहा हूँ।41।

अपिततमपि तावत्सेवमानं भवन्तं

पतितमिव जनोऽयं मन्यते मामनार्यम्।

कथमहमनुयायां त्वां हतस्त्रीकमेनं

पुनरति नगरस्त्रीशंकितार्द्धाक्षिदृष्टम्।।42।।

अन्वयः – भवन्तम्, सेवमानम्, अपतितम्, अपि, माम्, अयम्, जनः, पतितम्, इव, मन्यतेः, (किन्तु, सम्प्रति) हतस्त्रीकम्, (अतः), नगरस्त्रीशंकितार्द्धाक्षिदृष्टम्, एनम्, त्वाम्, पुनरति, कथम्, अनुयायाम्।

अर्थ – विट – (वसन्तसेना को मारने के पहले भी) आपकी सेवा करते हुए पाप–रहित भी मुझको लोग दुर्जन एवं पापी जैसा समझते हैं। (परन्तु अब) स्त्री को मारने वाले अतः नगर की स्त्रियों के द्वारा शंकापूर्वक अधखुली आँखों से देखे गये तुम्हारा साथ फिर भी मैं कैसे दे सकता हूँ।42।

अन्यस्यामपि जातो मा वेश्या भूस्त्वं हि सुन्दरि !।

चारित्र्यगुणसंपन्ने जायेथा विमले कुले।।43।।

अन्वयः – हे सुन्दरि ! त्वम्, अन्यस्याम्, जातौ, अपि, वेश्या, मा भूः। हे चारित्र्यगुण– सम्पन्ने ! (त्वम्) विमले, कुले, जायेथाः।

अर्थ – हे सुन्दरी ! तुम दूसरे जन्म में भी वेश्या न होओ। चरित्रगुण से युक्त वसन्तसेना ! तुम किसी पवित्र खान–दान में पैदा होओ अथवा तुम किसी चरित्रगुण से सम्पन्न पवित्र कुल में जन्म लो।43।

चालुदत्तविणाशाय कलेमि कवडं णवं।

णअलीए विशुद्धाए पशुघादं व्व दालुणं।।44।।

चारुदत्तविनाशाय करोमि कपटं नवम्।

नगर्यां विशुद्धायां पशुघातमिव दारुणम्।।44।।

अन्वयः – (अस्याम्, विशुद्धायाम्, नगर्याम्, दारुणम्, पशुघातम्, इव, चारुदत्तविनाशाय, नवम्, कपटम्, करोमि)।

अर्थ – इस पवित्र नगरी में भयंकर पशुवध के समान चारुदत्त के विनाश के लिये मैं एक नया कपट करता हूँ।44।

एशे म्हि तुलिदतुलिदे लंकाणअलीए गअणे गच्छंते।

भूमिए पाआले हणूमशिहले विअ महेंदे।।45।।

एषोऽस्मि त्वरितत्वरितो लंकानगर्यां गगने गच्छन्।

भूम्यां पाताले हनूमच्छिखर इव महेन्द्रः।।45।।

अन्वयः – एषः, (अहम्), आकाशे, भूम्याम्, पाताले, हनुमच्छिखरे, लंकानगर्याम्, गच्छन्, महेन्द्रः, इव, त्वरितत्वरितः, (गच्छामि)।

अर्थ – यह मैं (शकार) आकाश भूमि, पाताल, एवं हनुमान की चोटी (वस्तुतः महेन्द्र पर्वत की चोटी) एवं लंका में (को) जाते हुए महेन्द्र (वस्तुतः हनुमान्) की भाँति बड़ी शीघ्रता से जा रहा हूँ।45।

वादादवेण तत्ता चीवलतोएण तिम्भिदा पत्ता।

एदे विथिण्णपत्त मण्णे पत्ता विअ फुलंति।।46।।

अन्वयः – वातातपेन, तप्तानि, एतानि, पत्राणि, चीवरतोयेन, स्तिमितानि, (सन्ति), विस्तीर्णपत्राणि, पक्षिण (पत्राणि) इव, स्फुरन्ति, (इति, अहम्), मन्ये।

अर्थ – हवा सहित घाम से तपे हुये ये पत्ते कपड़े के जल से कुछ गीला (आर्द्र) होकर मानों फैले हुए पंखवाले पक्षियों के समान हिल रहे हैं।46।

हत्थशंजदो मुहशंजदो इंडियशंजदो शे खु माणुशे।

किं कलेदि लाअउले तश्श पललोओ हत्थे णिच्चले।।47।।

हस्तसंयतो मुखसंयत इन्द्रियसंयतः स खलु मनुष्यः।

किं करोति राजकुलं तस्य परलोको हस्ते निश्चलः।।47।।

अन्वयः – स, खलु, मनुष्यः, (यः), हस्तसंयतः, मुखसंयतः, इन्द्रियसंयतः, (अस्ति), राजकुलम्, तस्य किम्, करोति, परलोकः, (तस्य) हस्ते, निश्चलः।

अर्थ – वही वस्तुतः मनुष्य है जिसका हाथ मुँह तथा इन्द्रियाँ भली–भाँति वश में रहती हैं। राज कुल उसका क्या कर सकता है ? परलोक (स्वर्ग आदि) उसके हाथ में निश्चित है अर्थात् मरने पर वह अवश्य ही अच्छे लोकों को जाता है।47।

नवमोऽंक

णहादेहं शलिलजलेहिं पाणिएहिं

उज्जाणे उववणकाणणे णिशण्णे।

णालीहिं शह जुवदीहिं इश्तिआहिं

गंधव्वेहिं शुविहिदएहिं अंगकेहिं।।1।।

स्नातोऽहं सलिलजलैः पानीयैरुद्यान उपवनकानने निषण्णः।

नारीभिः सह युवतीभिः स्त्रीभिर्गन्धर्व इव सुहितैरंगकैः।।1।।

अन्वयः – अहम्, सलिलजलैः, पानीयैः, स्नातः, नारीभिः, युवतीभिः, सह, उद्याने, उपवन– कानने, निषण्णः, सुहितैः, अंगकैः, गन्धर्व, इव, (प्रतीतः, भवामि)।

अर्थ – शकार – मैं पानी से नहाया हूँ। युवती स्त्रियों के साथ फूल के उपवन में बैठा हुआ सजे हुए अंगों से मैं गन्धर्व जैसा लगता हूँ।1।

खणेण गंठी खणजूलके मे खणेण बाला खणकुंतले वा।

खणेण मुक्के खण उद्धचूडे चित्ते विचित्ते हगे आलशाले।।2।।

क्षणेन ग्रन्थिः क्षणजूलिका मे क्षणेन बालाः क्षणकुन्तला वा

क्षणेन मुक्ताः क्षणमूर्ध्वचूडाश्चित्रो विचित्रोऽहं राजश्यालः।।2।।

अन्वयः – मे (केशेषु), क्षणेन, ग्रन्थिः, क्षणजूलिका, (भवति), क्षणेन, (ते) बालाः, वा, क्षणकुन्तलाः, क्षणेन, मुक्ताः, क्षणम्, ऊर्ध्वचूडाः (भवन्ति), (सत्यम्) अहम्, चित्रः, विचित्रः, राजश्यालः, (अस्मि)।

अर्थ – मेरे शिर के बालों में एक क्षण में गाँठ लगती है तो दूसरे क्षण में जूड़ा बँधती है। क्षण भर में वे मामूली बाल बन जाते हैं तो दूसरे क्षण में घुँघराले बाल हो जाते हैं। पुनः क्षणभर में ही वे बिखेर दिये जाते हैं तो क्षणभर में ही ऊपर की ओर जूड़ा बन जाते हैं। (सचमुच) मैं बड़ा ही चित्र–विचित्र राजा का साला हूँ।2।

छन्नं कार्यमुपक्षिपन्ति पुरुषा न्यायेन दूरीकृतं

स्वान्दोषान् कथयन्ति नाधिकरणे रागाभिभूताः स्वयम्।

तैः पक्षापरपक्षवर्धितबलेर्दोषैर्नृपः स्पृश्यते

संक्षेपादपवाद एव सुलभो द्रष्टुर्गुणो दूरतः।।3।।

अन्वयः – पुरुषाः, न्यायेन, दूरीकृतम्, कार्यम्, छन्नम्, (कृत्वा), उपक्षिपन्ति, रागाभिभूताः, (ते), अधिकरणे, स्वयम्, स्वान्, दोषान्, न, कथयन्ति, (अतः), पक्षापरपक्षवर्धितबलैः, तैः, दोषैः, नृपः, स्पृश्यते, संक्षेपात्, द्रष्टुः, अपवादः, एव, सुलभः, गुणः, (तु), दूरतः, (एव)।

अर्थ – मनुष्य (वादी तथा प्रतिवादी) न्यास से रहित अर्थात् अनुचित काम को छिपा करके (फैसला के लिये) उपस्थित करते हैं। (अपने प्रयोजन को सिद्ध करने को) आसिक्त अथवा क्रोध के वशीभूत वे लोग न्यायालय में स्वयं अपने दोषों को नहीं बतलाते हैं। इसलिए वादी और प्रतिवादी दोनों पक्षों से बढ़ाये गये बलवाले उन दोषों से राजा दूषित होता है (अर्थात् दोनों पक्ष जब बात को छिपा कर पेश करते हैं तब राजा भी ठीक–ठीक निर्णय नहीं कर पाता अतः वह भी दोषी ठहरता है)। संक्षेप में न्यायाधीश को अपयश मिलना ही आसान है, यश का मिलना तो दूर रहा।3।

छन्नं दोषमुदाहरन्ति कुपिता न्यायेन दूरीकृताः

स्वान्दोषान् कथयन्ति नाधिकरणे सन्तोऽपि नष्टा ध्रुवम्।

ये पक्षापरपक्षदोषसहिताः पापानि संकुर्वते

संक्षेपादपवाद एव सुलभो द्रष्टुगुणो दूरतः।।4।।

अन्वयः – कुपिताः, (अतः), न्यायेन, दूरीकृताः, (ये पुरुषाः), अधिकरणे, छन्नम्, दोषम्, उदाहरन्ति, (तथा), स्वान्, दोषान्, न, कथयन्ति, (एभिः, सह, ते), सन्तः, अपि, ध्रुवम्, नष्टाः, (भवन्ति), ये पक्षापरपक्षदोषसहिताः, पापानि, संकुर्वते, संक्षेपात्, द्रष्टुः, अपवादः, एव, सुलभः, गुणः, (तु), दूरतः, एव।

अर्थ – और भी – कुपित अतएव न्याय से हीन (जो पुरुष) न्यायालय में छिपा करके (दूसरों के) दोष उपस्थित करते

हैं, तथा न्यायालय में अपनी गलतियों को नहीं कहते हैं, (ऐसे लोगों के साथ) वे सज्जन व्यक्ति भी निश्चय ही नष्ट हो जाते हैं, जो वादी एवं प्रतिवादी के दोष में भागीदार होकर पाप करते हैं। संक्षेप में न्यायाधीश को अपयश मिलना ही आसान है, यश तो दूर रहा।4।

शास्त्रज्ञः कपटानुसारकुशती वक्ता न च क्रोधन–

स्तुल्यो मित्रपरस्वकेषु चरितं दृष्ट्वै दत्तोत्तरः।

क्लीबान्पालयिता शठान्व्यथयिता धर्म्यो न लोभान्वितो

द्वार्भावे परतत्त्वबद्धहृदयो राज्ञश्च कोपापहः।।5।।

अन्वयः – (अधिकरणिकः), शास्त्रज्ञः, कपटानुसारकुशली, वक्ता, न च क्रोधनः, मित्रपरस्व –केषु, तुल्यः, चरितम्, दृष्ट्वा, एव, दत्तोत्तरः, क्लीबान्, पालयिता, शठान, व्यथपिता, धर्म्यः, न, लोभान्वितः, द्वार्भावे, परतत्त्वबद्धहृदयः, च, राज्ञः, कोपापहः, (भवेत्)।

अर्थ – क्योंकि न्यायाधीश तो शास्त्रों को जानने वाला, (मनुष्यों को) कपट को पकड़ने में चतुर, वक्ता, क्रोध न करने वाला, मित्र, शत्रु एवं अपने लोगों में समान भाव रखने वाला, (वादी प्रतिवादी के) व्यवहार को देखकर ही उत्तर देने वाला, दुर्बलों का रक्षका, धूर्तों को दण्ड देने वाला, धार्मिक, निर्लोभी, उपाय रहते पूरी सही बात को खोज निकालने में दत्तचित्त एवं राजा के कोप को नष्ट करने वाला होना चाहिए।5।

लाअशशुले मम पिदा लाआ। तांदश्श होइ जामादा।

लाअशि आले हग्गे ममावि बहिणीवदी लाआ।।6।।

राजश्वशुरो मम पिता राजा तातस्य भवति जामाता।

राजश्यालोऽहं ममापि भगिनीपती राजा।।6।।

अन्वयः – मम, पिता, राजश्वसुरः, राजा, तातस्य, जमाता, भवति, अहम्, राजश्यालः, राजा, अपि, मम, भगिनीपतिः, (अस्ति)।

अर्थ – मेरे पिता राजा के ससुर हैं। राजा हमारे पिता जी के दामाद होते हैं। मैं राजा का साला हूँ। राजा भी मेरी बहन का पति है।6।

किं कुलेनोपदिष्टेन शीलमेवात्र कारणम्।

भवन्ति नितरां स्फीताः सुक्षेत्रे कण्टकिद्रुमाः।।7।।

अन्वयः – कुलेन, उपदिष्टेन, किम् ? शीलम्, एव, अत्र, कारणम्, सुक्षेत्रे, कण्टकिद्रुमाः, नितराम्, स्फीताः, भवन्ति।

अर्थ – आधिकरणिक – सब कुछ मालूम है, खान–दान के कहने से क्या (फायदा) ? (क्योंकि मनुष्य का) चरित्र ही यहाँ न्यायालय में (निर्णय का) कारण होता है। सुन्दर उपजाऊ खेत में काँटेदार वृक्ष बहुत अधिक बढ़ते हैं।7।

परिज्ञातस्य मे राज्ञा शीलेन च कुलेन च।

यत्सत्यमिदमाह्णानमवस्थामभिशंकते।।8।।

अन्वयः – राज्ञा, शीलेन, च, कुलेन, च, परिज्ञातस्य, मे, यत्, इदम्, आह्वानम्, (अस्ति, तत्) सत्यम्, अवस्थाम्, अभिशंकते।

अर्थ – चारुदत्त – (सोचकर) राजा के द्वारा स्वभाव एवं कुल से भली–भाँति जाने गये मेरा जो यह बुलावा है वह

सचमुच दरिद्रता के कारण शंका पैदा कर रहा है। (क्योंकि दोष गरीबों पर ही मढ़े जाते हैं) ।8।

ज्ञातो नु किं स खलु बन्धनविप्रयुक्तो

मार्गागतः प्रवहणेन मयापनीतः।

चारेक्षणस्य नृपतेः श्रुतिमागतो वा

येनाहमेवमभियुक्त इव प्रयामि।।9।।

अन्वयः – बन्धनविप्रयुक्ताः, मार्गागतः, सः, मया, प्रवहणेन, अपनीतः, (अयम्, विषयः), किम्, नु, खलु, चारेक्षणस्य, नृपतेः, ज्ञातः, वा, श्रुतिम्, आगतः, येन, अहम्, अभियुक्तः, इव, एवम्, प्रयामि।

अर्थ – कारागार से छूटा हुआ आर्यक रास्ते में मेरे पास आया और मैंने अपनी गाड़ी से उसे दूसरी जगह पहुँचा दिया – क्या यह बात दूत रूपी आँखों वाले राजा को मालूम हो गयी अथवा उन्होंने सुन लिया। जिससे कि मैं अपराधी के समान इस प्रकार (न्यायालय में) जा रहा हूँ।9।

रूक्षस्वरं वाशति वायसोऽय–

ममात्यभृत्या मुहुराह्णयन्ति।

सव्यं च नेत्रं स्फुरति प्रसह्य

ममानिमित्तनि हि खेदयन्ति।।10।।

अन्वयः – अयम्, वायसः, रूक्षस्वरम्, वाशति, अमात्यभृत्याः, मुहुः, आह्णयन्ति, च, सव्यम्, नेत्रम्, च, स्फुरति, अनिमित्तानि, हि, प्रसह्य, मम, खेदयन्ति।

अर्थ – चारुदत्त – (शंका के साथ) तब यह और क्या ? यह कौआ रूखी बोली में चिल्ला रहा है, मन्त्रियों के सेवक बार–बार बुला रहे हैं तथा मेरी बायीं आँख फड़क रही है और ये अपशकुन जबर्दस्ती मुझे उदास बना रहे हैं।10।

शुष्कवृक्षस्थितो ध्वांक्ष आदित्याभिमुखस्तथा।

मयि चोदयते वामं चक्षुर्घोरमसंशयम्।।11।।

अन्वयः – शुष्कवृक्षस्थितः, तथा, आदित्याभिमुखः, ध्वांक्षः, मयि, वामम्, चक्षुः, चोदयते, असंशयम्, घोरम्, (वर्तते)।

अर्थ – चारुदत्त – (घूम कर तथा आगे देख कर) सूखे वृक्ष पर सूर्य की ओर मुँह करके बैठा हुआ यह कौवा मेरे ऊपर अपनी बायीं आँख डाल रहा है। निश्चय ही कोई भयंकर विपत्ति है।11।

मयि विनिहितदृष्टिर्भिन्ननीलांजनाभः

स्फुरितविततजिह्णः शुक्लदंष्ट्राचतुष्कः।

अभिपतति, सरोषो जिह्मिताध्मातकुक्षि–

र्भुजगपतिरयं मे मार्गमाक्रम्य सुप्तः।।12।।

अन्वयः – भिन्ननीलांजनाभः, स्फुरितविततजिह्णः, शुक्लदंष्ट्राचतुष्कः, मे, मार्गम्, आक्रम्य, सुप्तः, अयम्, भुजगपतिः, सरोषः, जिह्मिताध्मातकुक्षिः, (तथा), मयि, विनिहितदृष्टिः, (सन्), अभिपतति।

अर्थ – (फिर दूसरी ओर देख कर) अरे ! क्या यह साँप ?

खूब फेंटे गये काले आँजन के समान रंग वाला, निकली हुई जीभ को लपलपाता हुआ, सफेद–सफेद चार दाँतों

वाला, मेरे रास्ते में फैल कर पड़ा हुआ यह बहुत बड़ा साँप क्रोधपूर्वक हवा से फूले हुए पेट को टेढ़ा करता हुआ मुझ पर आँख लगाये मेरी ओर झपट रहा है।12।

स्खलति चरणं भूमौ न्यस्तं न चार्द्रतमा मही

स्फुरति नयनं वामो बाहुर्मुहुश्च विकम्पते।

शकुनिरपरश्चायं तावद्विरौति हि नैकशः

कथयति महाघोरं मृत्युं न चात्र विचारणा।।13।।

अन्वयः – भूमौ, न्यस्तम्, चरणम्, स्खलति, मही, च, आर्द्रतमा, न, (वर्तते), स्फुरति, वामः, बाहुः, च, मुहुः, विकम्पते, अयम्, अपरः, शकुनिः, च, तावत्, नैकशः, विरौति, (एतत्, सर्वम्), महाघोरम्, मृत्युम्, कथयति, अत्र, च, विचारणा, न, (अस्ति)।

अर्थ – और भी, यह – जमीन पर रखा हुआ पैर फिसल रहा है – किन्तु भूमि भी गीली नहीं है। (बायीं) आँख फड़क रही है तथा बाँया बाहु बार–बार काँप रहा है। और यह दूसरा पक्षी भी बारम्बार चिल्ला रहा है। ये सब भयंकर मृत्यु की सूचना दे रहे हैं। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।13।

चिन्तासक्तनिमग्नमन्त्रिसलिलं दूतोर्मिशंखाकुलं

पर्यन्तस्थितचारक्रमकरं नागाश्वहिंस्राश्रयम्।

नानावाशककंकपक्षिरचितं कायस्थसर्पास्पदं

नीतिक्षुण्णतटं च राजकरणं हिंस्रैः समुद्रायते।।14।।

अन्वयः – चिन्तासक्तनिमग्नमन्त्रिसंलिलम्, दूतोर्मिशंखाकुलम्, पर्यन्तस्थितचारनक्रमकरम्, नागाश्वहिंस्राश्रयम्, नानावाशककंकपक्षिरचितम्, कायस्थसर्पास्पदम्, नीतिक्षुण्णतटम् च, राजकरणम्, हिंस्रैः, समुद्रायते।

अर्थ – सोच–विचार में लगे एवं डूबे हुए मन्त्री ही जिसमें जल हैं, जो लहर तथा शंख जैसे दूतों से भरा है, जहाँ चारों ओर रहने वाले गुप्तचर ही नक्र और मगर हैं, जहाँ हाथी–घोड़े रूपी भयंकर जन्तु मौजूद हैं, जो बहुत तरह से बोलने वाले (वादी–प्रतिवादी रूपी) कंक पक्षियों से भरा हुआ है, कायस्थ रूपी साँपों का घर, राजनीति से टूटा हुआ है। किनारा (मर्यादा) जिसका ऐसा यह राजकरण (कचहरी) घातक लोगों के कारण समुद्र के समान लग रहा है।14।

सव्यं मे स्पन्दते चक्षुर्विरौति वायसस्तथा।

पन्थाः सर्पेण रुद्धोऽयं, स्वस्ति चास्मासु दैवतः।।15।।

अन्वयः – मे, सव्यम्, चक्षुः, स्पन्दते, तथा, वायसः, विरौति, अयम्, पन्थाः, सर्पेण, रुद्धः, अस्मासु, दैवतः, स्वस्ति, (भविष्यति)।

अर्थ – अच्छा ! (प्रवेश करते हुए शिर टकराने का अभिनय करके सोच–विचार के साथ) ओह, यह दूसरा (अपशकुन) – मेरी बायीं आँख फड़क रही है तथा कौवा चिल्ला रहा है एवं रास्ता साँप से रुका है। मेरा भाग्य से ही कल्याण होगा।15।

घोणोन्नतं मुखमपांगविशालनेत्रं

नैतद्धि भाजनमकारणदूषणानाम्।

नागेषु गोषु तुरगेषु तथा नरेषु

नह्याकृतिः सुसदृशं विजहाति वृत्तम्।।16।।

अन्वयः – घोणोन्नतम्, अपांगविशालनेत्रम्, एतत्, मुखम्, हि, अकारणदूषणानाम्, भाजनम्, न, (भवितुम्, शक्नोति), (यतः) नागेषु, गोषु, तुरगेषु, तथा नरेषु, आकृतिः, सुसदृशम्, वृत्तम्, नहि, विजहाति।

अर्थ – तो प्रवेश करता हूँ (ऐसा कह कर प्रवेश करता है)

अधिकरणिक – यह है वह चारुदत्त। जो यह – ऊँची नाक से युक्त तथा विशाल कानों वाली आँखों से युक्त यह मुँह (अर्थात् चारुदत्त) निश्चय ही बिना कारण के अपराधों को कर्ता नहीं हो सकता। क्योंकि हाथी, गाय, घोड़ा तथा मनुष्य का चेहरा (आकार) अपने योग्य आचरण का त्याग नहीं करता (अर्थात् सुन्दर चेहरा अनुचित काम नहीं कर सकता)।16।

लज्जाए भीलुदाए वा चालित्तं अलिए णिगूहिदुं।

शअं मालिअ अत्थकालणाए दाणिं गूहदि ण तं हि भश्टके।।17।।

लज्जया भीरुतया वा चारित्रमलीकं निगूहितुम्।

स्वयं मारयित्वार्थकारणादिदानीं गूहति न तद्धि भट्टकः।।17।।

अन्वयः – अर्थकारणात्, स्वयम्, मारयित्वा, इदानीम्, (त्वम्), लज्जया, वा, भीरुतया, अलीकम्, चारित्रम्, निगूहितुम् (यतसे), (किन्तु) भट्टकः, हि, तत्, न, गूहति।

अर्थ – शकार – धन के लिये वसन्तसेना को स्वयं मार कर इस समय तू लज्जा अथवा डर के कारण अपने बुरे चरित को छिपाने की कोशिश कर रहा है। किन्तु राजा अथवा न्यायाधीश उसको नहीं छिपायेगा अर्थात् सारी बातें वह अवश्य प्रकट कर देगा।17।

व्यवहारः सविघ्नोऽयं त्यज लज्जां हृदि स्थिताम्।

ब्रूहि सत्यमलं धैर्यं छलमत्र न गृह्यते।।18।।

अन्वयः – अयम्, व्यवहार, सविघ्नः, (अतः) हृदि, स्थिताम्, लज्जाम्, त्यज, सत्यम्, ब्रूहि, धैर्यम्, अलम्, अत्र, छलम्, न, गृह्यते।

अर्थ – अधिकरणिक – यह मुकदमा (व्यवहार) संकटों से भरपूर है (अतः) हृदय में वर्तमान लज्जा छोड़ो। सच–सच बोलो। धैर्य धारण कर चुप रहना ठीक नहीं। यहाँ छल–कपट को नहीं माना जाता है।18।

अभ्युक्षितोऽसि सलिलैर्न बलाहकानां

चाषाग्रपक्षसदृशं भृशमन्तराले।

मिथ्यैतदाननमिदं भवतस्तथाहि

हेमन्तपद्ममिव निष्प्रभतामुपैति।।19।।

अन्वयः – एतत्, मिथ्या, (अस्ति), तथा हि, बलाहकानाम्, सलिलैः, अभयुक्षितः, न, असि, तथापि, अन्तराले, चाषाग्रपक्षसदृशम्, भवतः, इदम्, आननम्, हेमन्तपद्मम्, इव, निष्प्रभताम्, उपैति।

अर्थ – चारुदत्त – अरे ! अनर्गल बकने वाले ! यह एकदम झूठा है, उदाहरणार्थ – तुम बादलों के जल से भीगे नहीं हो, (किन्तु फिर भी इस बात को) कहने में नीलकण्ठ पक्षी की पाँख के छोर के समान आप का यह मुँह हेमन्त ऋतु में कमल की तरह एकदम मलिन हो रहा है।19।

तुलनं चाद्रिराजस्य समुद्रस्य च तारणम्।

ग्रहणं चानिलस्येव चारुदत्तस्य दूषणम्।।20।।

अन्वयः – चारुदत्तस्य, दूषणम्, अद्रिराजस्य, तुलनम्, समुद्रस्य, तारणम्, अनिलस्य, ग्रहणम्, इव, (वर्तते)।

अर्थ – अधिकरणिक – (अलग से) चारुदत्त का दोष निकालना पर्वतराज हिमालय के तौलने के समान, समुद्र को तैर कर पार करने के समान एवं हवा को पकड़ने के समान है (अर्थात् चारुदत्त को दोषी ठहराना आसान बात नहीं है।20।

वेदार्थान्प्राकृतस्त्वं वदसि, न च ते जिह्वा निपतिता,

मध्याह्ने वीक्षसेऽर्कं, न तव सहसा दृष्टिर्विचलिता।

दीप्ताग्नेः पाणिमन्तः क्षिपसि, स च ते दग्धो भवति नो

चारित्र्याच्चारुदत्तं चलयसि, न ते देहं हरति भूः।।21।।

अन्वयः – त्वम्, प्राकृतः, (सन्), वेदार्थान्, वदसि, (किन्तु), ते, जिह्वा, न, च, निपतिता, मध्यान्ह्ने, अर्कम्, वीक्षसे, (किन्तु), सहसा, तव, दृष्टिः, न, विचलिताः, दीप्ताग्नेः, अन्तः, पाणिम्, क्षिपसि, (किन्तु), ते, सः, दग्धः, नो, भवति, चारुदत्तम्, चारित्र्यात्, चलयसि, (किन्तु, भूः, ते देहम्, न हरति)।

अर्थ – अधिकरणिक – हट, मूर्ख ! तू नीच होकर भी वेदों का अर्थ कह रहा है, परन्तु तेरी जीभ नहीं गिरी। तू दोपहर के समय सूर्य को देख रहा है, किन्तु एकाएक तुम्हारी आँख चौंधिया नहीं गयी। तू धधकती आग के बीच में अपना हाथ डाल रहा है, किन्तु तेरा हाथ जल नहीं जा रहा है। तू चारुदत्त को चरित्र से भ्रष्ट कर रहा है अर्थात् बतला रहा है, परन्तु पृथिवी तुम्हारी देह को अपने भीतर छिपा नहीं लेती।21।

कृत्वा समुद्रमुदकोच्छ्रयमात्रशेषं

दत्तानि येन हि धनान्यनपेक्षितानि।

स श्रेयसां कथमिवैकनिधिर्महात्मा

पापं करिष्यति धनार्थमवैरिजुष्टम्।।22।।

अन्वयः – हि, येन, समुद्रम्, उदकोच्छ्रयमात्रशेषम्, कृत्वा, अनपेक्षितानि, धनानि, दत्तानि, श्रेयसाम्, एकनिधिः, सः, महात्मा, धनार्थम्, अवैरिजुष्टम्, पापम्, कथमिव, करिष्यति ?

अर्थ – आर्य चारुदत्त कैसे पाप काम करेंगे ? क्योंकि, जिसने रत्न दानकर करके समुद्र को केवल जल का ढेर मात्र बनाकर बिना माँगे ही बहुत धन दे डाला, कल्याणों का सबसे महान् आशय वही महात्मा चारुदत्त धन के लिये कैसे इस पाप को करेगा ? जिसको कि शत्रु भी नहीं कर सकते।22।

पादप्पहारपरिभवविमाणणबद्धगरुअवेरस्स।

अणुसोअंतस्स इअं कधं पि रत्ती पभादा मे।।23।।

पादप्रहारपरिभवविमाननाबद्धगुरुकवैरस्य।

अनुशोचत इयं कथमपि रात्रिः प्रभाता मे।।23।।

अन्वयः – पादप्रहारपरिभवविमाननाबद्धगुरुकवैरस्य, अनुशोचतः, मे, इयम्, रात्रिः, कथमपि, प्रभाता।

अर्थ – वीरक – (चन्दनक के द्वारा) पैर से मारने के अनादर से होने वाले अपमान के द्वारा बहुत बड़ा वैर बाँधने वाले मुझ वीरक की सोचते हुए ही यह रात किसी तरह से बीती है।23।

एष भो ! निर्मलज्योत्स्नो राहुणा ग्रस्यते शशी।

जलं कूलावपातेन प्रसन्नं कलुषायते।।24।।

अन्वयः – भो ! निर्मलज्योत्स्नः, एषः, शशी, राहुणा, ग्रस्यते, कूलावपातेन, प्रसन्नम्, जलम्, कलुषायते।

अर्थ – अधिकरणिक – दुःख है ! निर्मल चाँदनी वाला यह चन्द्रमा राहु के द्वारा ग्रसा जा रहा है। तट के गिरने से निर्मल जल गन्दा हो रहा है अर्थात् दुर्भाग्य के कारण निर्मल चरित्र वाला चारुदत्त कलंकित हो रहा है।24।

यथा यथेदं निपुणं विचार्यते तथा तथा संकटमेव दृश्यते।

अहो सुसन्नव्यवहारनीतयो, मतिस्तु गौः पंकगतेव सीदति।।25।।

अन्वयः – इदम्, यथा, मथा, निपुणम्, विचार्यते, तथा, तथा, संकटम्, एव, दृश्यते, अहो ! व्यवहारनीतयः, सुसन्नः, (भवन्ति), तु, मतिः, पंकगता, गौः, इव, सीदति।

अर्थ – अधिकरणिक – अहो ! संसार के व्यवहार की विलक्षणता का को धिक्कार है, यह (मुकदमा) जैसे जैसे सावधानी से विचारा जाता है वैसे – वैसे ही उलझा हुआ ही दिखलायी देता है। ओह ! मुकदमा (व्यवहार) के प्रमाण भली–भाँति पुष्ट हो रहे हैं। परन्तु मेरी बुद्धि कीचड़ में फँसी हुई गाय के समान खिन्न हो रही है।25।

यथैव पुष्पं प्रथमे विकाशे समेत्य पातुं मधुपाः पतन्ति।

एवं मनुष्यस्य विपत्तिकाले छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति।।26।।

अन्वयः – यथैव, प्रथमे, विकाशे, पुष्पम्, पातुम्, भ्रमराः, समेत्य, पतन्ति, एवम्, मनुष्यस्य, विपत्तिकाले, छिद्रेषु, अनर्थाः, बहुलीभवन्ति।

अर्थ – चारुदत्त – (अपने आप) जैसे पहले पहल खिलने के समय फूल का रस पीने के लिये भौंरे इकट्ठा होकर उस पर गिरते हैं, इसी तरह मनुष्य की आपत्ति के समय जरा सा दोष पाकर अनेक अनिष्ट आ घेरते हैं।26।

दुष्टात्मा परगुणमत्सरी मनुष्यो

रागान्धः परमिह हन्तुकामबुद्धिः।

किं यो यद्वदति मृषैव जातिदोषा–

त्तद्ग्राह्यं भवति, न तद्विचारणीयम्।।27।।

अन्वयः – इह, दुष्टात्मा, परगुणमत्सरी, रागान्धः, परम्, हन्तुकामबुद्धिः, यः, मनुष्यः, जातिदोषात्, मृषा, एव, यत्, वदति, किम्, तत्, ग्राह्यम्, भवति ? तत्, विचारणीयम्, न ?

अर्थ – चारुदत्त – यहाँ, दुरात्मा, दूसरे के गुणों के प्रति ईर्ष्या करने वाला, क्रोध से अन्धा, दूसरे को मारने की इच्छा वाला मनुष्य अपनी स्वाभाविक दुष्टता के कारण झूठा ही जो कुछ कहता है वह मानने के लायक होता है ? क्या वह विचार करने के योग्य नहीं होता ?।27।

योऽहं लतां कुसुमितामपि पुष्पहेतो–

राकृष्य नैव कुसुमावचयं करोमि।

सोऽहं कथं भ्रमरपक्षरुचौ सुदीर्घे

केशे प्रगृह्य रुदतीं प्रमदां निहन्मि ?।।28।।

अन्वयः – यः, अहम्, कुसुमिताम्, लताम्, अपि, पुष्पहेतोः, आकृष्य, पुष्पावचयम्, न, करोमि, सः, अहम्, भ्रमरपक्षरुचौ, सुदीर्घे, केशे, प्रगृह्य, रुदतीम्, प्रमदाम्, कथम्, निहन्मि ?

अर्थ – और भी – जो मैं फूली हुई लता को भी फूल लेने के लिये खींचकर फूल नहीं तोड़ता हूँ, वही मैं भौरों की पाँखों के समान काले रंग वाले लम्बे लम्बे बालों को पकड़ कर रोती हुई स्त्री को कैसे मार सकता हूँ।28।

मैत्रेय भोः ! किमिदमद्य ममोपघातो

हा ब्राह्मणि ! द्विजकुले विमले प्रसूता।

हा रोहसेन ! हि न पश्यसि मे विपत्तिं

मिथ्यैव नन्दसि परव्यसनेन नित्यम्।।29।।

अन्वयः – भो मैत्रेय ! इदम्, किम् ?, अद्य, मम, उपघातः, (आगतः) ? विमले, द्विजकुले, प्रसूता, हा ब्राह्मणि ! हा रोहसेन ! मे, विपत्तिम्, न हि, पश्यसिः, मिथ्या, एव, परव्यससेन, नित्यम्, नन्दसि।

अर्थ – हे मैत्रेय ! यह क्या ! आज मेरा विनाश आ गया है। निर्मल ब्राह्मण कुल में पैदा हुई हा ब्राह्मणी अर्थात् मेरी स्त्री हाय ! बेटा रोहसेन ! तुम मेरे विपत्ति नहीं देख रहे हो, व्यर्थ में ही केवल बालकों के लायक खिलवाड़ से हमेशा प्रसन्न हो रहे हो।29।

मया खलु नृशंसेन परलोकमजानता।

स्त्री रतिर्वाविशेषेण शेषमेषोऽभिधास्यति।।30।।

अन्वयः – परलोकम्, अजानता, नृशंसेन, मयाः, खलु, स्त्री, वा, अविशेषेण, रतिः, शेषम्, एषः, अभिधा यति।

अर्थ – चारुदत्त – मित्र ! परलोक को न जानने वाले एवं क्रूर मैंने एक स्त्री अथवा (यह कहना चाहिए कि) साक्षात् कामदेव की स्त्री रति को, ... शेष बात (अर्थात् मार दी) यह (शकार) बतलायेगा।30।

अयमेवंविधे काले दृष्टो भूषणविस्तरः।

अस्माकं भाग्यवैषम्यात्पतितः पातयिष्यति।।31।।

अन्वयः – एवंविधे, काले, अस्माकम्, भाग्य–वैषम्यात्, पतितः, (तथा, अधिकारिभिः), दृष्टः, अयम्, भूषणविस्तरः, पातयिष्यति।

अर्थ – चारुदत्त – (अलग से) ऐसे समय में हमारे भाग्य के दोष से गिरा हुआ तथा अधिकारियों द्वारा देखा गया आभूषणों का यह समूह मुझे विपत्ति में गिरा देगा।31।

दुर्बलं नृपतेश्चक्षुर्नैतत्तत्त्वं निरीक्षते।

केवलं वदतो दैन्यमश्लाघ्यं मरणं भवेत्।।32।।

अन्वयः – नृपतेः, चक्षुः, दुर्बलम्, एतत्, तत्त्वम्, न, निरीक्षते, (अतः), केवलम्, दैन्यम्, वदतः, (ममः), अश्लाध्यम्, मरणम्, भवेत्।

अर्थ – चारुदत्त – मित्र ! राजा (राजा के अधिकारियों) की आँख कमजोर होती है। यह इस सही बात को नहीं

देखती। केवल हीनतापूर्वक वचन कहना तो मेरा निन्दनीय मरण ही होगा अर्थात् दीनतापूर्ण बात कहना निन्दनीय मृत्यु के समान है।32।

अंगारकविरुद्धस्य प्रक्षीणस्य बृहस्पतेः।

ग्रहोऽयमपरः पार्श्वे धूमकेतुरिवोत्थितः।।33।।

अन्वयः – अंगारकविरुद्धस्य, प्रक्षीणस्य, बृहस्पतेः, पार्श्वे, धूमकेतुः, इव, अयम्, अपरः, ग्रहः, उत्थितः।

अर्थ – अधिकरणिक – दुःख है, अरे दुःख है – मंगल ग्रह जिसका विरोधी है ऐसे, दुर्बल बृहस्पति ग्रह के समीप पुच्छलतारा के समान यह (जेवरों का गिरना) दूसरा ग्रह प्रकट हुआ है।33।

वस्त्वन्तराणि सदृशानि भवन्ति नूनं

रूपस्य भूषणगुणस्य च कृत्रिमस्य।

दृष्ट्वा क्रियामनुकरोति हि शिल्पिवर्गः

सादृश्यमेव कृतहस्ततया च दृष्टम्।।34।।

अन्वयः – नूनम्, कृत्रिमस्य, रूपस्य, भूषणगुणस्य, च, सदृशानि, वस्त्वन्तराणि, भवन्ति, हि, शिल्पिवर्गः, दृष्ट्वा, क्रियाम्, अनुकरोति, कृतहस्ततया, एव, च सादृश्यम्, दृष्टम्।

अर्थ – अधिकरणिक – सेठ जी देखो – निश्चय ही बनावटी आकार एवं जेवरों के सुन्दरता आदि गुणों में दूसरी वस्तुयें भी एक जैसी होती हैं। क्योंकि कारीगर (किसी चीज को) देख कर (उसकी) बनावट की नकल करता है। (कारीगर) हाथ की सफाई के कारण ही (दो वस्तुओं में) समानता देखी जाती है।34।

सच्चेण सुहं खु लब्भइ सच्चालावेण होइ पावं।

सच्चं त्ति दुवेवि अक्खरा मा सच्चं अलिएण गूहेहि।।35।।

सत्येन सुखं खलु लभ्यते सत्यालापे न भवति पातकम्।

सत्यमिति द्वे अप्यक्षरे मा सत्यमलीकेन गूहय।।35।।

अन्वयः – सत्येन, खलु, सुखम्, लभ्यते, सत्यालापे, पातकम्, न, भवति, सत्यम्, इति, द्वे, अपि, अक्षरे, सत्यम्, अलीकेन, मा, गूहय।

अर्थ – श्रेष्ठी–कायस्थ – आर्य चारुदत्त ! यहाँ सच बोलना चाहिये। देखो, देखो, सत्य से निश्चय ही सुख मिलता है। सत्य बोलने पर पाप नहीं लगता। सत्य केवल दो अक्षर है। सत्य को असत्य से मत छिपाओ।35।

इदानीं सुकुमारेऽस्मिन्निःशकं कर्कशाः कशाः।

तव गात्रे पतिष्यन्ति सहास्माकं मनोरथैः।।36।।

अन्वयः – इदानीम्, सुकुमारे, अस्मिन्, तव, गात्रे, कर्कशाः, कशाः, अस्माकम्, मनोरथै, सह, निःशंकम्, पतिष्यन्ति।

अर्थ – अधिकरणिक – आर्य चारुदत्त ! सच बोलिये – अब सुकुमार तुम्हारे इस शरीर पर कठोर कोड़े, हम लोगों के मनोरथ के साथ ही निर्भयतापूर्वक पड़ेंगे (अर्थात् तुम्हें बचाने की हम लोगों की इच्छा गिर गयी है। अब तुम्हें कोड़े लगेंगे)।36।

अपापानां कुले जाते मयि पापं न विद्यते।

यदि संभाव्यते पापमपापेन च किं मया ?।।37।।

अन्वयः – अपापानाम, कुले, जाते, मयि, पापम्, विद्यते, यदि, (मयि), पापम्, संभाव्ये, (तर्हि), अपापेन, च, मया, किम् ?।

अर्थ – अपापानाम, कुले, जाते, मयि, पापम्, विद्यते, यदि, (मयि), पापम्, संभाव्ये, (तर्हि), अपापेन, च, मया, किम्? ।37।

मया किल नृशंसेन लोकद्वयमजानता।

स्त्रीरत्नं च विशेषेण शेषमेषोऽभिधास्यति।।38।।

अन्वयः – परलोकम्, अजानता, नृशंसेन, मया, खलु, स्त्री, वा, अविशेषेण, रतिः, शेषम्, एषः, अभिधास्यति।

अर्थ – (अपने आप) और वसन्तसेना से रहित मेरे जीने से क्या मतलब ? (प्रकट रूप में) अजी ! अधिक क्या – दोनों लोकों (इस लोक और स्वर्ग लोक) को न जानने वाले तथा क्रूर मैंने विशेष रूप से रत्नस्वरूप एक स्त्री को ..... शेष (अर्थात् मार दी) यह (शकार) कहेगा।38।

अयं हि पातकी विप्रो न वध्यो मनुरब्रवीत्।

राष्ट्रादस्मात्तु निर्वास्यो विभवैरक्षतैः सह।।39।।

अन्वयः – अयम्, विप्रः, पातकी, (अस्ति, तथाऽपि), न हि, वध्यः (इति), मनुः, अब्रवीत्, तु, अक्षतैः, विभवैः, सह, अस्मात्, राष्ट्रात्, निर्वास्यः।

अर्थ – यह ब्राह्मण पापी होने पर भी वध करने के योग्य नहीं है, ऐसा मनु ने कहा है, किन्तु समूची सम्पत्ति के साथ इसे इस राष्ट्र से बाहर निकाल देना चाहिये।39।

ईदृशे व्यवहाराग्नौ मन्त्रिभिः परिपातिताः।

स्थाने खलु महीपाला गच्छन्ति कृपणां दशाम्।।40।।

अन्वयः – मन्त्रिभिः, ईदृशे, व्यवहाराग्नौ परिपातिताः, महीपालाः, कृपणाम्, दशाम्, गच्छन्ति, (इति), स्थाने खलु।

अर्थ – चारुदत्त – अहह ! राजा पालक बिना बिचारे काम करने वाला है। अथवा मन्त्रियों के द्वारा इस तरह की मुकदमा विचार रूपी आग में झोंके (डाले) गये राजा लोग शोचनीय दशा को प्राप्त होते हैं, यह ठीक ही है।40।

ईदृशैः श्वेतकाकीयै राज्ञः शासनदूषकैः।

अपापानां सहस्राणि हन्यन्ते च हतानि च।।41।।

अन्वयः – श्वेतकाकीयैः, राज्ञः, शासनदूषकैः, ईदृशैः, (अधिकरणिकैः), अपापानाम्, सहस्राणि, हतानि, च, हन्यन्ते, च।

अर्थ – और भी – 'कौवा सफेद है' इस प्रकार का भी विश्वास कर लेने वाले, राजा के शासन को दूषित करने वाले ऐसे (न्यायाधीशों) के द्वारा हजारों निरपराध आदमी मारे गये हैं और अब भी मारे जाते हैं।41।

नृणां लोकान्तरस्थानां देहप्रतिकृतिः सुतः।

मयि यो वै तव स्नेहो रोहसेने स युज्यताम्।।42।।

अन्वयः – सुतः, लोकान्तरस्थानाम्, नृणाम्, देहप्रतिकृतः, (भवति), (अतः), मयि, तव, यः, स्नेहः, सः, रोहसेने, वै, युज्यताम्।

अर्थ – चारुदत्त – पुत्र परलोक में गये हुये लोगों का अपना प्रतिनिधि होता है। इसलिये मेरे ऊपर तुम्हारा जो प्रेम

है उसे रोहसेन में लगा दिया जाय।42।

विषसलिलतुलाग्निप्रार्थिते मे विचारे

क्रकचमिह शरीरे वीक्ष्य दातव्यमद्य।

अथ रिपुवचनाद्वा ब्राह्मणं मां निहंसि

पतसि नरकमध्ये पुत्रपौत्रैः समेतः।।43।।

अन्वयः – विषसलिलतुलाग्निप्रार्थिते, मे, विचारे (सति), वीक्ष्य, अद्य, इह, शरीरे, क्रकचम्, दातव्यम्, अथ, रिपुवचनात्, वा, माम् ब्राह्मणम्, निहंसि, (चेत्), पुत्रपौत्रैः, समेतः, नरकमध्ये, पतसि।

अर्थ – चारुदत्त – (करुणा के साथ, मैत्रेय भोः 'किमिदमद्य' 9/29 इत्यादि पढ़ता है, आकाश में) मेरे मुकदमा के निर्णय में विष, जल, तराजू (तुला) तथा आग के द्वारा (दिव्य) परीक्षा की प्रार्थना मेरे द्वारा करने पर, उसे भली–भाँति देखकर ही आज मेरे इस शरीर पर आरा चलाना चाहिये किन्तु यदि शत्रु (शकार) के कहने से ही (हे राजन्) मुझ ब्राह्मण को मारते हो तो तुम पुत्र तथा पौत्रों के साथ (अर्थात् अपने समूचे खान– दान के साथ) नरक में गिरोगे।43।

दशमोऽंक

तक्किं ण कलअ कालण णववहबंधणअणे णिउणा।

अचिलेण शीशलेअणशूलालोवेशु कुशलम्ह।।1।।

तत्किं न कलय कारणं नववधबन्धनयने निपुणौ।

आचरेण शीर्षच्छेदनशूलारोपेषु कुशलौ स्वः।।1।।

अन्वयः – तत्, किम्, कारणम्, न, कलय, (आवाम्), नववधबन्धनयने, निपुणौ, अचिरेण, शीर्षच्छेदनशूलारोपेषु, कुशलौ, स्वः।

अर्थ – दोनों – (चाण्डाल) – तो क्या (इस रास्ते से हमारे जाने का) मतलब तुम नहीं जानते हो ? हम दोनों (प्रतिदिन के) नये वध और बन्धन के लिये (किसी अपराधी को) ले जाने में परम चतुर हैं, बहुत जल्द शिर काटने और शूली (फाँसी) पर चढ़ाने में निपुण हैं।1।

दिण्णकलवीलदामे गहिदे अम्हेहिं वज्झपुलिसेहिं।

दीवे व्व मंदणेहे थोअं खअं जादि।।2।।

दत्तकरवीरदामा गृहीत आवाभ्यां वध्यपुरुषाभ्याम्।

दीप इव मन्दस्नेहः स्तोकं स्तोकं क्षयं याति।।2।।

अन्वयः – दत्तकरवीरदामा, आवाभ्याम्, वध्यपुरुषाभ्याम्, गृहीतः, (एषः, आर्य – चारुदत्तः), मन्दस्नेहः, दीपः, इव, स्तोकम्, स्तोकम्, क्षयम्, याति।

अर्थ – हटो माननीय जनों, हटो। यह आर्य चारुदत्त – पहनायी गयी कनेर की माला वाला, वध करने के लिये गये (नियुक्त) हम दोनों जनों के द्वारा पकड़ा गया (यह चारुदत्त) कम तेल वाले दीपक की भाँति धीरे धीरे नाश को प्राप्त हो रहा है।2।

नयनसलिलसिक्तं पांशुरुक्षीकृतांग

पितृवनसुमनोभिर्वेष्टितं मे शरीरम्।

विरसमिह रटन्तो रक्तगन्धानुलिप्तं

बलिमिव परिभोक्तुं वायसास्तर्कयन्ति।।3।।

अन्वयः – इह, विरसम्, रटन्तः, वायसाः, नयनसलिलसिक्तम्, पाशुरुक्षीकृतांगम्, पितृवन– सुमनोभिः, वेष्टितम्, रक्तगन्धानुलिप्तम्, मे, शरीरम्, बलिम्, इव, परिभोक्तुम्, तर्कयन्ति।

अर्थ – चारुदत्त – (दुःख के साथ) – यहाँ कर्कश शब्द करते हुये कौवे आँसुओं से भीगे हुये, धूलि–धूसरित अंगवाले, श्मशान के फूलों से ढके हुए लालचन्दन से पुते हुए मेरे इस शरीर को बलि के समान खाने का विचार कर रहे हैं।3।

किं पेक्खध छिज्जंतं शप्पुलिशं कालपलशुधालाहिं ?

शुअणशउणाधिवाशं शज्जणपुलिशद्दुमं एदं।।4।।

किं पश्यत छिद्यमानं सत्पुरुषाः कालपरशुधाराभिः।

सुजनशकुनाधिवासं सज्जनपुरुषद्रुममेतम्।।4।।

अन्वयः– हे सत्पुरुषाः! सुजनशकुनाधिवासस्, एतम्, सज्जनपुरुषद्रुमम्, कालपरशु– धाराभिः, छिद्यमानम्, किम्, पश्यत?

अर्थ – दोनों चाण्डाल – हटो महानुभावो, हटो – हे सत्य पुरुषो ! सज्जन रूपी पक्षियों के आश्रय–स्थान, साधु पुरुष रूपी इस वृक्ष को कालरूपी कुल्हाड़ी की धारों से काटे जाते हुए क्यों देखते हो ? अर्थात् सत्पुरुष का वध देखना उचित नहीं है, अतः हट जाओ।4।

सर्वगात्रेषु विन्यस्तै रक्तचन्दनहस्तकैः।

पिष्टचूर्णावकीर्णश्च पुरुषोहं पशूकृतः।।5।।

अन्वयः – सर्वगात्रेषु, विन्यस्तैः, रक्तचन्दनहस्तकैः, पिष्टचूर्णावकीर्णः, च, अहम्, पुरुषः, पशूकृतः।

अर्थ – आओ रे चारुदत्त आओ। चारुदत्त – पुरुषों के भाग्यों के काम अचिन्तनीय हुआ करते हैं, जो कि मैं ऐसी दशा को प्राप्त हो गया हूँ।

सभी अंगों पर लगाये गये लाल चन्दन के हाथ–छापे (हाथ के चिन्ह) के द्वारा एवं (चावल के) आटे और (तिल के) चूरे से व्याप्त करके मुझ पुरुष को ही (बलि का) पशु बना दिया गया है।5।

अमी हि दृष्ट्वा मदुपेतमेतन्मर्त्यं धिगस्त्वित्युपजातबाष्पाः।

अशक्नुवन्तः परिरक्षितुं मां स्वर्गं लभस्वेति वदन्ति पौराः।।6।।

अन्वयः – अमीः, हि, पौराः, मदुपेतम्, एतत्, दृष्ट्वा, मर्त्यम्, धिक्, अस्तु, इतिः, (उक्त्वा), उपजातबाष्पाः, माम्, परिरक्षितुम्, अशक्नुवन्तः, स्वर्गम्, लभस्व, इति, वदन्ति।

अर्थ – (सामने देखकर) लोगों का समूह आश्चर्यजनक है। (करुणा के साथ) –

ये नगर के निवासी मेरे द्वारा पाई गयी इस हालत को देखकर (अर्थात् मुझे इस हालत में देखकर), यह कह कर कि– क्षणभंगुर मनुष्य को धिक्कार है, आँखों में आँसू भरे हुए, मुझ को बचाने में असमर्थ होते हुए 'तुम स्वर्ग पाओ,

यह कह रहे हैं' ।6।

इंदे प्पवाहिअंते गोप्पशवे शंकमं च तालाणं।

शुपुलिशपाणविपत्ति चत्तालि इमे ण दट्टव्वा।।7।।

इन्द्रः प्रवाह्यमाणो गोप्रसवः संक्रमश्च ताराणाम्।

सुपुरुषप्राणविपत्तिश्चत्वार्येतानि न द्रष्टव्यानि।।7।।

अन्वयः – प्रवाह्यमाणः, इन्द्रः, गोप्रसवः, ताराणाम्, संक्रमः, च, सुपुरुषप्राणविपत्तिः, च, एतानि, चत्वारि, न, द्रष्टव्यानि।

अर्थ – दोनों चाण्डाल – हटो, महानुभावो ! हटो। क्या देख रहे हो ?

जल में बहाने के लिये ले जाता हुआ इन्द्र–ध्वज, गाय का प्रसव, ताराओं का टूटकर गिरना तथा श्रेष्ठ पुरुष का वध – इन चारों को नहीं देखना चाहिये।7।

णअलीपधाणंभूदे वज्झीअंते कदंतअण्णए।

किं लुअदि अंतलिक्खे आदु अणब्भे पडदि वज्जे।।8।।

नगरीप्रधानभूते वध्यमाने कृतान्ताज्ञया।

किं रोदित्यन्तरिक्षमथवाऽनभ्रे पतति वज्रम्।।8।।

अन्वयः – कृतान्ताज्ञया, नगरीप्रधानभूते, वध्यमाने, किम्, अन्तरिक्षम्, रोदिति, अथवा, अनभ्रम्, वज्रम्, पतति ?

अर्थ – एक चाण्डाल – अरे, आहीन्त ! देख, देख – यमराज (के सामान राजा पालक) की आज्ञा से इस नगरी के प्रधान पुरुष (चारुदत्त) के वध की तैयारी होने पर, क्या आकाश रो रहा है ? अथवा बिना बादलों के ही वज्र गिर रहा है ?।8।

ण अ लुअदि अंतलिक्खे णेय अणब्भे पडदि वज्जे।

महिलाशमूहमेहे निवडदि णअणंबु धाराहिं।।9।।

न च रोदित्यन्तरिक्षं नैवानभ्रं पतति वज्रम्।

महिलासमूहमेघान्निपतति नयनाम्बु धाराभिः।।9।।

अन्वयः – न, च, अन्तरिक्षम्, रोदितति, नैव, अनभ्रम्, वज्रम्, पतति, (किन्तु) महिलासमूह– मेघात्, नयनाम्बु, धाराभि, निपतति।

अर्थ – दूसरा चाण्डाल – अरे गोह ! न तो आकाश रो रहा है, और न बिना बादलों के वज्र ही गिर रहा है। (किन्तु) स्त्रियों के समूहरूपी मेघ से आँखों का पानी (आँसू) धाराओं के रूप में गिर रहा है।9।

वज्झम्मि णीअमाणे जणश्श शव्वश्श लोदमाणश्श।

णअणशलिलेहिं शित्ते लच्छादो ण उण्णमइ लेणू।।10।।

अन्वयः – वध्ये, नीयमाने, रुदतः, सर्वस्य, जनस्य, नयनसलिलैः, सिक्तः, रेणुः, रथ्यातः, न, उन्नमति।

अर्थ – और भी – वध्य (चारुदत्त) को वध–स्थान पर ले जाये जाने के समय चारुदत्त को देख कर रोते हुए सभी लोगों की आँसुओं से भीगी हुई धूलि गली से नहीं उड़ रही है।10।

एताः पुनर्हर्म्यगताः स्त्रियो मां वातायनार्धेन विनिःसृतास्याः।

हा चारुदत्तेत्यभिभाषमाणां बाष्पं प्रणालीभिरिवोत्सृजन्ति।।11।।

अन्वयः – हर्म्यगताः, एताः, स्त्रियः, पुनः वातायनार्धेन, विनि सृतास्याः, माम् (अभिलक्ष्य) हा चारुदत्त ! इति, अभिभाषमाणाः, प्रणालीभिः, इव, बाष्पम्, उत्सृजन्ति।

अर्थ – चारुदत्त ! (देख कर करुणापूर्वक) – महलों में रहने वाली ये स्त्रियाँ फिर खिड़कियों के एक हिस्से से मुँह निकाले हुए मुझको लक्ष्य करके 'हाय चारुदत्त' ऐसा कहती हुई मानों परनालों से ही आँसू बहा रही हैं।11।

मखशतपरिपूतं गोत्रमुदभासितं मे

सदसिं निबिडचैत्यब्रह्मघोषैः पुरस्ताम्।

मम मरणदशायां वर्तमानस्य पापै

स्तदसृशमनुष्यैर्घुष्यते घोषणायाम्।।12।।

अन्वयः – पुरस्तात्, मखशतपरिपूतम्, (यत्), मे, गोत्रम्, सदसि, निबिडचैत्यब्रह्मघोषैः, उद्भासितम्, (आसीत्), मरणदशायाम्, वर्तमानस्य, मम, तत्, पापैः, असदृशमनुष्यैः, घोषणायाम्, घुष्यते।

अर्थ – चारुदत्त – दुःख के साथ, अपने आप – पहले, सैकड़ों यज्ञों से पवित्र जो मेरा कुल यज्ञ–सभा में तथा (निमन्त्रित व्यक्तियों से) भरे हुए पूजा आदि के स्थानों में वेद–पाठों से उज्ज्वल (प्रकाशित) रहा करता था। (वही मेरा कुल) मरने की हालत में मेरे विद्यमान होने पर इन पापी तथा अयोग्य जनों (चाण्डालों) के द्वारा घोषणा के स्थान पर (बुरे काम के साथ) घोषित किया जा रहा है।12।

शशिविमलमयूखशुभ्रदन्ति ! सुरुचिरविद्रुमसन्निभाधरोष्ठि !।

तव वदनभवामृतं निपीय कथमवशो ह्ययशोविषं पिबामि ?।।13।।

अन्वयः – हे शशिविमलमयूखशुभ्रदन्ति ! हे सुरुचिरविद्रुमन्निभाधरोष्ठि ! तव, वदनभवामृतम्, निपीय, (अधुना), अवशः, (अहम्), अयशोविषम्, कथम् पिबामि।

अर्थ – (ऊपर की ओर देख कर तथा कानों को ढँक कर) हाय प्रिये, वसन्तसेने !

हे चन्द्रमा की निर्मल किरणों के समान सफेद दाँतों वाली तथा अत्यन्त सुन्दर मूँगे के समान अधरोष्ठ वाली वसन्सेना! तुम्हारे मुख से उत्पन्न अमृत को पीकर अर्थात् तुल्य हमारी वाणी सुनकर अब परवश हुआ मैं अपकीर्ति रूपी विष कैसे पी रहा हूँ ? अर्थात् यह सुनकर मुझे मर जाना चाहिए था।13।

एशे गुणअलणणिही शज्जणदुक्खाण उत्तलणशेदू।

अशुवण्णं मंडणअं अवणीअदि अज्ज णअलीदो।।14।।

एष गुणरत्ननिधिः सज्जनदुः खानामुत्तरणसेतुः।

असुवर्णं मण्डनकमपनीयतेऽद्य नगरीतः।।14।।

अन्वयः – गुणरत्ननिधिः, सज्जनदुःखानाम्, उत्तरणसेतुः, असुवर्णम्, मण्डनकम्, एषः, (चारुदत्तः), अद्य, नगरीतः, अपनीयते।

अर्थ – दोनों चाण्डाल – हटो, आर्यजनों ! हटो – (दया, क्षमा आदि) गुण रूपी रत्नों का खजाना, सज्जनों के (समुद्र रूप) दुःख में पार करने के लिये पुल के समान (अर्थात् दुःख में सज्जनों का सहायक), विना सोने का

आभूषण यह चारुदत्त आज (इस) नगरी से दूर किया जा रहा है।14।

शव्वे खु होइ लोए लोए शुहशंठिदाण तत्तिल्लः।

विणिवडिदाणं णलाणं पिअकाली दुल्लहो होदि।।15।।

सर्वः खलु भवति लोके लोकः सुखसंस्थितानां चिन्तायुक्तः।

विनिपतिनानां नराणां प्रियकारी दुर्लभो भवति।।15।।

अन्वयः – लोके, सर्वः, लोक, खलु, सुखसंस्थितानाम्, चिन्तायुक्तः, भवति, (किन्तु), विनिपतितानाम्, नराणाम्, प्रियकारी, दुर्लभः भवति।

अर्थ – और भी – इस संसार में सभी आदमी सुखी व्यक्तियों के ही शुभ–चिन्तक होते हैं। किन्तु आपत्ति में पड़े हुए मनुष्यों का हित करने वाला दुर्लभ होता है।15।

अमी हिवस्त्रान्तरिरुद्ववक्त्राः

प्रयान्ति मे दूरतरं वयस्याः।

परोऽपि बन्धुः सुखसंस्थितस्य

मित्रं न कश्चिद्विषमस्थितस्य।।16।।

अन्वयः – अमी, मे, वयस्याः, वस्त्रान्तनिरुद्धवक्त्राः, हि, दूरतरम्, प्रयान्ति, (सत्यम्) सुखसंस्थितस्य, परः, अपि बन्धुः, (भवति, किन्तु), विषमस्थितस्य, कश्चित्, मित्रम्, न, (भवति)।

अर्थ – चारुदत्त – (सभी ओर देखकर) ये मेरे मित्र कपड़े के आँचल से अपने मुँह को ढँके हुए दूर दूर जा रहे हैं। (सच है कि) सुख की हालत में वर्तमान व्यक्ति का पराया (अपरिचित) भी अपना बन जाता है, किन्तु विपत्ति में पड़े हुए व्यक्ति का कोई मित्र नहीं होता।16।

चिरं खलु भविष्यामि परलोके पिपासितः।

अत्यल्पमिदमस्माकं निवापोदकभोजनम्।।17।।

अन्वयः – (अहम्), परलोके, खलु, चिरम्, पिपासितः, भविष्यामि, (यतः), अस्माकम्, निवापोदकभोजनम्, इदम् अत्यल्पम्, (अस्ति)।

अर्थ – मैं परलोक में बहुत दिनों तक प्यासा ही रहूँगा (क्योंकि) हम लोगों के पितृतर्पण के जल रूपी भोजन का दाता यह बालक (अपत्य) बहुत छोटा है।17।

अमौक्तिकमसौवर्णं ब्राह्मणानां विभूषणम्।

देवतानां पितृणां च भागो येन प्रदीयते।।18।।

अन्वयः – (इदम्, यज्ञोपवीतम्), ब्राह्मणानाम्, अमौक्तिकम्, असौवर्णम् विभूषणम्, (अस्ति, येन, देवतानाम्, पितृणाम्, च, भागः, प्रदीयते)।

अर्थ – पुत्र को क्या दूँ ? (अपने आप को देखकर। जनेऊ देखकर) अच्छा, यह तो मेरे पास है ही। (यह जनेऊ) ब्राह्मणों का आभूषण है, जिससे देवताओं तथा पितरों का भाग दिया जाता है।18।

अब्भुदए अवशाणे तहे अ लत्तिंदिवं अहदमग्गा।

उद्यामे व्व किशोली णिअदी खु पडिच्छिदुं जादि।।19।।

अभ्युदयेऽवसाने तथैव रात्रिंदिवमहतमार्गा।

उद्दामेव किशोरी नियतिः खलु प्रत्येषितुं याति।।19।।

अन्वयः – अभ्युदये, अवसाने, तथैव रात्रिन्दिवम्, अहतमार्गा, नियतिः, उद्दामा, किशोरी, इव, खलु, प्रत्येषितुम्, याति।

अर्थ – चाण्डाल – आओ रे चारुदत्त, आओ दूसरा चाण्डाल – अरे आर्य चारुदत्त को ('आर्य' आदि) उपाधि से रहित नाम से पुकारते हो ?

अरे, देखो – उन्नति की अवस्था में तथा गिरी हालत में एवं रात में और दिन में बेरोकटोक चलने वाली (अप्रतिहत गति वाली) नियति (भाग्य) स्वछन्द, चढ़ती हुई जवानी काली स्त्री के समान पुरुष को स्वीकार करने के लिये जाती है। (अर्थात् नियति कब किसके ऊपर कैसी हालत ला देगी, नहीं कहा जा सकता)।19।

शुक्खा वि वदेशा शे किं विणमिअमत्थएण काअव्वं।

लाहुगहिदे वि चंदे ण वंदणीए जणपदश्श।।20।।

शुष्का अपि प्रदेशा अस्य किं विनमितमस्तकेन कर्तव्यम्।

राहुगृहीतोऽपि चन्द्रो न वन्दनीयो जनपदस्य।।20।।

अन्वयः – अस्य, प्रदेशाः, अपि, शुष्काः, (अतः), विनमितमस्तकेन, किम्, कर्तव्यम् ? (इति, न विचारणीयम्), राहुगृहीतः, अपि, चन्द्रः, जनपदस्य, न वन्दनीयः ?

अर्थ – और भी – इस चारुदत्त के (धन–यश आदि) अंग भी सूख गये हैं। (इसलिए इसे) प्रणाम करने से क्या प्रयोजन है ? (ऐसा नहीं सोचना चाहिये) क्या राहु के द्वारा ग्रसा गया चन्द्रमा जनपद के निवासियों (अर्थात् मनुष्यों) के लिए वन्दनीय नहीं होता ? (पाठान्तर में पहली लाइन का अर्थ यह है – इस चारुदत्त के कुल – नाम आदि क्या सूख गये ? क्या इनके प्रति शिर नहीं झुकाना चाहिये ?)।20।

अंसेन बिभ्रत्करवीरमालां स्कन्धेन शूलं हृदयेन शोकम्।

आघातमद्याहमनुप्रयामि शामित्रमालब्धुमिवाध्वरेऽजः।।21।।

अन्वयः – अंसेन, करवीरमालाम्, स्कन्धेन, शूलम्, हृदयेन, शोकम्, बिभ्रत्, अहम्, अध्वरे, आलब्धुम्, शामित्रम्, अजः, इव, अद्य, आघातम्, अनुप्रयामि।

अर्थ – दारक – अरे रे चाण्डालों ! मेरे पिता को कहाँ ले जा रहे हो ?

चारुदत्त – बेटा ?

गले में कनेर की माला, कन्धे पर शूली तथा हृदय में शोक धारण किये हुए मैं, यज्ञ में मारने के लिए बाँधने वाले खम्भे के पास (ले जाये जाते हुए) बकरे की भाँति, आज फाँसी के स्थान पर जा रहा हूँ।21।

ण हु अम्हे चांडाला चांडालकुलम्मि जादपुव्वा वि।

जे अहिभवंति शाहुं ते पावा ते अ चांडाला।।22।।

अन्वयः – चाण्डालकुले, जातपूर्वाः, अपि, वयम्, खलु, चाण्डालाः, न, ये साधुम्, अभिभवन्ति, ते, पापाः, ते, चाण्डालाः, च।

अर्थ – चाण्डाल – बालक ! चाण्डाल कुल में पैदा होकर भी हम लोग (वस्तुतः) चाण्डाल नहीं है। जो लोग सज्जन व्यक्ति का अपमान करते हैं, ये ही पापी और चाण्डाल हैं।22।

इदं तत्स्नेहसर्वस्वं सममाढ्यदरिद्रयोः।

अचन्दनमनौशीरं ह्वदयस्यानुलेपनम्।।23।।

अन्वयः – इदम्, आढ्यदरिद्रयोः, समम्, तत्, स्नेहसर्वस्वम्, (तथा), अचन्दनम्, अनौशीरम्, ह्वदयस्य, अनुलेपनम्, (अस्ति)।

अर्थ – चाण्डाल – मेरे चिरंजीवी ! ऐसे कहते हुए बहुत दिन तक जिओ।

चारुदत्त – (आँखों में आँसू भरे हुए बालक को गले लगा कर) यह (पुत्र) धनी और निर्धन दोनों के लिए एक समान स्नेह का जगत्प्रसिद्ध सर्वस्व है (अर्थात् प्राण है) यह विना चन्दन और खस के भी ह्वदय का (शान्तिकारक) लेप है (अर्थात् पुत्र को देखकर पिता का कलेजा ठण्डा हो जाता है)।23।

किं पेक्खध शप्पुलिशं अजशवशेण प्पणट्टजीवाशं।

कूवे खंडिदपाशं कंचणकलशं व्व डुब्बंतं।।24।।

किं पश्यत सत्पुरुषमयशोवशेन प्रनष्टजीवाशम् ?।

कूपे खण्डितपाशं कांचनकलशमिव मज्जन्तम्।।24।।

अन्वयः – खण्डितपाशम्, कूपे, मज्जन्तम्, कांचनकलशम्, इव, अयशोवशेन, प्रनष्ट– जीवाशम्, सत्पुरुषम्, किम् पश्यत?

अर्थ – चाण्डाल – हटो, आर्यजनो, हटो। रस्सी टूटने पर कूप में डूबते हुए सुवर्णघट के समान अपकीर्ति के कारण जिसके जीवन की आशा नष्ट हो गई है ऐसे इस सत्पुरुष को क्या देखते हो।।24।

प्राप्तोऽहं व्यसनकृशां दशामनार्यां

यत्रेदं फलमपि जीवितावसानम्।

एषा च व्यथयति घोषणा मनो मे

श्रोतव्यं यदिदमसौ मया हतेति।।25।।

अन्वयः – अहम् व्यसनकृशाम्, अनार्याम्, दशाम्, प्राप्तः, यत्र, इदम्, जीवितावसानम्, (एव), फलम् अपि, (अस्ति), एषा, च, घोषणा, मे, मनः, व्यथयति, यत्, इदम्, श्रोतव्यम्, 'असौ, मया, हता, इति'।

अर्थ – चारुदत्त – मैं विपत्ति के कारण कमजोर एवं निन्दनीय उस दशा में पहुँच गया हूँ, जहाँ पर कि यह मृत्यु ही फल है। और यह जनता में एलान मेरे मन को पीड़ा देता है, जो मुझे यह सुनना पड़ता है कि – 'मैंने इसे (वसन्तसेना को) मारा है'।25।

कोऽयमेवंविधे काले कालपाशस्थिते मयि।

अनावृष्टिहते सस्ये द्रोणमेघ इवोदितः ?।।26।।

अन्वयः – अये ! (गद्येन अन्वयः), अनावृष्टिहते, सस्ये, द्रोणमेघः, इव, एवंविधे, काले, मयि, कालापाशस्थिते, अयम्, कः, उदितः ?।

अर्थ – चारुदत्त – अहो ! वर्षा के न होने से सूखते हुए धान पर द्रोण नामक मेघ (धान बढ़ाने वाले बादल) के

समान इस प्रकार की विपत्ति के समय में मेरे मृत्यु के फन्दा में फँसने पर यह कौन (मेरी मदद के लिये) आ गया है? ।26।

न भीतो मरणादस्मि केवलं दूषितं यशः।

विशुद्धस्य हि मे मृत्युः पुत्रजन्मसमो भवेत्।।27।।

अन्वयः – (अहम्), मरणात्, भीतः, न, अस्मि, केवलम्, यशः, दूषितम्, विशुद्धस्य, मे, मृत्युः, हि, पुत्रजन्मसमः, भवेत्।

अर्थ – अरे आप लोगों ने सुना ? – मैं करने से भयभीत नहीं हूँ। (किन्तु इसलिये भयभीत हूँ कि) मेरे यश में धब्बा लग गया है। (यदि) निर्दोष होकर मेरी मृत्यु होती तो वह पुत्र के जन्म के समान (सुखदायक) होती।27।

तेनारभ्यकृतवैरेण क्षुद्रेणात्यल्पबुद्धिना।

शरेणेव विषाक्तेन दूषितेनापि दूषितः।।28।।

अन्वयः – अकृतवैरणे, क्षुद्रेण, अल्पबुद्धिना, दूषितेन, अपि, तेन, विषाक्तेन, शरेण, इव, दूषितः, अस्मि।

अर्थ – और भी – जिसके साथ कभी वैर नहीं किया था ऐसे नीच मन्दबुद्धि वाले, स्वयं (वसन्तसेना के मारने के) दोषी उस (शकार) ने, विषबुझाए तीर की भाँति, मुझे कलिंकित कर दिया है।28।

मंशेण तिक्खामिलकेण भत्ते शाकेन शूपेण शमच्छकेण।

भुत्तं मए अत्तणअश्श गेहे शालिश्श कूलेण गुलोदणेण।।29।।

मांसेन तिक्ताम्लेन भक्तं शाकेन सूपेन समत्स्यकेन।

भुक्तं मयात्मनो गेहे शालीयकूरेण गुडौदनेन।।29।।

अन्वयः – मया, आत्मनः, गेहे, तिक्ताम्लेन, मांसेन, शाकेन, समत्स्यकेन, सूपेन, शालीयकूरेण, गुडौदनेन, भक्तम्, भुक्तम्।

अर्थ – शकार (खुशी के साथ) मैंने अपने घर तीखे–खट्टे मांस, शाक, मछली के सहित दाल ग्या रसा, अगहनी चावल के भात तथा गुड़ मिले हुए भात (खीर) के साथ (साधारण चावल का) भात खाया है।29।

ओशलध देध मग्गं दालं ढक्केघ होध तुण्हीआ।

अविणअतिक्खविशाणे दुट्ठबइल्ले इदो एदि।।30।।

अपसरत दत्त मार्गं द्वारं पिधत्त भवत तूष्णीकाः।

अविनयतीक्ष्णविषाणो दुष्टवलीवर्द इत एति।।30।।

अन्वयः – अपसरत, मार्गम्, दत्त, द्वारम्, पिघत्त, तूष्णीकाः, भवत, अविनयतीक्ष्णविषाणः दुष्टबलीवर्दः, इतः, एति।

अर्थ – दोनों चाण्डाल – हट जाओ, रास्ता छोड़ दो, दरवाजा बन्द कर लो, चुप हो जाओ। उद्दण्डतारूपी तेज सींगों वाला दुष्ट साँड़ (शकार) इधर आ रहा है।30।

उत्तिष्ठ भोः ! पतितसाधुजनानुकम्पि–

न्निष्कारणोपगतबान्धव धर्मशील !

यत्नः कृतोऽपि सुमहान्मम मोक्षणाय

दैवं न संवदति, किं न कृतं त्वयाद्य।।31।।

अन्वयः – भोः पतितसाधुजनानुकम्पिन् ! निष्कारणोपगतबान्धव ! धर्मशील ! उत्तिष्ठ, मम, मोक्षणाय, (त्वया), सुमहान्, यत्नः, अपि, कृतः (किन्तु) दैवम्, न, संवदति, अद्य, त्वया, किम्, न, कृतम् ?।

अर्थ – चारुदत्त – (करुणा के साथ) हे आपत्ति में गिरे हुए सज्जनों पर कृपा करने वाले, अकारण आये हुए बन्धु धार्मिक जन! उठो। मुझे छुड़ाने के लिए (तुमने) बहुत बड़ा प्रयत्न किया, किन्तु भाग्य साथ नहीं दे रहा है। आज तुमने क्या नहीं किया ? (अर्थात् सब कुछ किया) ।31।

आश्रमं वत्स ! गन्तव्यं गृहीत्वाद्यैव मातरम्।

मा पुत्र ! पितृदोषेण त्वमप्येवं गमिष्यसि।।32।।

अन्वयः – वत्स ! मातरम्, गृहीत्वा, अद्य, एव, अश्रमम्, गन्तव्यम्, पुत्र ! मा, पितृदोषेण, त्वम्, अपि एवम्, गमिष्यसि।

अर्थ – चारुदत्त – हे बेटा ! माता को लेकर आज ही आश्रम (मुनिजनों की तपस्या के स्थान में चले जाना। हे पुत्र ! ऐसा न हो कि पिता के दोष (वसन्तसेना के वध रूप दोष) के कारण तुम भी इसी प्रकार (निरपराध) चले जाओ (अर्थात् मारे जाओ)) ।32।

प्राप्यैतद्व्यसनमहार्णवप्रपातं

न त्रासो न च मनसोऽस्ति मे विषादः।

एको मां दहति जनापवादवह्नि–

र्वक्तव्यं यदिह मया हता प्रियेति।।33।।

अन्वयः – एतद्व्यसनमहार्णवप्रपातम्, प्राप्य, अपि, मे, मनसः, न, त्रासः, न, च, विषादः, अस्ति, एकः, जनापवादवह्निः, माम्, दहति, यत्, इह, इति, वक्तव्यम्, 'मया, प्रिया, हता'।

अर्थ – चारुदत्त – (करुणापूर्वक) विपत्ति के इस सागर में गिर कर (भी) मेरे मन को न तो भय है और न विषाद ही। एकमात्र लोक–निन्दा की आगं ही मुझे जला रही है, जो मुझे यहाँ कहना है कि – 'मैंने प्रिया (वसन्तसेना) को मारा है ।33।

प्रभवति यदि धर्मो दूषितस्यापि मेऽद्य

प्रबलपुरुषवाक्यैर्भाग्यदोषात्कथंचित्।

सुरपतिभवनस्था यत्र तत्र स्थिता वा

व्यपनयतु कलंक स्वस्वभावेन सैव।।34।।

अन्वयः – भाग्यदोषात्, अद्य, प्रबलपुरुषवाक्यैः, दूषितस्य, अपि, मे, धर्मः, यदि, कथंचित्, प्रभवति, (तदा), सुरपतिभवनस्था, वा, यत्र तत्र, स्थिता, सा, एव, स्वस्वभावेन, (मे), कलंकम्, व्यपनयतु।

अर्थ – चारुदत्त – भाग्य के दोष से आज शक्तिशाली पुरुष (शकार) के (झूठा) कहने के कारण कलंकित हुए भी मेरा धर्म यदि कुछ भी प्रभाव रखता है तो इन्द्र के भवन (स्वर्ग) में अथवा जहाँ कहीं वर्तमान वह (वसन्तसेना) ही अपने स्वभाव से मेरे कलंक को दूर करे।34।

अद्धं कलेवलं पडिवृत्तं कट्टंति दीहगोमाआ।

अद्धं पि शूललग्गं वेशं विअ अट्टहाशश्श।।35।।

अर्धं कलेवरं प्रतिवृत्तं कर्षन्ति दीर्घगोमायवः।

अर्धमपि शूललग्नं वेश इवाट्टहासस्य।।35।।

अन्वयः – दीर्घगोमायवः, प्रतिवृत्तम्, अर्धम्, कलेवरम्, कर्षन्ति, शूललग्नम्, अर्धम्, अपि, अट्टासस्य, वेशः, इव, (प्रतिभाति)।

अर्थ – अरे ! अब मुझे कहाँ जाना है ?

चाण्डाल – (सामने दिखला कर) अरे ! दक्षिण दिशा में यह श्मशान दिखलाई दे रहा है, जिसे देख कर मारे जाने वाले व्यक्ति शीघ्र ही अपने प्राणों को छोड़ देते हैं। देखो, देखो – ऊपर शरीर उठाये हुए सियार शूली से लटके हुए आधे शरीर को नोंच रहे हैं। शूली में लगा हुआ (ऊपर का) आधा भाग भी विट हास का रूप–सा प्रतीत हो रहा है।35।

उट्ठंतपडंताह वशणपाडिआ शवश्श उण अत्थि।

एदाहं हिअए कदुअ संधालेहि अत्ताणअं।।36।।

उत्तिष्ठत्पततो वसनपातिका शवस्य पुनरस्ति।

एतानि हृदये कृत्वा संधारयात्मानम्।।36।।

अन्वयः – उत्तिष्ठत्पततः, शवस्य, पुनः, वसनपातिका, अस्ति, एतानि, हृदये, कृत्वा, आत्मानम्, संधारय।

अर्थ – उठकर गिरते हुए मृत शरीर की फिर वस्त्र के समान ही पतन–क्रिया (जीना– मरना) होता है। इन बातों को हृदय में सोच कर अपने आप को ढाँढ़स दो।36।

आअट्ठिदे शलोशं मुट्ठीए भुट्ठिणा गहीदे वि।

धलणीए कीश पडिदे दालुणके अशणिशण्णिहे खग्गे।।37।।

आकृष्टः सरोषं मुष्टौ मुष्टिना गृहीतोऽपि।

धरण्यां किमर्थं पतितो दारुणकोऽशनिसन्निभः खड्गः।।37।।

अन्वयः – मुष्टौ, मुष्टिना, गृहीतः। अपि, सरोषम्, आकृष्टः, अशनिसन्निभः, दारुणः, खंगः, धरण्याम्, किमर्थम्, पतितः।

अर्थ – चाण्डाल – (वार करना चाहता है। हाथ से तलवार गिरने का अभिनय करते हुए) ओह ! यह कैसे ? मूठ पर (कस कर) मुट्ठी से पकड़ी गयी भी तथा रोषपूर्वक (स्थान से) खींची गई, वज्र के समान भयंकर यह तलवार जमीन पर क्यों गिरी ?37।

का उण तुलिदं एशा अंशपडंतेण चिउलभालेण।

मा मेत्ति वाहलंती उट्ठिदहत्था इदो एदि।।38।।

का पुनस्त्वरितमेषांसपतता चिकुरभारेण।

मा मेति व्याहरन्त्युत्थितहस्तेत एति।।38।।

अन्वयः – अंसपतता, चिकुरभारेण, (उपलक्षिता), उत्थितहस्ता, मा, मा' इति, व्याहरन्ती, एषा, का पुनः त्वरितम्, इतः, एति।

अर्थ – चाण्डाल – (देखकर) – कन्धों पर बिखरे हुये केश–कलाप से युक्त, हाथ उठाये हुई, 'नहीं, नहीं' कहती हुई यह कौन सी स्त्री जल्दी से इधर आ रही है।38।

केयमभ्युद्यते शस्त्रे मृत्युवक्त्रगते मयि।

अनावृष्टिहते सस्ये द्रोणवृष्टिरिवागता।।39।।

अन्वयः – शस्त्रे, अभ्युद्यते, मयि, मृत्युवक्त्रगते, अनावृष्टिहते, सस्ये, द्रोणवृष्टिः, इव, इयम्, का, आगता।

अर्थ – चारुदत्त – आश्चर्य से। (मुझे मारने के लिये) शस्त्र उठ जाने पर तथा मेरे मृत्यु के मुँह में चले जाने पर विना वर्षा के सूखी खेती पर द्रोण (नामक बादल) की वर्षा के समान (यह कौन स्त्री) आ गयी है ?।39।

वसन्तसेना किमियं द्वितीया

समागता सैव दिवः किमित्थम्।

भ्रान्तं मनः पश्यति वा ममैनां

वसन्तसेना न मृताऽथ सैव।।40।।

अन्वयः – किम्, इयम्, द्वितीया, वसन्तसेना ? किम्, सा, एव, दिवः, इत्थम्, समागता ? वा, मम, भ्रान्तम्, मनः, एनाम्, पश्यति ? अथवा, वसन्तसेना, न, मृताः, (इयम्), सा, एव।

अर्थ – क्या यह दूसरी वसन्तसेना है ? अथवा क्या वह ही स्वर्ग से इस तरह (शरीर धारण कर) आ गयी है ? अथवा मेरा चकराया हुआ (भ्रान्त) मन ही इस (स्त्री) को (वसन्तसेना) समझ रहा है ? अथवा वसन्तसेना मरी नहीं है, यह वही है ?।40।

किं नु स्वर्गात्पुनः प्राप्ता मम जीवातुकाम्यया।

तस्या रूपानुरूपेण किमुतान्येयमागता।।41।।

अन्वयः – मम, जीवातुकाम्यया, स्वर्गात्, पुनः, प्राप्ता, किं नु ? उत, तस्याः, रूपानुपेण, इयम्, अन्या, आगता, किम् ?

अर्थ – मुझे जिलाने की इच्छा से (ही) यह स्वर्ग से फिर उतर आयी है क्या ? अथवा उस (वसन्तसेना) के रूप के समान रूपवाली यह दूसरी (ही स्त्री) आ गयी है क्या ?।41।

कुतो बाष्पाम्बुधाराभिः स्नपयन्ती पयोधरौ।

मयि मृत्युवशं प्राप्ते विद्येव समुपागता।।42।।

अन्वयः – मयि, मृत्युवशम्, प्राप्ते, बाष्पामबुधाराभिः, पयोधरौ, स्नपयन्ती, (त्वम्) विद्या, इव, कुतः, समागता।

अर्थ – चारुदत्त – (देखकर प्रसन्नता के साथ) क्या वसन्तसेना ही हो ?

(आनन्द पूर्वक) – मेरे मृत्यु के वश में प्राप्त होने पर आँसुओं की धाराओं से (अपने) दोनों स्तनों को सींचती हुई तुम (संजीवनी) विद्या की भाँति कहाँ से आ गयी हो ?।42।

त्वदर्थमेतद्विनिपात्यमानं देहं त्वयैव प्रतिमोचितं मे।

अहो प्रभावः प्रियसंगमस्य मृतोऽपि को नाम पुनर्ध्रियेत ?।।43।।

अन्वयः – त्वदर्थम्, विनिपात्यमानम्, मे, एतत्, देहम्, त्वया, एव, प्रतिमोचितम्, प्रियसंगमस्य, अहो ! प्रभावः, (अन्यथा), मृतः, अपि, कः नाम, पुनः, ध्रियेत ?।

अर्थ – प्रिये वसन्तसेने ! तुम्हारे कारण नष्ट किया जाता हुआ मेरा यह शरीर तुम्हारे ही द्वारा छुड़ाया गया। प्रेमी के मिलन का आश्चर्यजनक प्रभाव है। नहीं तो, भला, मर कर भी कोई जिन्दा होता है ?।43।

रक्तं तदेव वरवस्त्रमियं च माला

कान्तागमेन हि वरस्य यथा विभाति।

एते च वध्यपटह्ध्वनयस्तथैव

जाता विवाहपटहध्वनिभिः समानाः।।44।।

अन्वयः – कान्तागमेन, तदेव, रक्तम्, वरवस्त्रम्, इयम्, माला, च, वरस्य, यथा, हि, विभाति, च, तथैव, एते, वध्यपटहध्वनयः, विवाहपटहध्वनिभिः, समानाः जाताः।

अर्थ – प्रिया के (अर्थात् तुम्हारे) आ जाने से, वही लाल वस्त्र वर के वस्त्र (के समान) और यह माला वर को पहनायी गयी माला के समान शोभित हो रही है। और उसी प्रकार वध के लिये बजाये जाते हुए बाजों की ये आवाजें विवाह के बाजों की ध्वनियों के समान हो गयी हैं।44।

पूर्वानुबद्धवैरेण शत्रुणा प्रभविष्णुना।

नरके पतता तेन मनागस्मि निपातितः।।45।।

अन्वयः – पूर्वानुबद्धवैरेण, प्रभविष्णुना, नरके, पतता, तेन, शत्रुणा, मनाक्, निपातितः, अस्मि।

अर्थ – चारुदत्त ! 'प्रिये ! मैंने तुम्हें मार डाला' ऐसा कहकर – पहले से ही वैर बाँधने वाले, शक्तिशाली, नरक में गिरने वाले उस शत्रु (शकार) के द्वारा थोड़ा सा कलंकित कर दिया गया हूँ।45।

जयति वृषभकेतुर्दक्षयज्ञस्य हन्ता

तदनु जयति भेत्ता षण्मुखः क्रौंचशत्रुः।

तदनु जयति कृत्स्नां शुभ्रकैलासकेतुं

विनिहतवरवैरी चार्यको गां विशालाम्।।46।।

अन्वयः – दक्षयज्ञस्य, हन्ता, वृषभकेतुः, जयति, तदनु, भेत्ता, क्रौंचशत्रुः, षण्मुखः, जयति, तदनु, विनिहतवरवैरी, आर्यकः, च, शुभ्रकैलासकेतुम्, कृत्स्नाम्, विशालाम्, गाम्, जयति।

अर्थ – दक्ष के यज्ञ को विनष्ट करने वाले शिव की जय हो। उसके पश्चात् (शत्रुओं के दल का) भेदन करने वाले, क्रौंच (नामक दैत्य अथवा पर्वत) के शत्रु कार्तिकेय की जय हो। और तदनन्तर प्रधान शत्रु (पालक) का वध करने वाला आर्यक सफेद कैलास पर्वत ही है पताका जिसकी ऐसी समूची पृथिवी को जीते।46।

हत्वा तं कुनृपमहं हि पालकं भो–

स्तद्राज्ये द्रुतमभिषिच्य चार्यकं तम्।

तस्याज्ञां शिरसि निधाय शेषभूतां

मोक्ष्येऽहं व्यसनगतं च चारुदत्तम्।।47।।

अन्वयः – भोः ! अहम्, हि, तम्, कुनृपम्, हत्वा, तद्राज्ये, द्रुतम्, तम्, आर्यकम्, अभिषिच्य, च, तस्य, शेषभूताम्, आज्ञाम्, शिरसि, निधाय, अहम्, व्यसनगम्, चारुदत्तम, मोक्ष्ये।

अर्थ – शर्विलक – रे मनुष्यों ! मैं उस दुष्ट राजा पालक को मारकर, उसके राज्य पर शीघ्र ही उस आर्यक का अभिषेक कर उसकी (आर्यक की) आखिरी आज्ञा को शिरोधार्य करके विपत्ति में पड़े हुए चारुदत्त को मुक्त करता

हूँ।47।

हत्वा रिपुं तं बलमन्त्रिहीनं

पौरान्समाश्वास्य पुनः प्रकर्षात्।

प्राप्तं समग्रं वसुधाधिराज्यं राज्यं

बलारेरिव शत्रुराज्यम्।।48।।

अन्वयः – बलमन्त्रिहीनम्, तम्, रिपुम्, हत्वा, पुनः, प्रकर्षात्, पौरान्, समाश्वास्य बलारेः, राज्यम्, इव, समग्रम्, वसुधाधिराज्यम्, शत्रुराज्यम्, प्राप्तम्।

अर्थ – सेना तथा मन्त्रियों से रहित उस शत्रु (पालक) को मारकर और फिर (अपने) अधिक प्रभाव से पुरवासियों को ढाँढस बँधाकर, बल नामक दैत्य के शत्रु इन्द्र के राज्य के समान, समूची पृथ्वी के शासन से युक्त, शत्रु के समूचे राज्य को अधिकार में कर लिया।48।

दिष्ट्या भो व्यसनमहार्णवादपारा–

दुत्तीर्णं गुणधृतया सुशीलवत्या।

नावेव प्रियतमया चिरान्निरीक्ष्ये

ज्योत्स्नाढ्यं शशिनमिवोपरागमुक्तम्।।49।।

अन्वयः – भोः ! दिष्ट्या, गुणधृतया, सुशीलवत्या, नावा, इव, प्रियतमया, अपारात्, व्यसनमहार्णवात्, उत्तीर्णम्, (चारुदत्तम्), उपरागमुक्तम्, ज्योत्स्नाढ्यम्, शशिनम्, इव, चिरात्, निरीक्ष्ये।

अर्थ – हे मनुष्यों ! सौभाग्यवश गुणों (दया, उपकार आदि तथा नौका के पक्ष में – रस्सियों) से आकृष्ट सुन्दर स्वभाव वाली (पक्ष में सुघटित) नौका के समान प्रियतमा वसन्तसेना के द्वारा अपार विपत्तिसागर से पार हुए चारुदत्त को, ग्रहण से छूटे हुए तथा चाँदनी से युक्त चन्द्रमा के समान, बहुत दिनों के बाद मैं देख रहा हूँ।49।

येन ते भवनं भित्त्वा न्यासापहरणं कृतम्।

सोऽहं कृतमहापापस्त्वामेव शरणं गतः।।50।।

अन्वयः – येन, ते, भवनम्, भित्त्वा, न्यासापहरणम्, कृतम्, सः, कृतमहापापः, अहम्, त्वाम्, एव, शरणम्, गतः।

अर्थ – चारुदत्त – अरे ! आप कौन हैं ?

शर्विलक – जिसने तुम्हारे घर की दीवार में सेंध लगाकर धरोहर की चोरी की थी, वही महान् पाप करने वाला मैं तुम्हारी ही शरण में आया हूँ।50।

आर्यकेणार्यवृत्तेन कुलं मानं च रक्षता।

पशुवद्यज्ञवाटस्थो दुरात्मा पालको हतः।।51।।

अन्वयः – आर्यवृत्तेन, कुलम्, मानम्, च, रक्षता, आर्यकेण, यज्ञवाटस्थः, दुरात्मा, पालकः, पशुवत्, हतः।

अर्थ – शर्विलक – और भी – सज्जनों के योग्य व्यवहार करने वाले, अपने कुल तथा मान को बचाते हुए, आर्यक ने यज्ञशाला में स्थित दुष्ट पालक को पशु के समान मार दिया।51।

त्वद्यानं यः समारुह्य गतस्त्वां शरणं पुरा।

पशुवद्वितते यज्ञे हतस्तेनाद्य पालकः।।52।।

अन्वयः – यः, पुरा, त्वद्यानम्, समारुह्य, त्वाम्, शरणम्, गतः, तेन, अद्य, वितते, यज्ञे, पालकः, पशुवत्, हतः।

अर्थ – चारुदत्त – क्या ?

शर्विलक – जो आर्यक पहले तुम्हारी गाड़ी पर चढ़कर तुम्हारी शरण में गया था, उसने ही आज विस्तृत यज्ञ में पालक को पशु के समान मार दिया।52।

एव्वं दूलमदिक्कंते उद्दामे विअ गद्दहे।

आणीदे खु हगे बद्धे हुडे अण्णे व्व दुक्कले।।53।।

एवं दूरमतिक्रान्त उद्दाम इव गर्दभः।

आनीतः खल्वहं बद्धः कुक्कुरोऽन्य इव दुष्करः।।53।।

अन्वयः – उद्दामः, गर्दभः, इव, एवम्, दूरम्, अतिक्रान्तः, अहम्, खलु, आनीतः, (तथा), दुष्करः, अन्यः, कुक्कुरः, इव, बद्धः।

अर्थ – शकार – आश्चर्य है – बन्धन से छूटे हुए गधे की भाँति इस प्रकार दूर तक भागा हुआ मैं पकड़ लाया गया और दुष्ट कुत्ते के समान बाँध दिया गया हूँ।53।

आकर्षन्तु सुबद्ध्वैनं श्वभिः संखाद्यतामथ।

शूले वा तिष्ठतामेष पाट्यतां क्रकचेन वा।।54।।

अन्वयः – एनम्, सुबद्धवा, (जनाः), आकर्षन्तु, अथ, एषः, श्वभिः, संखाद्यताम्, वा, शूले, तिष्ठताम्, वा, क्रकचेन, पाट्यताम्।

अर्थ – क्या इस (शकार को भली प्रकार बाँध कर (मनुष्य) खींचे अथवा इसे कुत्ते खाएँ। क्या इसे शूली पर चढ़ाया जाय अथवा आरा से चीरा जाय)।54।

शत्रुः कृतापराधः शरणमुपेत्य पादयोः पतितः।

शस्त्रेण न हन्तव्यः ....।।

शर्विलकः – एवम्, तर्हि श्वभिः खाद्यताम्।

चारुदत्तः – नहि,

.... उपकारहतस्तु कर्तव्यः।।55।।

अन्वयः – कृतापराधः, शत्रुः, (यदि) शरणम्, उपेत्य, पादयोः, पतितः, (तर्हि, सः) शस्त्रेण, न, हन्तव्यः, तु, उपकारहतः, कर्तव्यः।

अर्थ – चारुदत्त – अपराध को करने वाला शत्रु यदि शरण में आकर पैरों पर पड़ा है तो उसे शस्त्र से नहीं मारना चाहिये....

शर्विलक – अच्छा, तो कुत्तों द्वारा खाया जाये।

चारुदत्त – नहीं।

किन्तु उसे उपकार से मरा हुआ कर देना चाहिये |55|

न महीतलस्थितिसहानि भवच्च–

रितानि चारुचरिते यदपि।

उचितं तथापि परलोकसुखं न

पतिव्रते ! तव विहाय पतिम्।।56।।

अन्वयः – हे चारुचरिते ! यदपि, भवच्चरितानि, महीतलस्थितिसहानि, न, (सन्ति), तथापि, हे पतिव्रते ! पतिम्, विहाय, तव, परलोकसुखम् न उचितम्।

अर्थ – चारुदत्त – (घबड़ाहट के साथ) हाय प्रिये ! मेरे जिन्दा रहने पर ही (तुमने) यह क्या निश्चित कर लिया ? (ऊपर देख कर और लम्बी साँस लेकर)

हे सुन्दर चरितवाली ! यद्यपि आपके सच्चरित्र इस भूतल पर रहने के योग्य नहीं हैं तथापि हे पतिव्रता स्त्री ! पति (मुझ) को छोड़कर तुम्हारा परलोक में (अकेले) सुख भोगना उचित नहीं है |56|

त्वरया सर्पणं तत्र मोहमार्योऽत्र चागतः।

हा धिक्प्रयत्नवैफल्यं दृश्यते सर्वतोमुखम्।।57।।

अन्वयः – तत्र, त्वरया, सर्पणम्, (उचितम्, किन्तु), अत्र, आयः, मोहम्, उपगतः। हा धिक्! सर्वतोमुखम्, प्रयत्नवैफल्यम्, दृश्यते।

अर्थ – शर्विलक – अहो ! असावधानी ! वहाँ (धूता के पास) जल्दी से जाना उचित है, परन्तु यहाँ आर्य (चारुदत्त) मूर्च्छित हो गये हैं। हाय ! धिक्कार है ! चारों ओर से प्रयत्न (चारुदत्त को बचाने के प्रयत्न) की विफलता दिखलाई देती है |57|

हा प्रेयसि ! प्रेयसि विद्यमाने

कोऽयं कठोरो व्यवसाय आसीत्।

अम्भोजिनीलोचनमुद्रणं किं

भानावनस्तंगमिते करोति ?।।58।।

अन्वयः – हा प्रेयसि ! प्रेयसि, विद्यमाने, (अपि), कः, अयम्, कठोरः, व्यवसायः, आसीत्। किम्, भानौ, अनस्तंगमिते, (अपि), अम्भोजिनी, लोचनमुद्रणम्, करोति ?

अर्थ – चारुदत्त – (धूता के प्रति) हाय, प्रियतमे ! प्रियतम के (अर्थात् मेरे) जीवित रहने पर भी तुमने यह क्या कठोर (आग में प्रवेश का) निश्चय कर लिया था ? क्या कभी कमल–लता सूर्य के बिना अस्त हुए भी (कमलरूप) अपनी आँखें मूँद लेती है ? |58|

लब्धा चारित्र्यशुद्धिश्चरणनिपतितः शत्रुरप्येष मुक्तः,

प्रोत्खातारातिमूलः प्रियसुहृदचलामार्यकः शास्ति राजा।

प्राप्ता भूयः प्रियेयं प्रियसुहृदि भवान्संगतो मे वयस्यो,

लभ्यं किं चातिरिक्तं यदपरमधुना प्रार्थयेऽहं भवन्तम् ?।।59।।

अन्वयः – चारित्र्यशुद्धिः, लब्धा, चरणनिपतितः, एषः, शत्रुः, अपि, मुक्तः, प्रोत्खातारातिमूलः, प्रियसुहृद्, आर्यकः, राजा, (भूत्वा), अचलाम् शास्ति, इयम्, प्रिया, भूयः, प्राप्ता, प्रियसुहृदि, संगतः, भवान्, मे, प्रियवयस्यः, (जातः), अतिरिक्तम्, किम्, लभ्यम् ? यत्, अपरम्, अहम्, अधुना, भवन्तम्, प्रार्थये।

अर्थ – शर्विलक – तो बतलाइये कि आपका और कौन सा प्रिय कार्य करूँ ?

चारुदत्त – इससे भी अधिक क्या (कोई) प्रिय है ?

अपने चरित्र की निर्दोषता प्राप्त कर ली गयी। पैरों पर पड़ा हुआ यह शत्रु भी (बिना दण्ड दिये) छोड़ दिया गया। शत्रु (पालक) की जड़ को उखाड़ फेंकने वाला प्रिय मित्र आर्यक राजा होकर पृथिवी का शासन कर रहा है। यह प्रिया (वसन्तसेना) फिर मिल गयी। प्रिय मित्र (आर्यक) से मिले हुए आप मेरे मित्र हो गये – अथवा मेरे मित्र आप प्रियमित्र (आर्यक अथवा मुझ) से मिल गये। इसके अतिरिक्त और कौन सी वस्तु पाने योग्य है, जिसको मैं इस समय आप से माँगू ? ।59।

कांश्चित्तुच्छयति प्रपूरयति वा कांश्चिन्नयत्युन्नतिं
कांश्चित्पातविधौ करोति च पुनः कांश्चिन्नयत्याकुलान्।
अयोग्यं प्रतिपक्षसंहतिमिमां लोकस्थितिं बोधय–
न्नेष क्रीडति कूपयन्त्रघटिकान्यायप्रसक्तो विधिः।।60।।

अन्वयः – कूपयन्त्रघटिकान्यायप्रसक्तः एषः, विधिः अन्योन्यम्, प्रतिपक्षसंहतिम्, इमाम्, लोकस्थितिम्, बोधयन्, क्रीडति, (अयम्), कांश्चित्, तुच्छयति, वा, कांश्चित्, प्रपूरयति, कांश्चित्, उन्नतिम्, नयति, कांश्चित्, पातविधौ, करोति, पुन, कांश्चित्, च, आकुलान्, नयति।

अर्थ – रहट की छोटी–छोटी बाल्टियों के ढंग एक का खाली होना दूसरे का भरना की नकल करने में लगा हुआ यह दैव, आपस में विरोधियों (धनी–निर्धन आदि) की पाँत (समूह) से युक्त संसार की इस (सामने वर्तमान) अवस्था का बोध कराता हुआ खिलवाड़ करता है। यह दैव किन्हीं को खाली (तुच्छ) करता है और किन्हीं को भरा–पूरा करता है। किन्हीं को उन्नति की ओर ले जाता है तो किन्हीं को नीचे गिरा देता और किन्हीं को तो व्याकुल ही बना देता है ।60।

क्षीरिण्यः सन्तु गावो, भवतु वसुमती सर्वसंपन्नसस्या,
पर्जन्यः कालवर्षी, सकलजनमनोनन्दिनो वान्तु वाताः।
मोदन्तां जन्मभाजः, सततमभिमता ब्राह्मणाः सन्तु सन्तः
श्रीमन्तः पान्तु पृथ्वीं प्रशमितरिपवो धर्मनिष्ठाश्च भूपाः।।61।।

अन्वयः – गावः, क्षीरिण्यः, सन्तु। वसुमती, सर्वसम्पन्नसस्या, भवतु। पर्जन्यः कालवर्षी (भवतु)। सकलजनमनोनन्दिनः, वाताः, वान्तु। जन्मभाजः, मोदन्ताम्। ब्राह्मणाः, सततम्, अभिमताः, (तथा), सन्तः, सन्तु। श्रीमन्तः, प्रशमितरिपवः च, धर्मनिष्ठाः, भूपाः, पृथिवीम्, पान्तु।

अर्थ – फिर भी यह होवे – भरत–वाक्य

गाएँ (काफी) दूधवाली हों। पृथिवी सब प्रकार के धान्य से भरी–पूरी हो। बादल समय– समय पर वर्षा करने वाला हो। सभी लोगों के मन को प्रसन्न करने वाली हवाएँ बहें। (संसार में) पैदा होने वाले सभी प्राणी सुखी रहें। ब्राह्मण लोग सर्वदा सब के प्रिय एवं सदाचारी हो। सम्पत्तिशाली, शत्रुओं का दमन करने वाले तथा धर्म में श्रद्धा रखनेवाले राजा पृथिवी का पालन करें ।61।

2.4 अपनी प्रगति जांचिए

1 मृच्छकटिक का क्या अर्थ है ?

2 मृच्छकटिक के छठे अंक का क्या नाम है ?

3 चारुदत्त के पुत्र का क्या नाम है ?

4 मृच्छकटिक के दसवें अंक का क्या नाम है ?

5 मृच्छकटिक में मैत्रेय कौन है ?

2.5 सारांश

षष्ठ अंक

सम्पूर्ण रात्रि चारुदत्त के साथ व्यतीत करने के बाद वसन्तसेना को चेटी जगाती है और सन्देश देती है कि चारुदत्त ने उसे (वसन्तसेना को) पुष्पकरण्डक नामक जीर्णोद्यान में बुलाया है और बैलगाड़ी भेजी है। वसन्तसेना यह सुनकर प्रसन्न होती है। तभी चारुदत्त के पुत्र को लेकर रदनिका प्रवेश करती है। बालक सोने की गाड़ी से खेलने की हठ कर रहा है। न मिलने पर रोते हुए उस बालक को चेटी वसन्तसेना के पास लेकर जाती है। उसे चारुदत्त का पुत्र जानकर वसन्तसेना प्रसन्नता से उसे गोद में बिठाकर उसके रोदन का कारण पूछती है। रदनिका से सारी स्थिति जानकर वसन्तसेना अपने सोने के सारे आभूषण उतारकर बालक की मिट्‌टी की गाड़ी में रख देती है।

अग्रिम दृश्य में पूर्व योजनानुसार चारुदत्त का चेट वर्धमानक गाड़ी लेकर आता है। रदनिका से इसकी सूचना पाकर वसन्तसेना तैयार होने लगती है। उधर वर्धमानक गाड़ी में बिछाने के लिए बिछावन लेने चला जाता है। तभी शकार का चेट स्थावरक शकार की गाड़ी को पुष्पकरण्डक उद्यान की ओर जाते हुए मार्ग में गाड़ियों की भीड़ के कारण चारुदत्त की वाटिका के पक्षद्वार पर खड़ी कर देता है। वह अपनी गाड़ी से उतरकर दूसरी गाड़ी के फँसे हुए पहिए को बाहर निकालने में मदद करने के लिए चला जाता है। वसन्तसेना उसे चारुदत्त की गाड़ी समझकर उस में बैठ जाती है। वसन्तसेना की दाहिनी आँख फड़कती है परन्तु वह इस विषय में चिन्तित नहीं होती। तभी स्थावरक आकर गाड़ी चलाता है। उसे गाड़ी में कुछ भार अनुभव होता है परन्तु वह इसे अपनी थकान का परिणाम समझ लेता है।

तभी कारागार से भागा हुए आर्यक राजपुरुषों की दृष्टि से बचने के लिए चारुदत्त की वाटिका के पक्षद्वार में प्रवेश करके छिप जाता है। वर्धमानक वसन्तसेना के लिए गाड़ी लेकर आता है। उसमें आर्यक बैठ जाता है। बेड़ियों की आवाज को आभूषणों की खनक समझकर वर्धमानक यह अनुमान करता है कि वसन्तसेना बैठ गई है। वह गाड़ी हाँक देता है। आर्यक की खोज में पालक के दो सेनापति चन्दनक और वीरक उस गाड़ी को रोक लेते हैं। चन्दनक गाड़ी का निरीक्षण करता है। आर्यक के द्वारा रक्षा की याचना करने पर वह उसे एक तलवार और अभयदान देता है वीरक चन्दनक का विश्वास नहीं करता और स्वयं निरीक्षण करना चाहता है। इस बात पर दोनों में कलह होती है। चन्दनक का संकेत पाकर वर्धमानक गाड़ी को आगे बढ़ा देता है। इसी के साथ अंक समाप्त हो जाता है। प्रस्तुत अंक में गाड़ियों की अदला–बदली होने से इसका नाम 'प्रवहणविपर्यय' है।

सप्तम अंक

अंक के प्रारम्भ में चारुदत्त और विदूषक जीर्णोद्यान की शोभा को अवलोकन कर रहे हैं। वसन्तसेना के आगमन में विलम्ब होने से चारुदत्त चिन्तित है। वर्धमानक के गाड़ी लेकर प्रवेश करते ही दोनों प्रसन्न होते हैं। गाड़ी में वसन्तसेना की अपेक्षा आर्यक विद्यमान है। आर्यक चारुदत्त से करबद्ध प्रार्थना करता है। चारुदत्त स्वभावनुसार उसे

अभय दान देता है और वर्धमानक से उसके पैरों की बेड़ियाँ भी कटवाता है। चारुदत्त से आर्यक पुनः क्षमायाचना करता है। चारुदत्त इस बात को अपना सौभाग्य मानकर आर्यक को पुनः गाड़ी में ही चढ़कर जाने को कहता है। उसे विदा करके चारुदत्त और विदूषक दोनों राजभय से शीघ्र ही वहाँ से चले जाते हैं। आर्यक के सुरक्षित चारुदत्त के पास पहुँच जाने से इस अंक का नाम 'आर्यकोपहरण' रखा गया है।

अष्टम अंक

प्रथम दृश्य में ही आर्द्र चीवर को हाथ में लिए हुए एक भिक्षु प्रवेश करता है। शकार और विट भी वहाँ आते हैं। शकार उस भिक्षु पर उद्यान की पुष्करिणी में चीवर धोने का आरोप लगाकर पीटता है। विट द्वारा बचाने पर वह भिक्षु शकार की स्तुति करता है और अपने प्राण बचाकर वहाँ से खिसक लेता है। शकार और विट, चेट स्थावरक की प्रतीक्षा करते हैं। तभी चेट गाड़ी को लेकर आता है। शकार गाड़ी में विद्यमान वसन्तसेना को चोर या राक्षसी समझकर डर जाता है। विट वसन्तसेना को पहचान लेता है और उसके यहाँ आगमन को अनुचित बताता है। वास्तविक स्थिति जानकर विट वसन्तसेना को धैर्य धारण करने को कहता है। वह शकार को झूठ विज्ञापित करता है कि गाड़ी में सचमुच कोई राक्षसी है अतः पैदल ही नगर की ओर प्रस्तान किया जाये। शकार इस कथन से असंतुष्ट रहता है विट पुनः शकार को विज्ञापित करता है कि वसन्तसेना गुप्तरीति से आपसे रमण करने आई है। वसन्तसेना के प्रतिवाद करने का कामान्ध शकार वसन्तसेना के पैरों पर गिरकर क्षमा याचना करता है। क्रुद्ध वसन्तसेना के द्वारा शकार के सिर पर पैर से प्रहार करने पर क्रोधित शकार उसे गाड़ी से उतरने को बाध्य करता है। वसन्तसेना के गाड़ी से उतर जाने पर शकार, विट तथा चेट से पृथक्–पृथक् प्रार्थना करता है कि वे वसन्तसेना को मार डालें। दोनों के मना करने पर शकार द्वारा पीटे जाने से चेट और एक बहाने से विट के चले जाने पर शकार वसन्तसेना से प्रणय निवेदन करता है। वसन्तसेना द्वारा अस्वीकार करने पर शकार उसका गला घोंट देता है। वसन्तसेना मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़ती है।

कुछ समय पश्चात् विट और चेट वापिस आते हैं तो देखते हैं कि एक वृक्ष के नीचे वसन्तसेना मरी पड़ी है। विट द्वारा पूछने पर शकार पहले तो मना करता है परन्तु अन्ततः इस बात को स्वीकार कर लेता है कि उसने वसन्तसेना को मार डाला है और बड़ा वीरतापूर्ण कार्य सम्पन्न किया है। वह विट को वसन्तसेना का मूर्च्छित शरीर दिखलाता है। विट बहुत दुःखी होता है और शकार को उस उज्जयिनी लक्ष्मी की हत्या करने के लिए भूरिशः धिक्कारता है। शकार विट को स्वर्ण इत्यादि का लालच देकर वसन्तसेना की हत्या का आरोप किसी अन्य पर प्रमाणित करवाना चाहता है। विट इसको स्पष्ट इन्कार कर देता है। इस पर शकार उस हत्या का आरोप उसी पर मढता है तथा राजा के सामने प्रस्तुत होने की धमकी देता है। विट शकार का साथ छोड़कर तथा उसे डरा धमका कर शर्विलक आदि से मिलने चला जाता है। शकार चेट को भी प्रलोभन देता है पर चेट भी उसके पास कृत्य का अनुमोदन नहीं करता। शकार चेट को घर भेज देता है। वह वसन्तसेना के शरीर को सूखे पत्तों से ढक कर छोड़ देता है और स्वयं चारुदत्त के विरुद्ध हत्या का अभियोग चलाने न्यायालय जाता है।

अंक के अन्तिम दृश्य में भिक्षु प्रवेश करता है। वह अपना चीवर फैलाने के लिए स्थान खोजता है। इतने में वसन्तसेना हाथ दिखलाती है। भिक्षु पत्ते हटा कर वसन्तसेना को पहचानता है। वसन्तसेना लता का सहारा लेकर उठ खड़ी होती है। भिक्षु वसन्तसेना को विश्राम कराने के लिए विहार ले जाता है।

नवम अंक

प्रस्तुत अंक में वसन्तसेना की हत्या के आरोप में चारुदत्त पर संस्थानाक – द्वारा अभियोग लगाये जाने का वर्णन हुआ हैं।

अंक के प्रारम्भ में न्यायालय का कर्मचारी शोधनक न्याय–मण्डप की सफाई करता दिखाई पड़ता है। इसी बीच शकार अपनी कामुक लम्पटता की विकत्थना करते हुए प्रवेश करता है, श्रेष्ठी, कायस्थ तथा न्यायाधीश मण्डप में आते हैं। न्यायाधीश शोधनक को आदेश देता है कि वह बाहर जाकर मालूम करें कि आज के विचार प्रार्थी कौन–कौन हैं। शोधनक के घोषणा करने पर सर्वप्रथम शकार अभियोग लिखाने आगे आता है। शोधनक उसे देखकर घबरा जाता है तथा न्यायाधीश को सूचना देता है न्यायाधीश व अन्य सदस्य भी प्रारम्भ में ही उसका आगमन अशुभ समझते हैं तथा शोधनक को शकार से यह कहने के लिए आदेश देते हैं कि उसके अभियोग पर आज विचार नहीं होगा। इस पर शकार क्रुद्ध हो जाता है तथा न्यायाधीश को राजा से दंडित कराने की धमकी देता है। ऐसी स्थिति में न्यायाधीश घबरा कर उसके अभियोग पर विचार करना स्वीकार कर लेता है।

शकार अधिकरण मण्डप में प्रवेश कर यह सूचना देता है कि पुष्पकरण्डक उद्यान में किसी ने धन के लोभ से वसन्तसेना को बाहुपाश–बलात्कार से मार डाला है। न्यायाधीश के यह पूछने पर कि उसे कैसे जान पड़ा कि धन के लिये उसकी हत्या की गई है, शकार उत्तर देता है – 'आभूषणविहीन होने से गले में हार सूत्रावली नहीं होने से और प्रत्येक स्थल का गहना उतरा होने से।'' इस पर यह जानने के लिये कि वसन्तसेना कहां व किसके साथ गई थी अधिकरणिक वसन्तसेना की माँ को बुलवाते हैं। वसन्तसेना की माँ आकर कहती है कि वह आर्य चारुदत्त के पास अपने यौवन का सुख प्राप्त करने गई है।

इस पर चारुदत्त को न्यायालय में बुलाया जाता है। चारुदत्त के प्रवेश करने पर न्यायालय न्यायाधीश उसे आदर–पूर्वक आसन दिलाता है और मन में सोचता है कि ऐसे भव्य स्वरूप वाला व्यक्ति ऐसे जघन्य कृत्य का अपराधी नहीं हो सकता। न्यायाधीश के यह प्रश्न करने पर कि क्या वसन्तसेना उसकी प्रेमिका है ? चारुदत्त सर्वप्रथम कुछ लज्जित सा अनुभव करता है तथा परोक्ष रीति से स्वीकार करते हुये उत्तर देता है कि ''इस विषय में केवल यौवन अपराधी हैं, चरित्र नहीं''। न्यायाधीश चारुदत्त को स्पष्ट रूपेण कहने को बाध्य करता है, ऐसी स्थिति में शकार को भी कुछ बोलने का अवसर मिलता है तथा वह चारुदत्त को हत्यारा आदि कहकर सम्बोधित करता है। न्यायाधीश के यहाँ पूछने पर कि अब वसन्तसेना कहाँ है ? चारुदत्त बताता है कि वह अपने घर गई है। परन्तु वह यह बतलाने में अपनी असमर्थता प्रकट करता है कि वह पैदल गई या गाड़ी में। शकार न्यायाधीश पर यह आरोप लगाता है कि वह चारुदत्त का पक्ष ले रहा है। इस पर न्यायाधीश उसकी यह कहते हुये भर्त्सना करता है कि चारुदत्त जैसे दानशील व्यक्ति पर उसने असत्य अभियोग लगाया है।

वसन्तसेना की माता भी यह स्वीकार करती है कि वह क्षण–भंगुर वैभव के हेतु वैसा गर्हित कार्य नहीं कर सकता। इतने में क्रोध भरा वीरक वहां आता है। वह चन्दनक के साथ हुये अपने झगड़े की सूचना देता है। वह यह भी कहता है कि चारुदत्त की गाड़ी में बैठकर वसन्तसेना पुष्पकरण्डक उद्यान जा रही थी। शकार के समर्थन में अब यह दूसरा प्रमाण मिल जाता है और न्यायाधीश बड़े खेद के साथ वीरक को आदेश देता है कि वह न्यायालय के द्वार पर अवस्थित घोड़े पर चढ़कर उस उद्यान की ओर देखे कि वहां कोई स्त्री मरी पड़ी है या नहीं। वीरक जाकर व पुनः प्रवेश करके वहां एक स्त्री के मृत शरीर के पड़े रहने की बात का समर्थन करता है। ऐसी स्थिति में न्यायाधीश स्वतः हतबुद्धि हो जाता है तथा वह चारुदत्त से अनुरोध करता है कि वह सत्य का उद्घाटन करें।

न्यायाधीश के ऐसे कहने पर चारुदत्त अपनी सफाई इस रूप में प्रस्तुत करता है कि ''जो मैं फूल चुनने के लिए प्रफुल्ल लता को भी नहीं झुकाता, तब मैं नीले केशवाली कामिनी की हत्या कैसे कर सकता हूं ? शकार पुनः न्यायाधीश पर पक्षपात का आरोप लगाता है तथा चारुदत्त को आसन से नीचे उतारने के लिए आग्रह करताह है। ऐसी स्थिति में न्यायाधीश चारुदत्त को आसन से नीचे उतरने का आदेश देता है। चारुदत्त जमीन पर बैठ जाता है अपनी पत्नी धूता तथा पुत्र रोहसेन को पुकारते हुए दुःख से विह्वल हो उठता है।

इसी बीच दुर्दैव से विदूषक वसन्तसेना के आभरण हेतु वहां आ टपकता है। शकार पर वह क्रोधित हो जाता है तथा परस्पर दोनों में मारपीट होती है। मारपीट में विदूषक की बगल से वसन्तसेना के आभरण पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं। शकार को अब अभियोग के समर्थन में तीसरा और प्रमाण मिल गया है तथा न्यायाधीश की मानसिक स्थिति और भी डांवाडोल हो जाती है। ऐसी स्थिति में वह निर्णय नहीं कर पाता कि वह क्या करे। चारुदत्त स्वयं स्वीकार करता है कि आभरण वसन्तसेना के हैं। परन्तु यह बतलाने में असमर्थता व्यक्त करता है कि वे वसन्तसेना से विमुक्त कैसे हुये। अब न्यायाधीश को यह निर्णय लेना पड़ता है कि चारुदत्त वस्तुतः अपराधी है। वसन्तसेना की माता निर्णय का विरोध करती रोती हुई न्याय–मण्डप से बाहर निकल जाती है।

अन्ततः वे अपना निर्णय लिख कर राजा पालक के पास भेजते हैं, क्योंकि मनु के अनुसार पापी ब्राह्मण भी मारा नहीं जा सकता। राजा चारुदत्त को प्राण–दण्ड की आज्ञा देता है। चारुदत्त पालक की इस आज्ञा का भर्त्सना करता हुआ, मैत्रेय से अनुरोध करता है कि वह घर जाकर उसकी माता को उसका अभिवादन सुना दे और रोहसेन को भी मिला दे। अधिकरणिक चाण्डालों को आदेश देने के लिए कह कर चले जाते है। न्यायाधीश की आज्ञा से चाण्डाल चारुदत्त को हटा लेते हैं।

चारुदत्त पर अभियोग लगाये जाने के कारण प्रस्तुत अंक की अभिधा ''व्यवहार'' पड़ी है। ''व्यवहार का अर्थ है अभियोग या मुकदमा''।

दशम अंक

अंक के प्रारम्भ में चारुदत्त को वध स्थान ले जाये हुये चाण्डाल दिखाई देते हैं। चारुदत्त के सारे शरीर पर लाल चन्दन से छापे मारे गये हैं तथा तिल चावल एवं कुंकुम का लेप लगा है जिससे वह वध्यपशु तुल्य लगता है। श्मशान में ले जाते हुये उसे सम्पूर्ण उज्जयिनी नगरी के लोग, विशेषतः स्त्रियां देख–देख कर रोती हैं। विदूषक चारुदत्त के पुत्र रोहसेन को लेकर वहां आता है। विदूषक और रोहसेन चाण्डालों से चारुदत्त को छोड़ने की प्रार्थना करते हैं तथा चारुदत्त के स्थान पर अपना वध करने का अनुरोध करते हैं। चाण्डाल बालक के पितृ–प्रेम की सराहना करते हैं। थोड़ी देर बाद वे दूसरे घोषणा–स्थल पर पहुंचते और घोषणा दुहराते हैं। घोषणा को सुन कर शकार के महल में बन्धा स्थावरक चिल्ला कर कहा है कि वसन्तसेना को चारुदत्त ने नहीं शकार ने मारा है। परन्तु उसकी बात किसी के कान तक नहीं पहुंचती। तब वह एक गवाक्ष से कूद कर चाण्डालों के पास आता है और पुनः वही बात कहता है। इसी समय शकार वहां आकर उसके कथन को असत्य बतलाता है तथा उस पर स्वर्ण को चुराने का आरोप लगाता है। चाण्डाल शकार की बात को सच मान लेते हैं। शकार स्थावरक को मार कर भगा देता है और वह चाण्डालों से चारुदत्त को शीघ्र मारने के लिए बार–बार कहता है।

तीसरे घोषणा स्थल पर पहुंच कर शकार के निर्देश पर चाण्डाल पीटने का भय दिखा कर चारुदत्त से यह घोषणा कराते हैं – ''हे नगरवासियों ! मैने ही वसन्तसेना को मारा है।'' एक चाण्डाल कहता है कि ''वध्य पुरुष को सहसा मारना ठीक नहीं क्योंकि अनेक दशाओं में उनके प्राण बच जाते हैं और इन अवस्थाओं में एक अवस्था राज्य परिवर्तन की भी होती है जब सभी बन्दी मुक्त कर दिये जाते हैं।'' राज्य परिवर्तन की बात सुनकर शकार घबराता है तथा चाण्डालों से चारुदत्त को शीघ्र मारने के लिए कहता है।

अंक के द्वितीय दृश्य में भिक्षु और वसन्तसेना चारुदत्त के घर जाते दिखाई देते हैं। मार्ग में भीड़ देखकर वसन्तसेना भिक्षु को पता लगाने के लिये कहती है। इतने में चाण्डाल पुनः चारुदत्त के अपराध और उसे मिले दण्ड की घोषणा करते हैं। भिक्षु सुन कर घबराता है तथा सम्पूर्ण वृत्तान्त को वसन्तसेना से कहता है। दोनों वध स्थान की और अग्रसर होते हैं। इसी बीच चारुदत्त को जमीन पर लिटाकर चाण्डालों ने उसके वक्ष पर तलवार से प्रहार

किया है, परन्तु तलवार उसके हाथ से छूट कर अलग गिर जाती है। तब चाण्डाल चारुदत्त को शूल पर चढ़ाना चाहते हैं। इसी समय भिक्षु और वसन्तसेना वहां पहुंचते हैं। वसन्तसेना चारुदत्त के वक्ष पर गिर पड़ती है और भिक्षु उनके चरणों पर गिर पड़ता है। वसन्तसेना को जीवित देख चाण्डाल चारुदत्त को छोड़ कर राजा को समाचार देने चले जाते हैं। वसन्तसेना को देखकर शकार भी वहां से भाग जाता है। चारुदत्त वसन्तसेना और भिक्षु को पहचान कर आनन्दमग्न हो जाता है।

अंक के अग्रिम दृश्य को शर्विलक का प्रवेश होता है। वह चारुदत्त को आर्यक के द्वारा राजा पालक के मारे जाने का समाचार देता है। चारुदत्त इस समाचार का स्वागत करता है। शर्विलक उसे यह भी सूचना देता है कि उज्जयिनी में सत्ता प्राप्त करते ही आर्यक ने कुशावली नगरी का राज्य उसे सौंप दिया है। इसी समय कुछ लोग शकार को पकड़ कर वहां लाते हैं। शकार चारुदत्त के चरणों में गिर कर प्राण– रक्षा की भीख मांगता है। चारुदत्त उसे अभयदान देता हैं।

अंक का अन्तिम दृश्य धूता के चितारोहण तथा वसन्तसेना के साथ हुये उसके मिलन से सम्बन्ध रखता है। उक्त प्रसंग अधिकांश विद्वान् प्रक्षिप्त बतलाते हैं। शर्विलक इस आनन्दमय अवसर पर वसन्तसेना को आर्यक के नाम पर वधू रूप में चारुदत्त को सौंपता है तथा उसका घूंघट खींच देता है। वसन्तसेना इस अनुग्रह से अपने को कृतार्थ समझती है। चारुदत्त की इच्छानुसार भिक्षु संवाहक को पृथ्वी पर सब विहारों का कुलपति बना दिया जाता है। दोनों चाण्डाल सब चाण्डालों के अधिपति बना दिये जाते हैं। चन्दनक को पृथिवी दण्डपालक का पद दिया जाता है। शकार का भी अधिकार अस्थायी रूप से पूर्ववत् बना रहने दिया जाता है। इसी सानन्द वातावरण में नाटक भरत वाक्य के साथ समाप्त हो जाता है।

2.6 मुख्य शब्दावली

- **महाकपाटः** – विशाल किवाड़
- **नरतिह्र्दयं** – राजा के ह्रदय को
- **गोपालदारक** – गोपाल का पुत्र
- **खुटितः** – बन्धन छोड़कर भगाया गया
- **गुणारविन्दम्** – गुणों में कमल के समान
- **भणितम्** – कहा गया
- **शीर्षेण** – शिर से
- **दोषकरण्डिकाम्** – दोषों की पिटारी
- **अप्रीतिः** – मित्रता का न होना
- **पतितसाधुजनानुकम्पिन्** – आपत्ति में गिरे हुए सज्जनों पर कृपा करने वाले

2.7 अपनी प्रगति जांचिए के उत्तर

1 मिट्टी की गाड़ी

2 यान–परिवर्तन

3 रोहसेन

4 उपसंहार

5 विदूषक, चारुदत्त का मित्र

2.8 अभ्यास हेतु प्रश्न

1 कवि शूद्रक की भाषा–शैली का विश्लेषण कीजिए।

2 मृच्छकटिक की नाट्य–कला की दृष्टि से समीक्षा कीजिए।

3 मृच्छकटिक के नायक चारुदत्त का चरित्र–चित्रण कीजिए।

4 वसन्तसेना के चरित्र पर प्रकाश डालिए।

5 मृच्छकटिक के छठे अंक से दसवें अंक तक की कथावस्तु का विवेचन कीजिए।